देशी शब्दकोश

वाचना-प्रमुख
आचार्य तुलसी

प्रधान सम्पादक
युवाचार्य महाप्रज्ञ

संपादक
मुनि दुलहराज

सहयोगी
साध्वी अशोकश्री
साध्वी सिद्धप्रज्ञा
साध्वी विमलप्रज्ञा
समणी कुसुमप्रज्ञा

जैन विश्व भारती
लाडनूं (राजस्थान)

प्रकाशक :
जैन विश्व भारती
लाडनूं—३४१ ३०६

प्रबन्ध-सम्पादक :
श्रीचन्द रामपुरिया

प्रकाशन वर्ष :
विक्रम सम्वत् २०४५
मार्च १९८८

पृष्ठांक ५७०+६८

मूल्य १००-०० रुपये
१२ डालर (U.S.A)

DEŚĪ ŚABDAKOŚA

Vācanā Pramukha
ĀCĀRYA TULSĪ

Chief Editor
YUVĀCĀRYA MAHĀPRAJÑA

Editor
Muni Dulaharāj

Assistants

Sādhvī Aśokaśrī
Sādhvī Siddhaprajñā
Sādhvī Vimalprajñā
Samaṇī Kusumprajñā

JAIN VISHVA BHARATI
LADNUN (RAJASTHAN)

Publisher :
JAIN VISHVA BHARATI
Ladnun—341 306

Managing Editor :
Shrichand Rampuria,

Year of Publication :
Vikram Samvat 2045
March 1988

Pages : **570+68**

Price : **Rs. 100**
$ 12

आशीर्वचन

शब्दकोश का निर्माण जितना कठिन है, उसका उपयोग उतना ही महत्त्वपूर्ण है। संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेजी, हिन्दी, राजस्थानी आदि सभी भाषाओं के शब्दकोश उपलब्ध हैं। आचार्य हेमचन्द्र ने संस्कृत शब्दकोश अभिधान-चिंतामणि के साथ देशी नाममाला की भी रचना की। इसके अतिरिक्त देशी शब्दों का कोई स्वतंत्र कोश प्राप्त नहीं है। आगम और उसके व्याख्या साहित्य में प्राकृत के साथ देशी शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग मिलता है। उस साहित्य के देशी शब्दों का चयन करना और उनके प्रामाणिक अर्थ का निर्णय करना काफी दुरूह काम था। पर हमारे आगम सम्पादन कार्य में संलग्न साधु-साध्वियां कठिन काम करने के अभ्यस्त हो चुके हैं। इस काम के लिए हमने विशेष रूप से साध्वियों को निर्देश दिया। लगभग पांच वर्ष के बाद उनके श्रम ने एक रूप लिया और 'देशी शब्दकोश' सुसम्पादित होकर सामने आ गया। इस कार्य में प्रवृत्त साध्वी अशोकश्री, विमलप्रज्ञा, और सिद्धप्रज्ञा तथा समणी कुसुमप्रज्ञा के श्रम को संवारने में मुनि दुलहराज ने पूरा समय लगाया। वह इस काम के साथ नहीं जुड़ता तो संभव है इसकी निष्पत्ति में कुछ और अवरोध आ जाता। मुझे प्रसन्नता है कि हमारे विनीत साधु साध्वियां पूरे मनोयोग के साथ साहित्य-सेवा अथवा धर्म शासन की सेवा में संलग्न हैं। उनकी कार्यजाशक्ति निरन्तर विकसित होती रहे, इस शुभाशंसा के साथ मैं इस ग्रन्थ की समीक्षा का काम विद्वानों को सौंपता हूं।

१६ फरवरी, १९८८ —आचार्य तुलसी
भिवानी (हरियाणा)

पुरोवाक्

भगवान महावीर ने अधमागधी प्राकृत मे प्रवचन किया था। जनता सरलता से उनकी बात समझ सके—यही प्रयोजन था। जनता के लिए जनता की भाषा मे बोलना एक नया काम था। उस समय के अधिकाश धर्माचाय पडितो की भाषा म ही बोलते और लिखते थे। उनकी बात बडे लोगों तक पहुच पाती थी। पाद विहार और जनता की भाषा म प्रवचन—इन दोनो प्रवत्तियो के कारण महावीर जनता के बन गए थे। उनके शिष्य भारत के अनेक प्रान्तो म विहार करते थे और अनेक प्रान्तो के मुमुक्षु उनके शिष्य बनते थे। आगम साहित्य मे एक अथबोध के लिए अनेक शब्दो एव धातु-पदो का प्रयोग मिलता है। व्याख्याकारो ने उसका कारण बताया है कि अनेक देशो के शिष्यो को समझाने के लिए अनेक शब्दो और क्रिया-पदो का प्रयोग किया गया।

सस्कृत की एक सीमा बन चुकी थी। उसमे विभिन्न देशो में प्रचलित शब्दो के समावेश के लिए अवकाश नही रहा। प्राकृत जन-भाषा थी। उसका लचीलापन बना रहा। वह किसी घेरे म नही बधी, इसलिए उसका सम्पक देशी शब्दो से बना रहा। देशी शब्द व्याकरण से बधे हुए नही हैं। उनके लिए 'नेप सस्कृतवत'—इस सूत्र की कोई अपेक्षा नही है। उनके लिए 'प्रकृति सस्कृतम' इस विधि की भी अपेक्षा नही है। त्रिविक्रम देव ने प्राकृत के तीन प्रकार बताए है—तत्सम, तदभव और देश्य। सस्कृत के समान शब्द 'तत्सम' और सस्कृत की प्रवत्ति स सिद्ध शब्द 'तदभव' कहलाते हैं। देश्य और आर्ष शब्द इन दोनो से भिन्न है—

> प्राकृत तत्सम देश्य, तदभव चेत्यम्स्त्रिधा।
> तत्सम सस्कृतसम नेय सस्कृतलक्ष्मणा ॥
> देश्यमार्ष च रूढत्वात स्वतत्रत्वाच्च भूयसा।
> लक्ष्म नापेक्षते तस्य सप्रदायो हि बोधक ॥
> प्रकृते सस्कृतात साध्यमानात सिद्धाच्च यद भवेत्।
> प्राकृतस्यास्य लक्ष्यानुरोधि लक्ष्म प्रचक्ष्महे ॥[1]

आचाय हेमचद्र न देशी शब्द की बहुत सुदर परिभाषा की है। यह परिभाषा बहुत साथक और व्यापक है—

1 श्रीत्रिविक्रमदेव, प्राकृतशब्दानुशासनम, श्लोक ६-८।

जे लक्खणे ण सिद्धा ण पसिद्धा सक्कयाहिहाणेसु ।
ण य गउणलक्खणासत्तिसंभवा ते इह णिबद्धा ॥
देस विसेमपसिद्धीइ भण्णमाणा अणंतया हुंति ।
तम्हा अणाइपाइअपयट्टभासाविसेसओ देसी ॥[1]

प्राकृत के अध्ययन के लिए देशी शब्दो का अध्ययन बहुत आवश्यक है। उनके बिना प्राकृत भाषा संस्कृत आश्रित बन जाती है। इसी आधार पर कुछ विद्वानो ने प्राकृत को संस्कृत से अर्वाचीन बतलाया। प्राकृत का विशाल स्वरूप देशी शब्दो का भण्डार है। उनका सम्बन्ध प्राचीनतम जनभाषा से है। प्रस्तुत देशी शब्दकोश मे कुछ शब्द कन्नड और तमिल के भी हैं, मराठी आदि भाषाओ के तो हैं ही। उत्तर और दक्षिण की सभी भाषाओ के शब्द आगम साहित्य मे मिलते हैं। कुछ शब्द यूनान आदि विदेशी भाषाओ के भी सदृश हैं।

प्रस्तुत देशी शब्दकोश मे आगम, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि और टीका आदि मे प्रयुक्त देशी शब्दो का संकलन किया गया है। आगम के व्याख्याकारो ने स्थान-स्थान पर देशी शब्दो का प्रयोग किया है और वे किस अर्थ मे देशी है, इसका उल्लेख भिन्न-भिन्न शब्दावलियो मे किया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार है—

अतिराउल इति देशीपदं स्वामीकुलमित्यर्थः।
अविहाड—देशीभाषया बालक ।
आइंति (अव्यय) देशभाषायाम् ।
आरनाल—कंजियं देसीभासाए आरनाल भण्णति ।
उअपोते—देशीपदत्वात् आकीर्णे ।
उंड—देशीवयणतो उंडं मुहं ।
उग्गह—इति जोणिद्दुवारस्स सामइकी संज्ञा ।
उग्घाडपोरिसि—समयभाषया पादोनप्रहरे ।
अमाघाय—अमारिरूढिशब्दत्वात् ।

प्रस्तुत ग्रन्थ मे आचार्य हेमचन्द्र की देशी नाममाला का भी अविकल सकलन किया गया है। अगविज्जा आदि अन्य स्रोतो से भी देशी शब्दो का सग्रहण किया है। इसके मूल मे लगभग दस हजार से भी अधिक शब्द सगृहीत है। आगम सपादन के साथ शब्दकोश की जो योजना है, उसके अन्तर्गत तीन कोश पहले प्रकाशित हो चुके है—

१ आगम शब्दकोश
२ एकार्थक कोश
३ निरुक्त कोश

---

१ देशी नाममाला, आचार्य हेमचन्द्र, १।३,४ ।

यह देशी शब्दकोश चतुर्थ कोश है। यह आगम तथा प्राकृत भाषा के अध्ययन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण और उपयोगी है। इसमें आगमकारों के व्यापक दृष्टिकोण संग्राही मनोवृत्ति और अर्थाभिव्यक्ति के लिए सक्षम शब्दों के चयन की प्रवृत्ति का निदर्शन मिलता है। मुनि दुलहराजजी ने इस कार्य में अत्यधिक निष्ठापूर्ण श्रम किया है। इस कार्य में साध्वी अशोकश्री, साध्वी विमलप्रज्ञा और साध्वी सिद्धप्रज्ञा तथा समणी कुसुमप्रज्ञा ने पूर्ण योगदान किया है। श्रद्धासिक्त भाव से किया गया यह श्रम दूसरों के लिए अनुसरणीय बनेगा।

वृहद् आगम शब्दकोश का विशालकाय आचार्यश्री तुलसी के वाचना प्रमुखत्व में हो रहा है। उनके मार्ग दर्शन में अनेक साधु-साध्वियां इस कार्य में संलग्न हैं। देशी शब्दकोश उसी कार्य का एक अंग है। मैं आचार्यवर के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित कर उनके ऋण से उऋण होने का प्रयत्न नहीं कर रहा हूं। यह प्रयत्न उनसे शक्ति-संबल पाने का प्रयत्न है।

प्रस्तुत ग्रंथ में जिन साधु साध्वियों का योग है, उन सबको साधुवाद देता हूं और मंगलकामना करता हूं कि उनका श्रम इस कार्य की प्रगति में निरंतर नियोजित रहे। एक लक्ष्य के लिए समान गति से चलने वालों की सम प्रवृत्ति में योगदान की परम्परा का उल्लेख व्यवहारपूर्ति मात्र है। वास्तव में यह हम सबका पवित्र कर्तव्य है और उसी का हम सबने पालन किया है।

१७ फरवरी १९८८ —युवाचार्य महाप्रज्ञ
भिवानी (हरियाणा)



भूमिका

देशी शब्दों का प्रयोग वैदिक युग की भाषा से होता आ रहा है। ग्रामीण या जनभाषा का प्रभाव वदिक भाषा पर परिलक्षित होता है। ब्राह्मणकाल की आयभाषा के तीन रूप देखे जा सकते हैं—उदीच्या, मध्यदेशीया एव प्राच्या। उदीच्या परिनिष्ठित भाषा थी। प्राच्या भाषा पूव में रहने वाले ववर असुरवग के लोगो की भाषा थी। मध्यदेशीया भाषा का स्वरूप उदीच्या और प्राच्या के बीचोबीच था। प्राचीन आयभाषा के इन तीनो रूपो के उदाहरण स्वरूप श्रीर, श्रील एव श्लील— ये तीन शब्द लिए जा सकते हैं। ये तीनो शब्द क्रमश उदीच्या, मध्यदशीया एव प्राच्या आयभाषा के माने जा सकते हैं।

प्राकृत भाषाओ के अन्तर्गत पालि भाषा का भी एक विशिष्ट स्थान है। यह अवश्य एक बालचाल की भाषा थी। इसे पूणरूपेण अकृत्रिम प्राकृत कहा जा सकता है, यद्यपि श्रीलका एव बर्मा जसे देशो म इसम कुछ कृत्रिमता भी आ गई थी, जो बर्मा मे अपने प्रकर्ष को पहुच गई थी। इसी प्रकार 'आयारो' जसे जन आगमा मे हम अकृत्रिम प्राकृतभाषा उपलब्ध होती है जबकि उत्तरवर्ती प्राकृतसाहित्य म कृत्रिमता भी दिखाई पडती है।

सस्कृत म शब्दों के दो विभाग किए गए हैं—व्युत्पन्न एव अव्युत्पन्न। व्याकरण के नियमो स सिद्ध होने वाले शब्द व्युत्पन्न कहलाते हैं। जिनकी सिद्धि व्याकरण सम्मत न होकर लोक-परम्परा या व्यवहार स होती है, वे अव्युत्पन्न शब्द कहलाते हैं।

प्राकृत वयाकरणो द्वारा प्राकृत शब्द तीन भागो में बाँटे गए हैं— तत्सम, तदभव एवं देश्य या देशी। इनम देश्य शब्द व्युत्पत्ति सिद्ध नहीं होते।

देशी शब्दो के निर्धारण म आचार्य हेमचन्द्र ने कुछ कसौटियाँ प्रस्तुत की हैं। त्रिविक्रम न देशी शब्दो का छह विभागो म वर्गीकरण किया है। आधुनिक भाषा-शास्त्रियो की दृष्टि में ये कसौटियाँ एव वर्गीकरण सही नहीं हैं। इन विद्वानो ने देशीशब्दो के निर्धारणार्थ काफी ऊहापोह किया है। इन विचार विमर्शों में आज बीयमन का मतव्य काफी महत्त्वपूण प्रतीत होता है। वे देशी शब्दों का सबध आर्यों द्वारा वस्तुत काम के पहले ही बोली जान वाली जनभाषा से बताते हैं। इसके अतिरिक्त वे देशी शब्दों का संबध

प्रातीय बोलियो से भी बताते है। वे देशी शब्दो को आर्यो और आर्येतर जातियो के आपसी आदान-प्रदान से विकसित शब्द मानते है। उनका यह सुदृढ मत है कि देशी शब्दो मे अधिकतर शब्द आर्यों की ही प्रारभिक बोलियो से लिए गए है। इनमे कुछ शब्द निश्चित रूप से द्रविड भाषाओ के है। द्रविड भाषाओ के शब्द किस रूप मे देश की विभिन्न आधुनिक भाषाओ मे उपलब्ध होते है एव आर्य भाषा के शब्दो मे कैसे परिवर्तन होते हैं इसके दो दृष्टात हम यहा प्रस्तुत करते है—

अड् धातु (बाधा देना) से उत्पन्न शब्द

तमिल—अटड्
कन्नड—अड, अड्ड
तुलु—अटक, अडक
कुड—अड
ब्राहूई—अड्
लह्न्दा—अडण्, अडक्
पजाबी—अड्ना, अड्कणा
कुमौनी—अड्णो
हिन्दी—अड्ना
गुजराती—अड्उ, अड्क्वु
मराठी—अड्णें; अडक्णे

प्सा धातु (खाना, भूखा रहना) से उत्पन्न शब्द

शतपथ-ब्राह्मण—प्सात (मुक्त)
पालि—छात, छातक (भूखा), छातता (भूख)
प्राकृत—छाय (भूखा)
सिहली—सय, सा, साय (भूख, सूखा)।[1]

इस प्रकार के अनेक शब्द उद्धृत किए जा सकते हैं जिनके आधार पर हम यह कह सकते हैं कि प्राचीन, मध्यकालीन एव आधुनिक आर्यभाषाओं मे देशी शब्द विभिन्न रूपो मे प्रवेश पा गए, जिनका निर्धारण श्रम एवं गवेषणा साध्य है।

प्रस्तुत कोश की सपादन मडली को हम हार्दिक धन्यवाद देते हैं जिन्होंने अथाह परिश्रम पूर्वक इस विषय पर उपलब्ध सारी सामग्री का विद्वत्तापूर्ण उपयोग किया है तथा आचार्य हेमचन्द्र विरचित प्राकृत व्याकरण

१. देखें—आर एन. टर्नर : ए कोम्पैरेटिव डिक्शनरी ऑफ द इण्डो-आर्यन लैंग्वेजिज।

एव देशीनाममाला और इसके अतिरिक्त अन्य प्राकृत व्याकरण एव कोशग्रथों का यथेष्ट अनुशीलन किया है। समग्र जैन आगम तथा उन पर लिखे हुए व्याख्या ग्रथ —निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, टीकाओ का सूक्ष्म एव व्यापक परिशीलन द्वारा प्राप्त देशीशब्द भी इस कोष मे सगृहीत हैं। 'अगविज्जा' जैसे पारिभाषिक शब्दो से परिपूर्ण ग्रथ से भी देशी शब्दो का इसमे चयन हुआ है। स्थान स्थान पर व्याख्या-ग्रथो मे 'देशीपदत्वात्' 'देशीवचनत्वात्' 'देशीपद'— ऐसे उल्लेख मिलते हैं, जिनका अविकल उल्लेख इस कोष मे किया गया है। यह इसकी एक नवीन विशेषता है। आधुनिक विद्वानो द्वारा वैज्ञानिक ढग से सम्पादित प्राकृत एव अपभ्रश साहित्य मे प्राप्त देशीशब्दो का सकलन भी ध्यानपूर्वक किया गया है। देशी शब्दो के सग्रह का ऐसा सर्वाङ्गीण उपक्रम पहली बार ही हुआ है। एक ही कोश मे इतनी सामग्री का उपलब्ध होना भविष्य के शोधार्थियो के लिए देशी शब्दो पर गवेषणा के क्षेत्र मे एक ठोस आधार प्रदान करेगा। हमारे सघ के प्रबुद्ध साधु-साध्वियो एव समणियो के सम्मिलित प्रयास से ही यह महान कार्य सम्पन्न हो सका है। सम्मिलित प्रयत्न के बिना ऐसे ग्रथो का निर्माण होना सभव नही है।

विविध कोश निर्माण की मौलिक कल्पना परमाराध्य आचार्यश्री एवं युवाचार्यश्री की प्रतिभा की देन है। फलस्वरूप तीन महत्त्वपूर्ण कोश हमारे सामने आ चुके हैं। उसी क्रम मे यह देशी शब्दकोश प्रस्तुत है। यह धारा अविच्छिन्न है, एव भविष्य मे कई और अधिक उपयोगी कोश विद्वानो के समक्ष आएंगे। परमाराध्य आचार्यश्री की आध्यात्मिक प्रेरणा से कई दुःसाध्य कार्य आसानी से सम्पन्न हो जाते हैं। उनकी आध्यात्मिक प्रेरणा का प्रभाव हम पुन पुन अपने जीवन मे अनुभव करते हैं, जिसका शब्दो मे वर्णन करना सभव नही है। हमारे सघ में जो साहित्यिक एव वैचारिक क्रांति आई है उसका उद्भव-स्थान परमाराध्य आचार्यश्री की आध्यात्मिकता ही है।

प्रस्तुत कोश की सर्वांगीण समायोजना मे मुनि दुलहराजजी का अविकल योग रहा है। मुनिश्री परम श्रद्धेय युवाचार्यश्री की साहित्यिक एव दार्शनिक रचनाओ के सम्पादन मे सतत सहयोग प्रदान करते रहे हैं। युवाचार्यश्री के सुदीर्घ सान्निध्य के फलस्वरूप मुनिश्री ने जो दक्षता प्राप्त की है उसका प्रतिफलन प्रस्तुत कोश मे दृष्टिगोचर होता है।

मूल ग्रथो से देशी शब्दो के चयन का कार्य साध्वी अशोकश्रीजी साध्वी विमलप्रज्ञाजी साध्वी सिद्धप्रज्ञाजी एव साध्वी निर्वाणश्रीजी तथा समणी कुसुमप्रज्ञाजी ने दक्षतापूर्वक सम्पन्न किया। यह गुरुभार-वहन उनकी विद्वत्ता एव स्थिर अध्यवसाय का ही सुपरिणाम है।

इस कोश में दो परिशिष्ट सलग्न किए गए हैं। पहले परिशिष्ट में आगम साहित्य के अतिरिक्त अनेक प्राकृत ग्रंथो तथा त्रिविक्रम के प्राकृत

शब्दानुशासन से देशीशब्द चुने गए हैं। दूसरे परिशिष्ट में देशीधातुएं तथा धात्वादेश संकलित हैं।

प्राकृत एवं अपभ्रंश के अध्ययन-अध्यापन का क्षेत्र उत्तरोत्तर प्रसार लाभ कर रहा है। कई विश्वविद्यालयों एवं स्वतन्त्र शोध-संस्थानों में शोधछात्र एवं अध्यापकगण इस क्षेत्र को समृद्ध बना रहे हैं। हमें पूर्ण विश्वास है, प्राकृत एवं जैन शास्त्रों के अध्येताओं के लिए यह कोश लाभप्रद होगा एवं और भी अधिक शोधपूर्ण ऐसे कोशों के निर्माण की दिशा में उन्हें प्रेरित करेगा।

लाडनूं (राजस्थान)
९-३-८८

नथमल टाटिया
निदेशक, अनेकान्त शोधपीठ,
जैन विश्व भारती

संपादकीय

भाषा

भाषा विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम है। संसार के कोने-कोने में निवास करने वाले मनुष्य किसी न किसी भाषा के माध्यम से अपने विचारों का आदान प्रदान करते हैं। भौगोलिक कारणों से मनुष्यों की भांति भाषा के भी अनेक भेद पाए जाते हैं। महाभारत में इसका स्पष्ट उल्लेख है।[1] विद्वानों के मत से वर्तमान में १००० से अधिक जीवित भाषाएं प्रचलित हैं। इस विषय में सैकड़ों पुस्तकें भी प्रकाश में आ चुकी हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय आर्यभाषाओं को तीन कालों में विभक्त किया जा सकता है—

१ प्राचीन भारतीय आर्यभाषा काल—इसमें वैदिक एवं लौकिक संस्कृत आती है।

२ मध्य भारतीय आर्यभाषा काल—इसमें पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषा का समावेश होता है।

३ आधुनिक भारतीय आर्यभाषा काल—इसमें हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगला, असमिया, तेलगु, कन्नड़, तमिल आदि भाषाएं आती हैं।

प्राकृत—

प्रकृति शब्द के दो अर्थ हैं—स्वभाव और जनसाधारण। इन अर्थों के आधार पर प्राकृत शब्द के भी दो अर्थ समझे जा सकते हैं—

१ जो प्रकृति/स्वभाव से ही सिद्ध है वह प्राकृत है।

२ जो प्रकृति/साधारण लोगों की भाषा है वह प्राकृत है।

महाकवि वाक्पतिराज का अभिमत है कि जैसे पानी समुद्र में प्रवेश करता है और समुद्र से ही वाष्प के रूप में बाहर निकलता है। ठीक वैसे ही सब भाषाएं प्राकृत में प्रवेश करती हैं और इसी प्राकृत से सब भाषाएं निकलती हैं।[2] इससे स्पष्ट है कि प्राकृत के आधार पर ही संस्कृत आदि का

---

१ महाभारत, शल्यपर्व ४४।९७,९८

नानाचर्मभिराच्छन्ना, नानाभाषाश्च भारत।

कुशला देशभाषासु जल्पन्तोऽन्योन्यमीश्वराः॥

२ गउडवहो ९३ सयलाओ इमं वाया विसंति एत्तो य णेंति वायाओ।

एंति समुद्दं चिय णेंति सायराओ च्चिय जलाइं॥

विकास हुआ है।

प्राकृत भाषा के भेदो के विषय मे विद्वानो के विभिन्न मत मिलते हैं। भरत ने अपने नाट्यशास्त्र मे प्राकृत की सात भाषाओ का उल्लेख किया है—

१ मागधी
२ अवन्तिजा
३. प्राच्या
४ शौरसेनी
५ अर्धमागधी
६ वाह्लीकी
७. दाक्षिणात्या[1]

सस्कृत नाटको मे विभिन्न प्राकृत भाषा की बोलिया मिलती हैं। प्रसिद्ध वैयाकरण वररुचि ने महाराष्ट्री, पैशाची, मागधी और शौरसेनी—इन चार भाषाओ को प्राकृत के अन्तर्गत माना है।

हेमचन्द्र ने इन चारो के अतिरिक्त चूलिका पैशाची, आर्ष, अर्धमागधी और अपभ्रंश का उल्लेख भी किया है। त्रिविक्रम, लक्ष्मीधर, सिंहराज, नरसिंह आदि वैयाकरणो ने हेमचन्द्र का अनुसरण किया है।

प्राकृत भाषा के दस भेद भी मिलते हैं—

१ पालि
२ पैशाची
३ चूलिका पैशाची
४ अर्ध मागधी
५. जैन महाराष्ट्री
६ अशोकलिपि
७ शौरसेनी
८ मागधी
९ महाराष्ट्री
१०. अपभ्रंश

मार्कण्डेय ने प्राकृत की सोलह भाषाओ का उल्लेख किया है।

प्राकृत मे तीन प्रकार के शब्दो का समावेश है—१ तत्सम २. तद्‌भव ३. देशी।[2]

सस्कृत-निष्ठ शब्द तत्सम है। ये बिना किसी रूप परिवर्तन के प्राकृत मे प्रयुक्त है। जैसे—जल, कमल, देव आदि। सस्कृतसम[3], तत्तुल्य[4] और समान[5] शब्द भी तत्सम के वाचक हैं।

संस्कृत के जो शब्द वर्णागम, वर्णविकार या ध्वनि-परिवर्तन से अपना स्वरूप बदल लेते हैं, वे तद्‌भव हैं। जैसे—कार्य—कज्ज, ऋषभ—उसभ,

१. नाट्यशास्त्र १७।४८ : मागध्यवन्तिजा प्राच्या, शौरसेन्यर्धमागधी।
वाह्लीका दाक्षिणात्याश्च सप्त भाषा. प्रकीर्तिताः॥
२ नाट्यशास्त्र १७।३ : त्रिविधं तच्च विज्ञेयं नाट्ययोगे समासतः।
समानशब्दं विभ्रष्टं देशागतमथापि च॥
३. प्राकृतलक्षण १।१।
४ वाग्भटालंकार २।२।
५ नाट्यशास्त्र १७।३।

वर्धमान–वड्ढमाण आदि। इसके लिए आचार्य हेमचन्द्र ने संस्कृतयोनि[1] वाग्भट ने तज्ज[2] तथा भरत ने विभ्रष्ट[3] शब्द का प्रयोग किया है।

देशी शब्द सामान्यतया ग्राम्य या प्रान्तीय अर्थ का वाचक है। निरुक्तकार यास्क[4] तथा पाणिनि[5] ने देशी शब्द का प्रयोग प्रान्त अर्थ मे किया है।

वात्स्यायन ने कामसूत्र विशाखदत्त ने मुद्राराक्षस बाण ने कादम्बरी तथा धनञ्जय ने दशरूपक में नाना देशों में बोली जाने वाली भाषाओं को देशी भाषा कहा है। कामसूत्र महाभारत नाट्यशास्त्र आदि ग्रंथों में देशभाषा शब्द में देशी भाषा का अर्थ ग्रहण किया गया है। वैयाकरण चण्ड ने देशीभाषा के अर्थ में देशीप्रसिद्ध, भरत ने देशीमत तथा देशागत शब्द का प्रयोग किया है।

अनुयोगद्वार में शब्दों को पांच भागों में विभक्त किया गया है। उनमें नपातिक शब्दों को देशी के अन्तर्गत माना जा सकता है।[6]

संस्कृत में तीन प्रकार की शब्द सम्पदा है –रूढ, यौगिक और मिश्र। इनमें रूढ शब्द देशी के अन्तर्गत आते हैं।

कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्र ने देशीनाममाला में देशी शब्द की परिभाषित करते हुए लिखा है—जो शब्द व्याकरण ग्रंथों में प्रकृति प्रत्यय द्वारा सिद्ध नहीं हैं व्याकरण में सिद्ध होने पर भी संस्कृत कोशों में प्रसिद्ध नहीं हैं तथा जो शब्द लक्षणा आदि शब्द-शक्तियों द्वारा दुर्बोध हैं और अनादि काल से लोकभाषा में प्रचलित हैं वे सब देशी हैं। महाराष्ट्र विदर्भ आदि नाना देशों में बोली जाने वाली नाना भाषाएं होने से देशी शब्द अनंत हैं।

इस विशाल दृष्टिकोण के बावजूद भी उन्होंने इन अंतहीन शब्दों के संग्रहण की दुरूहता को ध्यान में रखते हुए केवल प्राकृत भाषा से सम्बन्धित शब्दों को ही देशी मानकर उनका अविकल संकलन किया है।[7]

त्रिविक्रम के अनुसार आर्ष और देश्य शब्द विभिन्न भाषाओं के रूढ प्रयोग हैं। अतः इनके लिए व्याकरण की आवश्यकता नहीं है।[8] उन्होंने इन विभिन्न सूत्रों द्वारा देशी शब्दों को छह विभागों में विभक्त किया है—

१ वर्णव्यत्यय[9]—इसके अन्तर्गत स्वर आदि की विपरीत आयोजना से उत्पन्न

---

१ प्राकृत व्याकरण २।१।
२ वाग्भटालंकार २।२।
३ नाट्यशास्त्र १७।३।
४ निरुक्त २।१।
५ अष्टाध्यायी १।१।७५।
६ अनुयोगद्वार ३७०।
७ देशीनाममाला १।३,४।
८ प्राकृतशब्दानुशासन १ देश्यमार्षं च रूढत्वात् स्वतन्त्रत्वाच्च भूयसा।
लक्ष्म नापेक्षते तस्य सम्प्रदायो हि बोधक ॥
९ वही १।२।१०९।

ओदन शब्द के लिए निम्न पंक्तियां पठनीय हैं—

'पुव्वदेसयाणं पुग्गलि ओदणो भण्णइ, लाडमरहट्ठाणं कूरो, द्रविडाणं चोरो, आध्राणं कनायु।"[1]

बृहत्कल्प भाष्य में आचार्यपद के योग्य शिष्य के लिए स्पष्ट निर्देश है कि वह देशी भाषाओं के परिज्ञान के लिए बारह वर्ष तक देशाटन करे।[2] देशाटन का प्रयोजन और उससे होने वाली निष्पत्तियों पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि शास्त्रों में प्रसिद्ध शब्द जिन-जिन देशों और प्रान्तों में व्यवहृत होते हैं, देशभ्रमण के समय उन-उन देशों में उनका प्रत्यक्षीकरण हो जाता है—पय पिच्च नीरमित्यादयश्च शास्त्रप्रसिद्धा शब्दास्तेषु तेषु देशेषु लोकेन तथा तथा व्यवह्नियमाणा देशदर्शन कुर्वता प्रत्यक्षत उपलभ्यन्ते।[2]

दूसरी बड़ी उपलब्धि यह होती है कि सतत परिव्रजन करने वाला परिव्राजक मगध, मालव, महाराष्ट्र, लाट, कर्णाट, द्रविड, गौड, विदर्भ आदि नाना देशों की देशीभाषाओं में कुशलता प्राप्त कर लेता है। इसमें एक बड़ी सुविधा यह हो जाती है कि वह नाना देशीभाषाओं में निबद्ध सूत्रों के उच्चारण और उनके यथार्थ अर्थकथन में दक्ष बन जाता है और जब वह आचार्यपद को अलंकृत करता है तो समस्त देशीभाषाओं में निष्णात होने से अभाषिकों (केवल अपने ही प्रदेश की भाषा जानने वालों) को भी उनकी अपनी भाषा में प्रतिबोध देकर प्रव्रजित कर लेता है।[3]

देशीभाषाओं के भेद

आगमों में अनेक स्थलों पर अठारह प्रकार की देशीभाषाओं का उल्लेख मिलता है।[4] राजकुमारों को भी अठारह भाषाओं का ज्ञान कराया जाता था।[5] गणिकाएं भी इन भाषाओं में निष्णात होती थीं।[6] ये अठारह

१ दशवैकालिक, जिनदासचूर्णि, पृष्ठ २३६।

२. बृहत्कल्पभाष्य, १२२३, टीका पृष्ठ ३८०।

३ बृहत्कल्पभाष्य, १२२६, १२३०:

नाणादेसीकुसलो, नाणादेसीकयस्स सुत्तस्स।
अभिलावअत्थकुसलो, होइ तओ णेण गंतव्वं॥
कहयति अभासियाण वि, अभासिए आवि पव्वयावेइ।
सव्वे वि तत्थ पीइं, बंधंति सभासिओ णे त्ति॥

४. औपपातिक १४६; राजप्रश्नीय, ८०६।

५. ज्ञाताधर्मकथा, १।१।८८:

एते णं से मेहे कुमारे ·· अट्ठारसविहदेसिप्पगारभासाविसारए।

६ वही, १।३।८:

देवदत्ता नामं गणिया ·· अट्ठारसदेसीभासाविसारया।

भाषाएं कौन सी थी—आगमो म इसका स्पष्ट उल्लेख नही मिलता। वृहत्कल्प भाष्य की टीका म मगध, मालव, महाराष्ट्र, लाट कर्णाट, द्रविड, गौड और विदर्भ आदि देशो म बोली जाने वाली भाषाओ को देशी कहा गया है।[१] कुवलयमाला मे विजयपुरी के बाजार म एकत्रित अठारह देशो के व्यापारियों के मुह से अपने अपने देश की भाषा के शब्द कहलवाये है।[२] उनके उदाहरण इस प्रकार हैं—

देश	भाषा शब्द	अर्थ
१ गोल्ल	अड्ड[१]	पशुओ को हाकने का शब्द
२ मध्यप्रदेश	तेरे मेरे आउ	तेरे, मेरे आओ
३ मगध	एगे ले[३]	ऐसे ले (?)
४ अन्तर्वेद	कित्तो किम्मो	
५ कीर (कश्मीर)	सरि पारि[५]	
६ ढक्क (पजाब)	एह तेह[६]	यहा-वहा, यह वह
७ सिन्ध	चउडय मे[७]	सुन्दर (?)

---

१ वृहत्कल्पभाष्य, टीका प ३८२
नानाप्रकारा—मगध मालव-महाराष्ट्र-लाट-कर्णाट-द्रविड-गौड विदर्भादि देशभवा या देशीभाषा ।

२ कुवलयमाला, पृष्ठ १५२, १५३

१ कसिणे णिट्ठुरवयणे बहुक-समर भुजए अलज्जे य ।
अड्डे त्ति उल्लवते अह पेच्छइ गोल्लए तत्थ ॥

२ णय णीइ-सधि विग्गह-पडुए बहुजपए य पयईए ।
तेरे मेरे आउ' त्ति जपिरे मज्झदेसे य ॥

३ णीहरिय-पोटट-दुव्वण्ण-मडहए-सुरय-केलि-तल्लिच्छे ।
एगे ले' जपुल्ले अह पेच्छइ मगहे कुमरो ॥

४ कविले पिंगलणयणे भोयणकहमेत्तदिण्णवावारे ।
'कित्तो किम्मो' पिय-जपिरे य अह अतवेए य ॥

५ उत्तुग-थूल घोणे कणयरवण्णे य भार-वाहे य ।
'सरि पारि' जपिरे रे कीरे कुमरो पलोएइ ॥

६ दक्खिण्ण-दाण पोरुस विण्णाण-दया विवज्जिय-सरीरे ।
'एह तेह' चवते ढक्के उण पेच्छए कुमरो ॥

७ सललिय मिउ-मद्दवए गधव्व पिए सदेसगयचित्ते ।
'चउडय मे' भणिरे सुहए अह सैंधवे दिट्ठे ॥

णायकुमारचरिय[1] आदि के रचयिताओ ने अपने-अपने ग्रन्थो को देशी भापा के प्रयोगो से युक्त बताया है । यद्यपि ये ग्रन्थ महाराष्ट्री प्राकृत या अपभ्रंश मे रचित हैं, किन्तु इनमे देशी शब्दो की प्रचुरता है ।

अपभ्रश तथा महाराष्ट्री प्राकृत को भी अनेक विद्वानो ने देशी भापा माना है । लीलावई कहा[2] तथा कुवलयमाला मे कवि महाराष्ट्री प्राकृत को देशी के रूप मे स्वीकार करते है ।[3] महाराष्ट्र के सत कवि ज्ञानेश्वर ने भी देशी शब्द का प्रयोग मराठी के लिए किया है । शावरभाष्य मे देशी भापा के सदर्भ मे अपभ्रंश का उल्लेख हुआ है ।

इसके अतिरिक्त और भी अनेक उल्लेख इन भापाओ को देशी मानने के सन्दर्भ मे मिलते है । इनसे स्पष्ट है कि देशी शब्द का प्रयोग अपभ्रश, महाराष्ट्री तथा जनपदीय वोलियो के लिए भी होता रहा है । ये दोनो — अपभ्रश और महाराष्ट्री भापाए देशी है या नही -- इसके विपय मे विद्वानो ने पर्याप्त चिन्तन किया है ।

अधिक सभव लगता है कि यहा देशी या देशीशब्द का प्रयोग प्रान्त या उस देशविशेप के लिए किया हो । प्रसिद्ध भापाविद् जूलब्लाक तथा डा० कीथ ने यह सिद्ध किया है कि अपभ्रश देशीभाषा नही थी किन्तु आभीर एव गूजरो की भापा थी ।

अपभ्रंश के आज अनेको ग्रन्थ मिलते है जिनमे प्रचुर देशी शब्दो का प्रयोग हुआ है । उदाहरण के लिए डा० देवेन्द्रकुमार शास्त्री द्वारा सम्पादित 'भविसयत्तकहा तथा अपभ्रश कथाकाव्य' पुस्तक मे उल्लिखित कुछ देशी शब्दो एव धातुओ का नीचे निर्देश किया जा रहा है—[4]

तलाय (तलाव), हसि (हसिनी), संड (साड), घीवर, अट्ठारह, चउदह, चउसट्ठि, पासु (पास), आजु (आज), मंदलु, कायरा (कायर), गवार (गवार), अगवाणिय (अगवानी), वणिजारिय (वनजारा) आदि ।

इसी प्रकार इसमे देशी क्रिया-रूप तथा सर्वनामो की भी प्रचुरता है । सर्वनाम के कुछ शब्द-रूप इस प्रकार है—जो, सो, ए, को, हउ, हउ, (हौं), कवणु (कौन), मइ (मैं), हमारे, अम्हारिय, इह, यहि, किह (कैसे) इस, जिह (जैसे), जे, ता और ज इत्यादि ।

देशी क्रियापदो के कुछ रूप—पूछिय, आयउ, तोडिय, देखेवि, लग्ग (लगे हुए) घल्लिय, ढोइय, छोडइ, पडिउ, छूटउ, हक्क दिंति (हांक देते है),

---

१ णायकुमारचरिय, १।१ : णीसेसदेसभासउ · चवंति ।

२ लीलावई कहा, गाहा १३३०
भणियं च पियय माए, रइयं मरहट्ठ देसी भासाए ।

३ कुवलयमाला, पृष्ठ ४ : पाइयभासारइया मरहट्ठय-देसि-वण्णय-णिवद्धा ।

४. भविसयत्तकहा तथा अपभ्रंश कथाकाव्य, पृष्ठ ३११ ।

चालावहि (चलवाये), चलु (चलो), फिरइ, गइय, देइ, बुलावइ, खायइ, खुल्लय (खुला हुआ) इत्यादि।

देशी कोशकार

आज तक कितने देशी कोशकार हुए हैं, इसका ठीक-ठीक सकलन करना इतिहास की दृष्टि से अत्यत दुरूह काय है। वतमान मे देशी शब्दो का सबसे बडा कोश आचाय हेमचद्र का मिलता है। त्रिविक्रम ने अपने प्राकृत शब्दानुशासन मे लगभग १६०० देशी शब्दो का उल्लेख किया है। धनपाल ने पाइयलच्छीनाममाला म प्राकृत शब्दो के साथ कुछ देशी शब्दो का सग्रहण भी किया है। आचाय हेमचद्र ने अनेक देशी कोशकारो का नामोल्लेख अपने ग्रथ—देशी नाममाला मे स्थान-स्थान पर किया है। उनका सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

अभिमानचिह्न—इनका देशीकोश सूत्रात्मक था। इन्होंने शब्दसूची और उदाहरणो से शब्दो के अथ को स्पष्ट करने का प्रयास किया। इन सूत्रो की व्याख्या विद्वान उदूखल ने की थी।

अवतिसुदरी—यह भी कोई विदुषी महिला थी, जिसने प्राकृत मे काव्य रचना कर, उसम अनेक देशी शब्दो को प्रयुक्त किया था। इसके विषय मे पर्याप्त जानकारी नही है।

गोपाल—इन्होंने देशी शब्दकोश की श्लोकबद्ध रचना कर सस्कृत म उन शब्दो का अथ किया था। अनेक देशीकारो ने इनका उल्लेख किया है।

देवराज—इन्होंने छदबद्ध देशीकोश की रचना की और शब्दो के अथ प्राकृत म दिये। इनका सम्पूण कोश शब्दो की प्रकृति के आधार पर प्रकरणो म विभाजित था।

द्रोण—इन्होंने देशीकोश की रचना अवश्य की थी और शब्दो का अथ प्राकृत भाषा मे प्रस्तुत किया था। परन्तु उस ग्रथ का स्वरूप अज्ञात है।

धनपाल—सभवत पाइअलच्छीनाममाला के कर्ता धनपाल से ये भिन्न थे। इनका देशी कोश हेमचद्र के समय मे प्रचलित रहा हो—ऐसी सभावना है। इनका विशेष परिचय ज्ञात नही है।

पादलिप्ताचाय—हेमचद्र के अनुसार ये भी देशीकोश के रचयिता थे। यह सम्भावना की जाती है कि इनके कोशगत विवरण म हेमचद्र पूण सहमत थे।

राहुलक—इनके द्वारा रचित देशीकोश की कोई विश्वस्त जानकारी प्राप्त नही है। 'टान' शब्द के सदभ मे हेमचद्र इनके मत को स्वीकार कर, अन्याय कोशकारो के अथ का प्रतिषेध करते हैं। सभवत इनका कोई कोश रहा हो।

शाम्ब—हेमचन्द्र इनके मत का उल्लेख करते है, पर इनके द्वारा रचित कोई देशीकोश था, यह स्पष्ट नही है।

शीलांक—हेमचन्द्र ने इनके मत का उल्लेख तीन स्थानो पर किया है। सभवतः इन्होंने देशीकोश की रचना की थी।

इन सभी देशी-कोशकारो का इतिवृत्त और काल ज्ञात नही हैं। संभवतः इन सभी कोशकारो के देशीकोश हेमचन्द्र को प्राप्त थे और उन्होंने इन सभी कोशो मे रही अपर्याप्तताओ को निकालकर देशीनाममाला को समृद्ध बनाने का प्रयत्न किया है। यह तो सुनिश्चित है कि हेमचन्द्र से पूर्व प्रणीत देशी कोशो से हेमचन्द्र का प्रस्तुत देशीकोश विशिष्ट, व्यवस्थित और शब्द के सही अर्थ को प्रकट करने मे सक्षम है।

देशीनाममाला : एक परिचय

देशीनाममाला देशी शब्दो का विशिष्ट कोश है। आचार्य हेमचन्द्र ने इसके प्रारम्भ मे लिखा है—

देशी दुःसन्दर्भा प्रायः संदर्भिताऽपि दुर्बोधा।
आचार्यहेमचन्द्रस्तत् तां संदृभति विभजति च॥

देशी शब्दो का चयन करना, उनके सन्दर्भों की समीचीनता को ढूढना तथा उनके अर्थो के अवबोध को निश्चित करना दुरूह कार्य है।

इसकी रचना आचार्य हेमचन्द्र ने अपने व्याकरण ग्रथ सिद्धहेमशब्दानुशासन के अष्टम अध्याय की पूर्ति के लिए की। आचार्य हेमचन्द्र ने इस कोश के दो नामो का उल्लेख किया है—देसीसद्दसंगहो, रयणावली।[1]

किन्तु इन दोनो नामो के अतिरिक्त प्रत्येक अध्याय के बाद पुष्पिका मे 'देशीनाममाला' नाम भी मिलता है।

इसके रचनाकाल के बारे मे भी भिन्न-भिन्न मान्यताएं है। यह तो स्पष्ट है कि इसकी रचना आचार्य हेमचन्द्र ने सिद्धहेमशब्दानुशासन तथा संस्कृत के कोशो—अभिधान चिंतामणि, अनेकार्थ सग्रह आदि के पश्चात् की। डा० बूलर के अनुसार देशीनाममाला की रचना वि० सं० १२१४-१५ मे होनी चाहिए। यह मत विद्वानो मे मान्य भी है।

डॉ. भयाणी ने अपने लेख में देशीनाममाला के अनेक शब्दो की संस्कृत छाया करके उनको तद्भव या तत्सम माना है।[2]

---

१. देशीनाममाला, ८।७७.

इय रयणावलीणामो, देसीसद्दाण संगहो एसो।
वायरणसेसलेसो, रइओ सिरिहेमचन्दमुणिवइणा॥

२. कालूगणि स्मृति ग्रंथ, संस्कृत प्राकृत जैन व्याकरण कोश की परम्परा, पृ ८३-१०७।

प्रस्तुत कोश ग्रथ में ८ अध्याय तथा ७८३ गाथाए हैं। इसमें ३६७८ शब्दो का सकलन है। सभी शब्द अकारादि क्रम से सगहीत हैं। इस पर उनकी स्वोपज्ञ टीका भी है। शब्दो के अर्थावबोध के लिए उन्होंने ६३४ उदाहरण गाथाए भी दी हैं।

आचाय हेमचन्द्र ने शब्दो को देशी मानने की कुछेक कसौटिया दी हैं। इन कसौटियो पर सभी शब्द खरे नही उतरते—यह अवधारणा व्याख्याकार रामानुज, पिशेल और बनर्जी आदि विद्वानो की है। अनेक ऐसे शब्द भी हैं जिन्हें शब्दानुशासन में सस्कृत मानकर सिद्ध किया गया है तथा जो इस कोश में भी समाविष्ट कर दिये गये हैं। डॉ शिवमूर्ति शर्मा ने इसके तत्सम,तदभव एव देशीशब्दो का लेखा इस प्रकार प्रस्तुत किया है[1]—

तत्सम शब्द १००।
सशययुक्त तदभव ५२८।
गर्भित तदभव १८५०।
देशीशब्द १५००।

इन १५०० देशीशब्दो म से ८०० शब्द भारतीय आयभाषाओ में प्राप्त होते हैं तथा ७०० शब्द आर्येतर भाषाओ म सबधित बताये जाते हैं।

विद्वानो का मन्तव्य है कि हेमचन्द्र द्वारा दी गई कसौटियो पर केवल १५०० शब्द खरे उतरते हैं। किन्तु आचाय हेमचन्द्र न प्राय प्रत्येक शब्द को देशी मानने मे तर्क प्रस्तुत किया है तथा अनेक आचार्यों के मतो का उल्लेख भी किया है।

देशीनाममाला के कई शब्द सस्कृत से व्युत्पन्न किये जा सकते हैं, किन्तु अथ की दृष्टि से वे पूणत देशी हैं। स्वय आचाय हेमचन्द्र ने अपनी स्वोपज्ञ वृत्ति में स्थान स्थान पर स्पष्टीकरण दिया है तथा उन शब्दो को देशी मानने का कारण युक्तिपुरस्सर समझाया है। जैसे—

व्यभिचारी अथ का द्योतक 'अविणयवर' शब्द सस्कृत के 'अविनयवर' शब्द से सहज व्युत्पन्न किया जा सकता है, किन्तु सस्कृत कोशो म इस अथ म अप्रसिद्ध होने स इसे देशी म सगहीत किया है। अगुज्झहर-अगुह्यघर, अचिरजुवइ अचिरयुवति आदि शब्दो की भी यही स्थिति है।[2]

'अण्णइअ' शब्द तृप्त अथ का वाचक है। इसे सस्कृत के 'अन्नचित' शब्द से निष्पन्न किया जा सकता है किन्तु उसका अथ तृप्त न होकर 'अन्न से पुष्ट' होना है। अत तृप्त अथ का वाचक अण्णइअ' शब्द देशी है।[3]

१ देशीनाममाला का भाषा वज्ञानिक अध्ययन, पृष्ठ ५६।
२ देशीनाममाला, १।१८ वृत्ति।
३ वही, १।१६ वृत्ति।

निमीलन अर्थवाची 'अच्छिवडण' शब्द सस्कृत के 'अक्षिपतन' शब्द से निष्पन्न हो सकता है, तथापि सस्कृत मे इस अर्थ मे अप्रसिद्ध होने से इसे देशी मे निवद्ध किया है।[1]

'अहिहाण' का अर्थ है—वर्णना, प्रशसा। यह सस्कृत के अभिधान शब्द से व्युत्पन्न किया जा सकता है, किन्तु जो व्यक्ति सस्कृत से अनभिज्ञ हैं, स्वय को प्राकृत के पडित मानते हैं उनका ध्यान आकृष्ट करने के लिए ऐसे अनेक शब्दो का सग्रहण किया है।[2] संस्कृत मे 'अभिधान' शब्द वर्णना—प्रशसा के अर्थ मे प्राप्त नही है।

उल्लिखित सदर्भो से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि देशी शब्दो के सग्रहण मे आचार्य हेमचद्र वडे सतर्क एव जागरूक रहे हैं। इस विषय मे उनकी दृष्टि वहुत स्पष्ट एव विशाल थी, चितन युक्तियुक्त एव गभीर था। अन्य आचार्यो द्वारा देशी रूप मे स्वीकृत होने पर भी जहा आचार्य हेमचन्द्र को कोई शब्द युक्ति सगत नही लगा उसे सस्कृतसम या सस्कृतभव कह कर छोड दिया है। जैसे —

'अचछलं अनपराध इति संस्कृतसमः।[3] 'अच्छोडण मृगया, अल्जिर कुण्डम्, अमिलाय कुरण्टककुसुमम्, अच्छभल्लो ऋक्षः' इत्यपि सगृह्णन्ति। तत् सस्कृतभवत्वादस्माभिर्नोक्तम्।[4]

शब्दो के यथार्थ अर्थ को पकडना एक कठिन कार्य है। उसमे देशी शब्दो का सही ढग से निर्णय तथा अर्थ-निर्धारण तो और भी कठिन कार्य है।

देशीनाममाला मे आचार्य हेमचन्द्र ने देशी शब्दो के वाचक जिन सस्कृत शब्दो का प्रयोग किया है, उनके अनेक अर्थ होते हैं, हो सकते हैं। उनको कौनसा अर्थ अभिप्रेत था—इसका प्रसग या सदर्भ के विना निर्णय करना अत्यत कठिन है। यही कारण है कि देशीनाममाला के अनेक शब्दो का भ्रमपूर्ण एव अयथार्थ अर्थ भी कर दिया गया है। उदाहरण के लिए रामानुज स्वामी की शब्द सूची द्रष्टव्य है। उसमे कई शब्दो के अर्थ विमर्शणीय एव सशोधनीय हैं। जैसे—

आचार्य हेमचन्द्र ने 'आउस' शब्द का सस्कृत अर्थ 'कूर्च' दिया है। कूर्च शब्द के दाढी और कूची—दो अर्थ होते हैं। रामानुज ने इसका अर्थ कूँची (Brush) किया है, किन्तु इसका वास्तविक अर्थ दाढी होना चाहिए। इसके सही या गलत अर्थ का निर्णय आचार्य हेमचद्र द्वारा प्रस्तुत इस उदाहरण गाथा से हो सकता है—

१ देशीनाममाला, १।३९ वृत्ति।
२ वही, १।२१ वृत्ति।
३ वही, १।२० वृत्ति।
४ वही, १।३७ वृत्ति।

"सआयाम-आसयसेन तुह पेच्छिय जाय-आउर-आलोला ।
आलत्थपिच्छच्छत्ते छडिडय रिउणो अणाउसा जति ॥ १।५३।६५ ।

इसमे शत्रुओ की पराजय का सुदर चित्रण करते हुए कहा गया है कि हे राजन ! तुम्हारी शक्तिशाली सेना को निकट आयी जानकर युद्ध के निकटवर्ती भय से भयभीत तुम्हारे शत्रु मयूरपिच्छीनिष्पन्न छत्रो को छोडकर विना दाढी-मूछ वाले मद बनकर युद्ध-क्षेत्र से पलायन कर रहे हैं। इस वर्ण्य प्रसग के आधार पर यह स्पष्ट है कि यहा 'आउस' का अर्थ कूर्चो नही, दाढी मूछ ही होना चाहिए।

इसी प्रकार आहुदुर' (१।६६) शब्द का अर्थ हेमचन्द्र ने 'बाल' किया है। रामानुजस्वामी ने 'वाल' का अर्थ पूछ (T il) किया है, जो ठीक नही है। निम्न उदाहरण गाथा के सन्दर्भ मे इसका 'बालक' अर्थ उचित प्रतीत होता है—

आमोरय ! सिरिआसग ! तए आहुदुरा करि हरीण ।
मित्त-आसवण-अमित्तआलयण-दुवारेसु सघडिया ॥१।५४।६६।

'हे विशेषज्ञ ! लक्ष्मी के वासगृह ! तुमने मित्रो के गृहद्वारो पर हाथी के बच्चो का तथा शत्रुओ के गृहद्वारो पर बदर के बच्चो का सघटन/निर्माण किया है।'

डॉ भयाणी का देशी शब्दो पर किया गया अनुसधान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इन्होंने देशीनाममाला के शब्द-अनुक्रम मे रामानुजस्वामी द्वारा दिये गए इंग्लिश अर्थों की समालोचना करते हुए १७५ शब्दो की सूची प्रस्तुत कर उनके द्वारा कृत अर्थों को भ्रामक और अनभिप्रेत बताया है। इन्होंने इन शब्दो का अर्थ जो हेमचद्र को अभिप्रेत था उसका निर्देश भी किया है। उनमे से कुछेक शब्द सही-गलत अर्थों के साथ इस प्रकार हैं¹—

मूल शब्द	सही अर्थ	रामानुजकृत गलत अर्थ
अच्छिविअच्छी	परस्पर आकर्षण, आपसी खाचतान	Mutual attraction
अजगाउर	उष्ण	Heat
आमलय	नूपुर गृह नूपुर रखने की पेटी	Dressing room
आरदर	१ अनेकान्त, जनसकुल	Not alone
	२ सकट, सकीर्ण	Difficulty
आसीवण	प्रदीपनक, प्रदीप्त अग्नि	Illuminating
इदमहनअ	इन्द्रोत्थान इन्द्रध्वज का हटाना	Awakening Indra
इरमदिर	करभ	A young elephant
उअहारी	गोदोग्ध्री, दूध दुहने वाली स्त्री	A milch cow

¹ स्टडीज इन हेमचन्द्राज देशीनाममाला, पृ ५७-८२।

ओरपिअ	आक्रान्त	Seiged
कोट्टिव	द्रोणी, नौका	A Wooden tub
गणणाइआ	चण्डी, पार्वती	An angry woman
चिच्च	कटिभाग	Charming
दोद्धिअ	चर्मकूप, दृति	A pore of the skin
माणसी	चद्रवधू, वीरवहूटी कीट	The wife of the moon
साहृजण	गोखरू, एक पौधा	A cow's hoof

देशी शब्दो का भाषाशास्त्रीय अध्ययन

आगम-साहित्य शब्दो का विपुल भडार है। धार्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, भौगोलिक एव सास्कृतिक दृष्टि से तो इसका महत्व है ही, किन्तु भापाविज्ञान की दृष्टि से भी इसके अनेक शब्द तुलनीय एव विमर्शणीय है। आगम मे समागत अनेक देशी शब्द अर्वाचीन हिंदी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, कन्नड, तमिल, तेलगु भापा के शब्दो से तुलनीय हे।

भापाविज्ञान की दृष्टि से प्रत्येक शब्द के अर्थ का उत्कर्प एव अपकर्प होता रहा है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी के भापा-विज्ञान सम्बन्धी ये विचार उल्लेखनीय है—'शब्दो के अर्थ की ह्रास और विकास की कथा दीर्घकाल से चली आ रही है। कुछेक शब्दो के अर्थ मे विकास होता है, कुछेक का ह्रास और कुछेक के अर्थ मे विकार आ जाता है। 'वश' शब्द का विकास 'वास' अर्थ मे हुआ, किन्तु कुल के अर्थ मे विकास न होकर 'वश' शब्द ही वना रहा। इसी प्रकार 'पृष्ठ' शब्द का विकास/विकार 'पीठ' अर्थ के रूप मे हुआ, पर पृष्ठ (पन्ने) के अर्थ मे नही हुआ। 'पन्ने' के अर्थ मे पृष्ठ शब्द ही प्रयुक्त होगा, पीठ नही। अमुक पुस्तक का पृष्ठ कहा जाएगा, पीठ नही। 'सूची' शब्द वस्त्र सीने के उपकरण के रूप मे 'सूई' वन गया, किन्तु 'विपय सूची' के लिए 'विपय सूई' नही वन सका। इसी प्रकार शताधिक शब्दो की कहानी हे।'

किन्तु कुछ शब्द सैकडो-हजारो वर्षो के वाद भी अपने मूल अर्थ को सुरक्षित रखते है। आगमो मे 'तुप्प' शब्द का अर्थ है—चुपडा हुआ, घी और स्निग्ध। कन्नड भापा मे आज भी 'तुप्प' घी का वाचक है तथा मराठी मे घी के लिए 'तूप' शब्द का प्रयोग होता है। इसी प्रकार चिकनाहट या तेल का वाचक 'चोप्पड' शब्द राजस्थानी एव हिन्दी मे आज भी प्रसिद्ध हे। यद्यपि सभी शब्दो का भापाशास्त्रीय अध्ययन करना सभव नही था कि अमुक शब्द किस भापा से आया है, किन्तु जहा भी हमे वर्तमान मे प्रचलित अन्य भापा से सवधित शब्दो की जानकारी मिली वहा उन शब्दो के आगे कोष्ठक मे हमने उस भापा का उल्लेख किया है। नीचे कुछेक ऐसे शब्दो के उदाहरण

हैं जो अन्य भाषाओ मे कुछ परिवतन से या मूल रूप में आज भी प्रयुक्त होते हैं—

अक्का— बहिन (कन्नड)
अच्चाइय—व्यथित (अच्चिग-व्यथा कन्नड)
अज्जिआ—दादी (अज्जी कन्नड, आजी मराठी)
कण्ण—गोल (कण्णे-कन्नड)
गयाल—जिद्दी (मूख-कन्नड)
डगल—घर के ऊपर का भूमितल (डागला-राजस्थानी)
पत्थारी—शैया बिछोना (पत्थारी-गुजराती, पथरणा-राजस्थानी)
मग्गओ—पीछे (मग मराठी)
हडप्प—ताम्बूलपात्र (हडप-ताम्बूल रखने की छोटी थली-कन्नड)

अनेक स्थलो पर तो स्वय व्याख्याकार भी देशविशेष की भाषा या शब्द का उल्लेख करते है। जसे—

अण्ण इति मरहट्टाण आमतणवयण।
अवसावण लाडाण कजिय भण्णई।
महाराष्ट्रमवोगिल्लमवाचालम ।
उण्ण त्ति लाडाण गड्डुरा भण्णति।
एआवन्ती सव्वावन्ती ति एतौ द्वौ अपि शब्दौ मागधदेशीभाषा-प्रसिद्ध्या एतावन्त ।
लाडाण कच्छा सा मरहट्ठयाण भोयडा भण्णति।
पेलुकरणादि लाटविषये रूतप्राणिका (पूणिका ?) महाराष्ट्रविषये सैव पेलुरित्युच्यते।

किसी भी भाषा के विकास का महत्वपूण सूत्र ग्रहणशीलता होता है। सस्कृत आदि भाषाओ के कोशग्रन्थ अन्य भाषाओ के शब्दो को ग्रहण करके ही समृद्ध बने हैं। आप्टे, मोनियर विलियम्स आदि विद्वानो ने अपने सस्कृत कोशो म अनेक देशी शब्दो का सग्रहण किया है। आप्टे के सस्कृत-इग्लिश कोष मे बबरीक, बकर, चिक्खल, लड्डू आदि शब्द सगहीत हैं। ये शब्द देशी कोशों म इस प्रकार है—बब्बरी, बक्कर, चिक्खिल्ल (चिक्खल्ल), लड्डुग (लड्डुय) आदि। अथ दोनो कोशो म समान हैं।

यहां डा० शिवमूर्ति का यह मतव्य भी उल्लेखनीय है—'कोई भी साहित्यिक भाषा लोक भाषा के स्तर से उठकर ही साहित्यिक भाषा बनती है। ऐसी स्थिति सस्कृत की भी रही है। पाणिनि जस वैयाकरणो ने इसका सस्कार किया। इस प्रक्रिया मे कितनी ही देश्य शब्दावलि सस्कृत हो उठी। अष्टाध्यायी के उणादि प्रत्यय इसी तथ्य की ओर सकेत करते हैं। पाणिनि के समय म भी शिक्षितो की भाषा से अलग हटकर कुछ भाषाए थी जिन्ह

अविकृत विद्वानो ने प्राकृत (अशिक्षितो की) भाषा कहा है। इस बात का समर्थन पतजलि और भरत भी करते है। पाणिनि के धातु पाठ मे कई धातुए ऐसी आई है जिनका प्रयोग उनके पूर्व की साहित्यिक भाषा मे नही मिलता। इनका विकास आश्चर्यजनक रूप से आधुनिक आर्यभाषाओ, विशेषतया हिंदी मे मिलता है। जैसे—

सस्कृत	हिंदी
अड्डु	अडना
कट्टु	कडा
वाड	वाढ
जिमु	जीमना, भोजन करना

सस्कृत मे घोडे के लिए घोटक और अश्व—ये दो शब्द मिलते है। स्थिति के अनुसार प्रथम लोकभाषा से आया हुआ शब्द रहा होगा और द्वितीय शिक्षितो की भाषा का शब्द रहा होगा। शिक्षितो का अश्व शब्द आज हिंदी मे भी उसी वर्ग के लोगो का शब्द है, जबकि घोटक-घोडअ-घोटा आदि रूपो मे परिवर्तित होता हुआ सामान्यजनो द्वारा व्यवहृत होता है। इसी प्रकार कुत्ते के लिए कुक्कुर और श्वान, विल्ली के लिए विलाडी और मार्जारी शब्द व्यवहृत होते रहे हैं।[1]

वामन के मतानुसार 'जो देशी शब्द बहुत व्यापृत हो, उन्हे संस्कृत काव्यो मे प्रयुक्त किया जा सकता है।'[2] यही कारण है कि सैकडो शब्द सस्कृत कोशो एव देशी कोशो—दोनो में हैं। जैसे—

अमरकोश	अभिधानचिन्तामणि	देशीनाममाला
—	कङ्केल्लि ११३५	अकेल्लि १।७
		ककेल्लि २।१२
—	गोस १३८ टी	गोस २।९६
गोसर्ग १।४।३	गोसर्ग १३८ टी	गोसग्ग २।९६
जलनीली १।१०।३८	जलनीलिका ११६७	जलणीली ३।४२
डुलि १।१०।२४	दुलि १३५३	दुलि ५।४२
—	तम्पा, तवा १२६६	तवा ५।१
तरस २।६।६३	तरस ६२२	तरस ५।४
तुङ्गी २।४।१३९	तुङ्गी १४३ टी	तुगी ५।१४
दाक्षाय्य २।५।२१	दाक्षाय्य १३३५	दक्खज्ज ५।३४
—	प्रखर, प्रक्षर १२५१	पक्खरा ६।१०
प्रतिसीरा २।६।१२०	प्रतिसीरा ६८०	पडिसारी ६।२२

१. देशी नाममाला का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन, पृष्ठ १७०-१७४।

२ काव्यालंकार ५।१।१३।

अभिधानचिंतामणि कोश की स्वोपज्ञवृत्ति में कहीं-कहीं शब्दों के देशी और संस्कृत—दोनों होने का स्पष्ट निर्देश भी किया गया है। यथा—

गोसो देश्याम, संस्कृतेऽप्येके (१३८ टी)।
तुङ्गो देश्याम, संस्कृतेऽपि (१४३ टी)।
विरल्लो देश्याम, संस्कृतेऽपि (१०६० टी)।

इसी प्रकार दोहनपात्र के अर्थ में पारी शब्द का प्रयोग शिशुपालवध (१२।४०) और देशीनाममाला (६।३७)—दोनों में है।

कृश अर्थ के वाचक 'छात' शब्द की भी यही स्थिति है। इस शब्द के बारे में हेमचन्द्राचार्य ने स्वयं प्रश्न उपस्थित कर उस पर पर्याप्त विमर्श किया है। वे लिखते हैं—

'महाकवि माघ ने अपने संस्कृत महाकाव्य शिशुपालवध में 'छात' शब्द का प्रयोग कृश अर्थ में किया है। प्रश्न होता है फिर यह शब्द देशी कैसे? संस्कृत में 'छो' धातु अवयव या छेदन अर्थ में प्रयुक्त है और लोक-व्यवहार में भी इसी अर्थ में प्रचलित है। इस धातु से निष्पन्न 'छात' शब्द कृश अर्थ का वाचक नहीं बन सकता। यद्यपि धातुएं अनेकार्थक होती हैं, किंतु उनका प्रयोग लोक व्यवहार या लोक प्रसिद्धि पर निर्भर है। कृश अर्थ में 'छात' शब्द का प्रयोग माघकवि ने ही किया है। अन्यत्र छेदन अर्थ के अतिरिक्त इसका दूसरे अर्थ में प्रयोग देखने में नहीं आया।'[1]

देशीनाममाला में 'दुल्ल' शब्द वस्त्र के अर्थ में प्रयुक्त है। दुकूल शब्द भी वृक्ष तथा वृक्ष की छाल से निष्पन्न वस्त्र के अर्थ में देशी होना चाहिये। बाद में संस्कृत कोशों में यह शब्द सूक्ष्म रेशमी वस्त्र के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा हो—यह अधिक संभव लगता है। नालिकेर, ताम्बूल आदि शब्द भी देशी होने चाहिये। बाद में ये शब्द संस्कृत साहित्य में स्वीकृत कर लिए गये। ऐसे अनेक देशी एवं रूढ शब्द संस्कृत भाषा की सम्पत्ति बन चुके हैं जिन्हें आज देशी कहना कठिन लगता है।

देशी धातुएं

इस कोश में अनेक देशी धातुएं परिशिष्ट २ (देशी धातु चयनिका) में संगृहीत हैं। पाठक की सुविधा की दृष्टि से हमने इन धातुओं को मूल देशी

१ देशीनाममाला ३।३३ वृत्ति 'छाओ बुभुक्षित कृशश्च। ननु 'छातोदरी युवदृशां क्षणमुत्सवोऽभूत्' (माघ सर्ग ५ श्लोक २३) इत्यादौ 'छात' शब्दस्य कृशार्थस्य दर्शनात् कथमयं देश्य? नैवम्, छेदनार्थस्य 'छात' शब्दस्य साधुत्वात्। न च धात्वनेकार्थता उत्तरमत्र। अनेकार्थता हि धातूनां लोकप्रसिद्धया। लोके च 'छात' शब्दस्य छेदनार्थ मुक्त्वा अस्यार्थस्य प्रयोग नास्येवम्—इत्यलं बहुना।'

शब्दो के साथ न देकर इनका पृथक् संग्रहण किया है। इन धातुओ को दो भागो में विभक्त किया जा सकता है—

१. देशी धातुए।

२ आदेश प्राप्त धातुए।

प्रथम कोटि की धातुओ मे कही-कही व्याख्याकारो ने यह देशी वचन है, यह देशी पद है—ऐसा स्पष्ट निर्देश किया है। जैसे—

खलाहि देशीपदमपसरेत्यस्यार्थे।
जूहंति त्ति देशीशब्दत्वाद् आनयन्ति।
णिण्णाइति देशीपदत्वादधोगच्छति।
फुराविति त्ति देशीपदमेतद् अपहारयन्ति।
स्सेह त्ति देशीवचनत्वाद् गवेषयत।
वाडुइत्ति देशीवचनमेतत् नश्यतीत्यर्थ.।
विप्फालेड देशीवचनमेतत् पृच्छतीत्यर्थः।

आदेश प्राप्त धातुओ को कुछ विद्वानो ने तद्भव के रूप मे स्वीकार किया है। हेमचन्द्राचार्य ने पूर्वाचार्यो की देशी अवधारणा को उल्लिखित कर इन्हे धात्वादेश प्रकरण मे समाविष्ट किया है। वे लिखते हैं—**एते चान्यैर्देशीषु पठिता अपि अस्माभिर्धात्वादेशीकृता**[1]—हमारे पूर्ववर्ती देशीकारो ने इन धातुओ को देशीधातुओं के रूप मे संगृहीत किया है, पर हमने इन्हे आदेश प्राप्त धातुओं के रूप मे ग्रहण किया है।

किंतु आचार्य हेमचन्द्र देशीनाममाला मे स्थान-स्थान पर सकेत करते है कि अमुक धातु हमने धात्वादेश मे बता दी है, इसलिए यहा उसका कथन नही किया है। जैसे—

अइच्छइ, अक्कुसइ—गच्छति। अवक्खइ—पश्यति। अप्पाहइ—संदिशति। अल्लत्थइ—उत्क्षिपति। एते धात्वादेशेषु शब्दानुशासने अस्माभिरुक्ता इति नेहोपात्ता। (१।३७ वृ)

उप्फालइ—कथयति उद्धुमाइ—पूर्यते इत्यादयो धात्वादेशोष्वस्माभिरुक्ता इति नोच्यन्ते। (१।११७ वृ)

चुलुचुलइ—स्पन्दते इति धात्वादेशेपूक्तमिति नोक्तम्। (३।१८ वृ)

चोप्पडइ—म्रक्षति इति धात्वादेशेपूक्तमिति। (३।१९ वृ)

जूरइ खिद्यते कुध्यति च इति धात्वादेशेपूक्तमिति नोक्तम्। (३।५२ वृ)

टिविडिक्कइ मण्डयति, टिरिटिल्लइ भ्राम्यति धात्वादेशेपूक्ताविति नोक्तौ। (४।३ वृ)

इन निर्देशो से यह सम्भावना की जा सकती है कि हेमशब्दानुशासन के

१. प्राकृत व्याकरण ४।२ टीका।

धात्वादेश प्रकरण मे इन धातुओ का आख्यान यदि पहले नहीं किया होता तो वे अवश्य इन्हे देशीनाममाला मे देशीरूप म स्वतंत्र स्थान देते। और यह वास्तविकता भी है कि टिविडिक्क, टिरिटिल्ल आदि सैकड़ो शब्द ऐसे हैं जिनकी समानता/तुल्यता का वहन करने वाले शब्द संस्कृत म उपलब्ध नहीं हैं। आगम-व्याख्या ग्रंथो म आचार्य हरिभद्र आचार्य मलयगिरि आदि व्याख्याकारों ने कई स्थानो पर आदेश प्राप्त धातुओ के देशी होने का स्पष्ट निर्देश भी किया है। जैसे—साहइ त्ति देशीवचनत कथयति (जीवहाटी १ पृ १६०)। 'साह धातु 'कथ' धातु के आदेशरूप म प्राप्त है।'

कुछ अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं—

जोअ (दृश्) जोएइत्ति देशीवचनमेतद निरूपयति।
झाम (गवेषय्) झामइ त्ति देशीयवचनत्वाद गवषयत।
दुरुह (आ+रुह) आरोहणे देशी।
पव्वीह (लभ्) पव्वीहामो त्ति देशीपदत्वाद लभामह।

इसी आधार पर हमने सभी आदेश प्राप्त धातुओ को देशी धातु के अन्तगत रखा है। यद्यपि अनेक आदेश ऐसे हैं जिनका संस्कृत रूप संभव है, वे देशी जैसे प्रतीत भी नहीं होते, जैसे— भञ्ज् को 'सूड' आदेश होता है। सूदन विनाश के अर्थ म संस्कृत म भी प्रसिद्ध है, किन्तु आदेशप्राप्त होने से इसे देशी के अन्तगत रखा है। इसी प्रकार 'दुमण' शब्द दून् धातु का आदेश-प्राप्त रूप है।

देशी धातुओ के पृथक संग्रहण के सदभ म आचार्य हेमचन्द्र का अभिमत विशेष ज्ञातव्य है। उनका मन्तव्य है कि देशी शब्दसंग्रह म धात्वादेश प्रकरण का संग्रह उचित नहीं है, क्योंकि देशीसग्रह म उन्हीं शब्दों का ग्रहण उचित है जिनका अर्थ सिद्ध या प्रसिद्ध है, जो साध्यमान नहीं है। धात्वादेशो का अर्थ साध्य है, सिद्ध नहीं। दूसरी बात, त्यादि, तुम् तव्य आदि प्रत्ययो की बहुलता के कारण धातुओ के अनेक रूप बनते हैं जिनका संग्रहण सम्भव नहीं है।

देशीनाममाला म अनेक धातुमूल शब्दो का प्रयोग हुआ है। यथा—आरोगिय आहुडिय, आडुआलिय, आमग्गिअ। 'करना' अर्थ का सूचक 'णिच्' प्रत्यय लगाने से ये नामधातु बन सकते हैं। यथा—आरोग करोति आरोगइ। आहुड करोति आहुडइ। आडुआलि करोति आडुआलइ इत्यादि।

---

१ प्राकृत व्याकरण, ४।२।

२ देशीनाममाला, १।३७ वृत्ति 'न च धात्वादेशानो देशीषु संग्रहो युक्त। सिद्धाभिधानानुशासनपरा हि देशी साध्यमानपदरूपा धात्वादेशा। ते च त्यादि-तुम-तव्यादिप्रत्ययबहुलतया संग्रहीतुमशक्या इति।

इस प्रकार इन नामो से धातु तथा धातु से भूतकृदन्त आदि क्रियावाचक शब्द बनाये जा सकते है। सर्वत्र क्रियावाची शब्दो मे यह नियम लागू किया जा सकता है।[१] उदाहरण के लिए कुछ अन्य शब्दो को लिया जा सकता है—अविय (कथित), अट्टट्ट (गत), अज्झत्थ (आगत)—यद्यपि ये तीनो शब्द क्रियावाचक भूतकृदन्त के रूप मे हैं, तथापि त्यादि के रूप मे इनका प्रयोग ग्रन्थो मे उपलब्ध नही हुआ इसलिए धात्वादेश मे हेमचन्द्राचार्य ने इन्हे निबद्ध नही किया।[२]

अवरुडिय शब्द आलिगन अर्थ मे देशी है। इसके मूल मे धातु है—अवरुड। अवरुडइ, अवरुडिज्जइ, अवरुडिऊण इत्यादि क्रियापदो का प्रयोग मिलने पर भी आचार्य हेमचन्द्र ने इसे धात्वादेश प्रकरण मे समाविष्ट नही किया, क्योकि उनके पूर्ववर्ती आचार्यो ने भी इसे धात्वादेश मे स्थान नही दिया।[३]

आचार्य हेमचन्द्र अपना तर्क प्रस्तुत करते हुए कहते है कि अज्झस्सइ, अज्झसिय इत्यादि प्रयोगो के आधार पर अज्झस्स शब्द को धात्वादेश मे ग्रहण करना चाहिए था। प्राचीन देशीसग्रहकारो का अनुसरण करते हुए हमने इसे धात्वादेश मे न लेकर अज्झस्स (आक्रुष्ट) शब्द के रूप मे देशीसग्रह मे सगृहीत किया है।[४]

इन शब्दो एव धातुओ को आधार मानकर इस कोश मे हमने कुछ ऐसी धातुओ का ग्रहण किया है जो अन्य शब्दकोशो मे नही है। जैसे—

आलक —लगडा करना, पगु करना।

आसगल—आक्रात करना, प्राप्त करना।

आसर—सम्मुख आना।

इंघ - सूघना।

इग्घ—तिरस्कृत करना।

इल्ल—आसिक्त करना, सीचना।

इन धातुओ का निर्माण/सग्रहण सर्वथा मनगढत या निराधार नही है। हेमचन्द्राचार्य के निम्नाकित सदर्भो को इनकी आधारशिला कहा जा सकता है। 'उग्गहिय' शब्द का अर्थ है रचित, जो 'रचि' धात्वादेश से ही सिद्ध है। अर्थात् रच् धातु को 'उग्गह' आदेश हुआ है। उस उग्गह धातु से ही 'उग्गहिय' शब्द रचित अर्थ मे निष्पन्न हुआ है।[५]

---

१. देशी नाममाला, १।६६ वृत्ति।

२. वही, १।१० वृत्ति।

३ वही, १।११ वृत्ति।

४ वही, १।१३ वृत्ति।

५. प्राकृत व्याकरण, ४।९४; देशीनाममाला, १।१०४ वृत्ति।

रम् धातु को उब्भाव आदेश होता है। इसी उब्भाव से निष्पन्न हुआ है—उब्भाविय (सुरत, रतिक्रीडा)। इसी प्रकार ऊसलिय, ऊसुभिय (उल्लसित) शब्द उल्लस् धात्वादेश द्वारा सिद्ध है।[1] पच्चुड्डार और पच्चोवणी—ये दोनों क्रियाशब्द हैं। पच्चुड्डरिअ और पच्चोवणिअ इन्हीं क्रियाशब्दों से निष्पन्न हुए हैं।[2]

कुछ धातुमूल शब्द एवं धातुएं स्वरूप की दृष्टि से तद्भव प्रतीत होती हैं, पर अर्थ की दृष्टि से पूर्णतया देशी हैं। जैसे—

आसरिअ का अर्थ है—सम्मुख आया हुआ, न कि आश्रित।

आलविय का अर्थ है—लगडा, न कि अलकृत।

गुज का अर्थ है—हसना, न कि गूजना।

हण का अर्थ है—सुनना, न कि हिंसा करना।

प्रस्तुत कोश के सकलन की प्रक्रिया

अनेक स्थलों पर आगम तथा आगमेतर ग्रंथों के व्याख्याकारों ने यह 'देशीशब्द' है ऐसा निर्देश किया है। यह निर्देश विभिन्न रूपों में मिलता है—

पइक्करो त्ति देशीशब्दोऽयं समूहवाची।
पादाभरणं लोके पागडा इति प्रसिद्धा।
कप्पट्ठ समयपरिभाषया बालक उच्यते।
उल्लूढओ त्ति देशीपदमेतद् गर्वं वतत।
इगमपि देशीपदं क्वापि प्रवेशार्थं वतत।
अगोरपारम्मि देशीपुरस्या अपारे।
अचियत्तं देशीवचनं अप्रीत्यभिधायकम्।
उप्पित्थशब्दस्त्रस्तव्याकुलवाची देशीति क्वचित्।
कोल्लं देशीशब्दत्वात् कोटरम्।
लोकभाषायां अवाडो इति प्रसिद्धा।
घिघरस ति देशीवचनत गलितशिरउच्यते।
धोरण देशीभाषया मत्तमुच्यते।
जगारिगदेश मकमभाषया रथ्या उच्यते।
णगारो देशीपदत्वेन पादपूरणे।
धम्मरस्कामि देशीपदनात् ब्राह्मणमानानि।
घुम्मरसो देश शब्दत्वात्।
घुघराखो देशी शब्दवाचा।

---

1 प्राकृत व्याकरण ४।२०२, देशीनाममाला १।१४१ १४० वृत्ति।
2 देशीनाममाला १।७४ वृत्ति।

निहुयं ति आर्षत्वाद् निह्नुतम् ।

प्राकृते पुष्परजः शब्दस्य तिगिंछ इति निपातः देशीशब्दो वा ।

तुंडियं थिग्गलं देसीभासाए सामयिगी वा एस पडिभासा ।

दिगिंछ त्ति देशीवचनेन बुभुक्षोच्यते ।

दुवग्ग त्ति देशीवचनत्वाद् द्वावपि ।

अमाघातो रूढिशब्दत्वाद् अमारिरित्यर्थः ।

मरहट्ठविसयभासाए वा इत्थी माउग्गामो भण्णति ।

सहूणं ति देसीभासा सहेत्यर्थ ।

वाउप्पइय त्ति वातोत्पतिका रूढ्यावसेया ।

वालग्गपोइयातो त्ति देशीपदं वलभीवाचकम् अन्ये त्वाकाशतडागमध्य-स्थितं क्षुल्लकप्रासादमेव वालग्गपोइया य त्ति देशीपदाभिधेयमाहुः ।

संघाडिय त्ति देशीपदमव्युत्पन्नमेव मित्राभिधायि ।

वियडिशब्देन लोके अटवी उच्यते ।

विसालिसेहिं ति मागधदेशीयभाषया विसदृशैः ।

संगेल्ली समुदायः देश्योऽयं शब्दः ।

सासेरा देशीपदत्वाद् यंत्रमयी नर्तकी ।

साहिशब्दो राजमार्गो देशी ।

सुत्तं मदिराखोलः देशविशेषप्रसिद्धो वा कश्चिद् द्रव्यः ।

सुरूची रूढिगम्या आभरणविशेषः इति केचित् ।

हुरत्था नाम देसीभासातो वहिद्धा ।

होले त्ति निट्ठुरमामंतणं देसीए भविलवचनमिव ।

होला इति देशीभाषातः समवया आमन्त्र्यते ।

प्रारम्भ मे हमने प्राय उन्ही शब्दो का सकलन किया जहा देशी आदि का उल्लेख था, किन्तु जब आचार्य हेमचद्र की देशीनाममाला का पारायण किया तब अनेक दृष्टियां स्पष्ट हुई । इसलिए सभी आगम एव व्याख्याग्रथो का पुन अवलोकन किया । इससे हजारो शब्द इस कोश मे और जुड गए ।

यहां कुछ ऐसे उदाहरण प्रस्तुत है जहा हमने देशीनाममाला को आदर्श मानकर शब्दो का चयन किया है—

यद्यपि कोश मे नञ् समास वाले शब्दो का संग्रहण प्राय नही किया जाता, किन्तु देशीनाममाला मे कुछ ऐसे शब्द भी मिलते है । जैसे—अणच्छिआर (अच्छिन्न), अणिक्खिय (अनिंदनीय) । इस आधार पर हमने भी ऐसे शब्दो का सकलन किया है । जैसे—अतितिण, अचोक्ख, अच्छिक्क, अजडर आदि ।

आचार्य हेमचद्र ने ऐसे अनेक शब्दो को देशी माना है जिनकी सस्कृत छाया सभव है, किन्तु सस्कृत मे वे प्रसिद्ध नही हैं । जैसे—

अक (अङ्क) निकट।

अवक्खलिय (अस्खलित) आकुल-व्याकुल।

अदसण (अदर्शन) चोर।

अमय (अमृत) चाद।

इसी आधार पर प्रस्तुत कोश मे भी अनेक शब्दो का समावेश किया गया है। जैसे—

अच्चिय (अर्चित) मूल्यवान।

अवतस (अवतस) पुरुषव्याधि नामक रोग।

आयस (आदर्श) घोडे का आभूषण।

तरुमल्लिहायण (तरोमल्लिहायन) युवा।

पइरिक्क (प्रतिरिक्त) एकात।

देशीनाममाला मे इल्ल और इर प्रत्यय वाले कुछ शब्दो का सग्रहण है। जैसे—अविर (ग्राम), सच्चिल्लय (सत्य), तत्तिल्ल (तत्पर), लोहिल्ल (लोभी), णच्चिर (रमणशील)। इसी आधार पर दिट्ठिल्लिय, गलिल्लिय आदि शब्दो को हमने भी देशी की कोटि मे रखा है। आचार्य मलयगिरि ने पढमेल्लुग शब्द के लिए देशी का निर्देश किया है।[1] इसलिए सभव लगता है कि किसी क्षेत्र विशेष मे इल्लादि प्रधान शब्दो का व्यवहार अधिक प्रचलित रहा हो, उसी के आधार पर इसे देशी माना हो। 'इर', 'इल्ल' प्रत्यय से सम्बन्धित हजारों शब्द आगम एव व्याख्याग्रथो मे मिलते हैं। किन्तु उनका समावेश इसमे नही हो सका है।

प्राकृत शैली से जिन शब्दो का रूप परिवर्तित हो गया है, वसे अनेक शब्द देशीनाममाला मे सगृहीत हैं। हमने भी कुछ शब्द इस कोश मे सम्मिलित किए हैं जैसे—आघविय[2], तिगिछ[3] आदि।

देशीनाममाला मे राजा तथा गाव विशेष के नाम भी देशी रूप मे लिए गए हैं। राजा सातवाहन के लिए तीन शब्द आए हैं—कुतल, चउरचिध और हाल तथा गुजरात के एक गाव 'मोढेरक' के लिए भयरग्गाम' शब्द प्रयुक्त हुआ है।

इसी आधार पर हमने भी कुछ व्यक्तियो देशो तथा नगरो के नामो को देशी के अतर्गत लिया है। जैसे—गोव्वर, कुडक्क, कोसवाग कुरयव आदि।

आचार्य हेमचद्र ने सख्यावाची शब्दो को भी देशी के अतर्गत समाविष्ट

---

१ आचारग, मलयगिरि टीका पत्र ११६ प्रथमा एव प्रथमेल्लुका देशी-पदमेतत्।

२ आघविय ति प्राकृतशैल्या छादसत्वाच्च गुरो सकाशादागृहीतम।

३ प्राकृत पुष्परजःशब्दस्य तिगिछ इति निपात देशीशब्दो वा।

किया है। जैसे—पचावण्ण, पणवण्ण (पचपन) आदि। इसी आधार पर हमने भी पण, चालीस, पणयाल, अडयाल, पणपण्ण आदि सख्यावाची शब्द लिए है। सख्यावाची शब्दो के अतर्गत अडड, अडडग, हुहुय, हुहुयग, अवव, अववग आदि शब्द भी महत्त्वपूर्ण है। ये शब्द सस्कृत कोशो मे तो अप्राप्त है ही, अन्य परम्पराओ मे भी नही मिलते। ये जैन गणित के विशेष पारिभाषिक शब्द है। अत इन्हे देशीशब्दो के रूप मे स्वीकृत किया है।

सामान्य कोशो मे क्त्वा प्रत्ययात शब्द नही मिलते। किन्तु हमने मूल-रूप मे प्रत्यय के साथ ही उन शब्दो का इस कोश मे समावेश किया है। जैसे—अगोहलेऊण, अप्पाहट्टु आदि। ऐसे शब्दो को लेने का कारण यह है कि कही-कही मूल शब्द का प्रयोग आगमो मे नही मिलने से इन शब्दो द्वारा उन अर्थो का ज्ञान हो जाता है।

अनुकरणवाची शब्दो के विषय मे विद्वानो मे मतभेद है। कुछ इन्हे देशी मानते है तथा कुछ इन्हे देशी रूप में स्वीकार नही करते। किन्तु हमने इस कोश मे अनेक अनुकरणवाची शब्दो को देशी रूप मे स्वीकार किया है। जैसे—घणघणाइय, चवचव, छडछडा, छु, छुक्कारण, थिविथिवित, दुहदुहग।

वाक्यालकार के रूप मे प्रयुक्त अव्यय भी देशी शब्दो के अतर्गत समाविष्ट है। क्योकि कही-कही टीकाकारो ने भी इन्हे देशी रूप मे स्वीकार किया है। जैसे—'आइ ति देशीभाषाया', 'खाइण' ति देशीभाषया वाक्यालकारे। प्राकृत के पादपूरक अव्ययो को भी देशी के रूप मे स्वीकार किया है। जैसे—जे, मो, र, से, अदुत्तर, बले। इनके देशी होने के कुछ प्रमाण इस प्रकार है—

१ से शब्द मागधदेशीप्रसिद्धो निपातस्तच्छब्दार्थः।

२ ऊति णाम मरहट्ठादिसु णादि दुगुछिज्जति।

३ णगारो देसिवयणेण पायपूरणे।

४. वाणमिति पूरणार्थो निपात।

यद्यपि 'क' प्रत्यय स्वार्थ मे होता है किन्तु इस कोश मे मूलशब्द के साथ जहा भी स्वार्थ का द्योतक क, अ, य, ग और त आदि जुड गए है उन्हे अर्थ भिन्न न होने पर भी पृथक् रूप से ग्रहण किया है। जैसे—

अछण, अछणय—विस्तार।

कडच्छु, कडच्छुत, कडच्छुय—चम्मच।

इन्हे स्वतत्र रूप से ग्रहण करने के दो कारण है—

१ इन शब्दो का ग्रथो मे ऐसा प्रयोग मिलता है। अत पाठक की सुविधा की दृष्टि से उनको अलग-अलग ग्रहण किया है। यदि साहित्य मे 'कुड' शब्द की अपेक्षा 'कुडग' का प्रयोग है तो पाठक 'कुडग' शब्द ही देखना चाहेगा। आचार्य हेमचद्र ने देशीनाममाला मे कही-कही ऐमे शब्दो का निर्देश भी किया है। जैसे—

उवकयय कप्रत्ययाभावे उवक्य सज्जितम् (१।११६ वृत्ति)।
जच्छदओ स्वच्छन्द कप्रत्ययाभावे जच्छदो (३।४३ वृत्ति)।

इसी प्रकार कही-कही दीर्घ-ह्रस्व मात्रा के अतर वाले, अ/आ/इ/उ/ग/घ/ह के अतर वाले तथा व्यञ्जन-द्वित्व वाले शब्द समानार्थक होने पर भी पृथक् रूप से ग्रहण किए गए हैं। जैसे—

चुडलय, चुडलि, चुडलिय, चुडली, चुडल्लि, चुडिलीय—जलती हुई लकडी।

गुम्मी, गुम्ही, गोमी, गोम्मी, गोम्ही—कनखजूरा।
उयरिणिया, ऊरणिया, ऊरणीया—जतु विशेष।
भिलुगा, भिलुघा, भिलुहा—भूमि की रेखा।

२ इन्हें भिन्न ग्रहण करने का दूसरा कारण—कभी-कभी शब्द में अ/आ/क/य/ग आदि जुडने से अर्थ में बहुत भिन्नता आ जाती है। जैसे—

- अवल्ल—बैल। अवल्लय—नौका खेने का एक उपकरण।
- उद्धच्छवि विपरीत। उद्धच्छविअ—सज्जित।
- उड—१ मुख, २ कडा। उडअ—पाव में पिंड रूप में लगे उतना गहरा कीचड। उडग—स्थण्डिल।
- पयल—नीड। पयला—निद्रा। पयलाअ सर्प। पयल्ल प्रसृत।
- पडिसारिअ—स्मृत। पडिसारी—यवनिका।

इस कोश के मूलभाग में आदि नकार वाले शब्दो को नही रखा गया है। आगमो में जहा कही आदि नकार वाले शब्द प्राप्त हुए उनके स्थान में 'ण' कर दिया गया है। क्योकि देशी शब्दो की आदि में नकार का सर्वथा अभाव है। हेमचद्राचार्य के मतानुसार देश्य प्राकृत में आदि नकार असभव ही है। प्राकृत व्याकरण में 'वा आदौ' सूत्र के द्वारा जो वैकल्पिक आदि ण का विधान किया गया है, वह तो मात्र सस्कृत शब्दो से निष्पन्न प्राकृत शब्दो की अपेक्षा से है।"[1]

सामान्यत सस्कृत या प्राकृत में उपसर्ग जुडने पर अर्थ परिवर्तित हो जाता है। हेमचद्राचार्य के अभिमत में देशी शब्दो का उपसर्ग के साथ कोई स्वतत्र सम्बध नही है। जैसे—उच्छिरण—छिद्र (दे १/९५)। छिल्ल—छिद्र (दे ३/३५)। यहा उत्पूर्वक छिल्ल शब्द नही है, लेकिन छिल्ल और

---

१ देशीनाममाला, ५।६३ वृत्ति
नकार आदयस्तु देश्याम असम्भविन एवेति न निबद्धा। यच्च 'वा आदौ' (प्रा १।२२९) इति सूत्रितम अस्माभि तत सस्कृतभवप्राकृतशब्दापेक्षया न देशी अपेक्षया इति सवमवदातम।

उच्छिल्ल—दोनो स्वतत्र शब्द है। दोनो का अर्थ एक ही है—छिद्र। इसी प्रकार फेस-उप्फेस, उज्झिखिय-झिखिय आदि शब्दो की स्थिति है।[1]

साहित्य मे हमे जो शब्द जिस रूप मे प्रयुक्त मिला उसका संकलन हमने उसी रूप मे किया है। जैसे—बौद्ध भिक्षु के लिए तच्चण्णिय पाठ प्रसिद्ध है, किंतु कही-कही ग्रथो मे तव्वण्णिय पाठ भी मिलता है। यहा बहुत अधिक सभावना है कि प्राचीन लिपि मे च और व की समानता मे तच्चण्णिय के स्थान पर तव्वण्णिय शब्द पढा गया हो। हमे दोनो रूप प्राप्त हुए है। अत. दोनो का सकलन कर दिया है। यह भी बहुत सभव है कि 'तव्वण्णिय' शब्द बौद्ध भिक्षु के अर्थ मे अनेक स्थानो पर प्रचलित रहा हो। आचार्य हेमचद्र ने 'च', 'व', 'ब' के व्यत्यय के अनेक शब्द देशीनाममाला मे सगृहीत किए है। जैसे - चालवास-बालवास, चिड्डविअ-विड्डविअ, चुक्क-बुक्क, चुक्कड-बोक्कड आदि। इसी प्रकार मगदतिया मालती के लिए प्रसिद्ध है किंतु मदगतिया पाठ भी मिलता है। सभव है लिपिकार द्वारा वर्ण-व्यत्यय हो गया हो या इसी रूप मे यह प्रचलित रहा हो।

कल्पसूत्र मे 'अवामसा' शब्द अमावस्या के अर्थ मे प्रयुक्त है। प्रथम दृष्टिपात मे लगता है कि यह 'अमावस' शब्द मे वर्णव्यत्यय होने से या लिपि-दोष होने के कारण 'अवामसा' रूप बन गया होगा। किंतु कल्पसूत्र की चूर्णि तथा टिप्पणक की सभी प्रतियो मे 'अवामसा' शब्द मिलने से लगता है कि उस समय अमावस के लिए अवामसा शब्द ही प्रचलित रहा होगा। मुनि पुण्यविजयजी ने इस पर पर्याप्त विमर्श किया है।[2]

'उत्तुहिय' के स्थान पर उड्डुहिय शब्द भी कही-कही मिलता है जो कि हेमचद्राचार्य की दृष्टि मे लिपिभ्रम ही है।[3] इसी प्रकार अइरिप-अइरिप्प, अंबसमी-अवमसी, उत्तम्पिअ-उत्तम्मिअ, झरक-झरंत—इन शब्दो मे भी लिपिभ्रम की सभावना की जा सकती है। इस विषय मे आचार्य हेमचद्र अपना अभिमत प्रस्तुत करते हुए कहते है कि हो सकता है लिपिभ्रम न भी हो।

---

१. देशीनाममाला, १।६५ वृत्ति :
न हि देशीशब्दानामुपसर्गसम्बन्धो भवति।

२ कल्पसूत्र टिप्पनक, पृष्ठ १६ :
विश्वेष्वपि चूर्ण्यादर्शेषु टिप्पणकादर्शेषु च अवामंसा। इत्येव पाठो वरीवृत्यते इति सम्भाव्यते तत्कालीनभाषाविदा अमावसाऽर्थको अवामंसा-शब्दोऽपि सम्मत. इति नात्राशुद्धपाठाशका विधेयेति।

३. देशीनाममाला, १।१०५ वृत्ति :
उत्तुहियं तकारसंयोगस्थाने डकारसंयोगं केचित् पठन्ति। स च लिपिभ्रम एव इति।

दोनो रूपो मे ही शब्दो का प्रचलन रहा हो। इसमे बहुश्रुत या सर्वज्ञ ही प्रमाण हैं।[1]

लिपिभ्रम के कारण कहीं-कहीं अर्थ का आमूलचूल परिवर्तन भी परिलक्षित होता है। 'पडीर' शब्द का अर्थ है—चोरणिवह अर्थात् चोरो का समूह। लिपिभ्रम के कारण किसी ने 'चोरणिवह' के स्थान पर 'बोरणिवह' पढ लिया और इस सन्दर्भ में 'पडीर' का अर्थ बेरो (बदरी फल) का समूह हो गया।[2]

देशीनाममाला की वृत्ति में आचार्य हेमचन्द्र ने अन्य आचार्यों के अर्थभेद, शब्दभेद तथा उनके मतो का भी उल्लेख किया है। जैसे—

केचित् प्रिये कायरो इत्याहु ।
अलमलवसहो सप्ताक्षर नामेति गोपाल ।
ऊसाइअ उत्क्षिप्तमिति धनपाल ।
जबुल मद्यभाजनमिति सातवाहन ।
टोल पिशाचमाहु सर्वे शलभ तु राहुलक ।
खेआल् नि सह, असहन इत्यन्ये।
पेढाल वर्तुलमिति द्रोण ।
पेंडारो महिषीपाल इति देवराज ।

हमने इन सबका समावेश कोश के मूलभाग में किया है।

कहीं-कहीं आचार्य हेमचन्द्र ने पूर्वज देशी कोशकारो द्वारा मान्य या प्रयुक्त देशी शब्द संघटना के विषय में ऊहापोह किया है। जैसे—अच्छिघरुल्ल, अच्छिहरिल्ल तथा अच्छिहरुल्ल—इन तीन शब्द प्रयोगो मे उन्होंने केवल 'अच्छिहरुल्ल' को अपने ग्रंथ में स्थान दिया है। शेष दो के लिए 'बहुधा प्रमाणम्' कहकर छोड दिया है। हमने ऐसे सभी शब्दो का सकलन किया है।

देशी शब्द विभिन्न ग्रंथो में भिन्न भिन्न रूप से प्रयुक्त हुए हैं। व्याख्याकारो ने किसी एक रूप को मुख्य मानकर दूसरे रूपो को पाठभेद में उल्लिखित किया है। यत्र-तत्र हमने उन पाठभेदों में प्रयुक्त मुख्य देशी रूपो को टि और पा के उल्लेख के साथ इस कोश में समाविष्ट किया है। जैसे—

उसूगग-उच्छूसग। कुडिल्लग-कुंटुल्लिग। फुगफुग-फुगपुग।
भमडनूय भमामूय। मुमर मुमल-सुमल।

कहीं-कहीं मूलपाठ तो हमे जैसा मिला वैसा ही रखा है, किन्तु कोष्ठक

[1] देशीनाममाला, १।३७ वृत्ति
केषांचिद भ्रमोऽभ्रमो वेति बहुदर्शन एव प्रमाणम्।
[2] वही, ६।८ वृत्ति।

मे उसका सभावित शुद्ध रूप भी दे दिया है। जैसे—

ओट्टिय (दोट्टिय, दोद्धिय ?)
गोमाणसिया (गोमासणिया ?)
तल्लकट्ट (तल्लवत्त ?)
तूमणय (णूमणय ?)

जो शब्द आगम एव आगमेतर ग्रथो तथा देशीनाममाला दोनो मे मिले है, उन शब्दो के दोनो प्रमाण-स्थलो का उल्लेख किया है। जैसे—

अइराणी (अंवि पृ २२३; दे १।५८)
अंगुट्ठी (उसुटी प ५४; दे १।६)
अणह (ज्ञा १।१८।२४; दे १।१३)

इसी प्रकार अणुय, पक्खरा, पडिहत्थ, पणवण्ण आदि आदि।

अनेक स्थलो पर मूलपाठ मे प्रसग से शब्द का अर्थ भिन्न प्रतीत होता है तथा व्याख्याकार उसका भिन्न अर्थ करते है। ऐसी स्थिति मे हमने दोनो अर्थो का सप्रमाण उल्लेख किया है। जैसे—आडोलिया। टीकाकार ने इसका अर्थ रुद्ध किया है जबकि प्रसग से उसका अर्थ खिलौना होना चाहिए।[1] कन्नड हिन्दी कोश मे आडु-आडु शब्द खेलने के अर्थ मे गृहीत है।

इसी प्रकार सपादको द्वारा किए गए अर्थो पर भी हमने विमर्श किया है। निशीथचूर्णि का एक शब्द है अत्थभिल्ल। पादटिप्पण मे इसका अर्थ शस्त्र-विशेष किया गया है। शब्द के आधार पर यह अर्थ ठीक भी लगता है — अत्थ अर्थात्-अस्त्र, भिल्ल अर्थात्-भाला। वहा जगली जानवरो के प्रसग मे यह शब्द आया है, अत. अत्थभिल्ल का अर्थ भालू होना चाहिए।[2]

जिस किसी शब्द के एकाधिक अर्थ हैं उनमे से हमारे द्वारा निरीक्षित ग्रथो मे प्राप्त अर्थो के प्रमाण प्रस्तुत किए गये हैं। शेष अर्थ हमने 'पाइयसद्दमहण्णवो' से विना प्रमाण के ग्रहण किए है, क्योकि प्रमाण हमने उन्ही ग्रथो के प्रस्तुत किए है, जिनका हमने स्वय निरीक्षण किया है।

इस कोश में अनेक ऐसे शब्दो का भी सग्रहण है जो देशी हैं या नही, इस दृष्टि से विमर्शणीय हो सकते है। किन्तु अन्यान्य विद्वानो तथा कोशकारो द्वारा वे देशी रूप में मान्य रहे हैं, अत हमने उनका उसी रूप मे सकलन किया है। इस सकलन का एकमात्र उद्देश्य है कि विभिन्न विद्वानो द्वारा देशीरूप मे स्वीकृत सभी शब्दो की उपलब्धि एक ही ग्रन्थ मे हो जाए।

---

१. ज्ञाताधर्मकथा, १।१८।८ : अप्पेगइयाणं आडोलियाओ अवहरइ, अप्पेगइयाणं तिदुसए अवहरइ। टीका पत्र २४४ : आडोलियाओ — रुद्धाः।
२. निशीथचूर्णि २, पृष्ठ ६३ :
अदेसिको वा अडविपहेण गच्छति, तत्थ वि तरच्छ-वग्घ-अत्थभिल्लादिभयं।

प्रस्तुत कोश की विशेषता

एक ही अर्थ के वाचक भिन्न शब्दों के सन्दर्भ में अन्य कोशों की भांति 'देखो' का निर्देश न कर पाठक की सुविधा के लिए उस शब्द का अर्थ वहीं दे दिया गया है। कहीं कहीं शब्द के अर्थ की विस्तृत जानकारी तथा तुलना की दृष्टि से दो चार स्थानों पर 'देखें' का निर्देश भी किया है। जैसे—आणदवड—देखें वहूपोत्ति। उक्कोडमग—देखें खोडमग।

कोशों में कहीं-कहीं एक शब्द का अर्थ देखने के लिए तीन-चार शब्द देखने पर भी अर्थ नहीं मिलता। पाइयसद्दमहण्णवो में अनेक स्थानों पर ऐसा हुआ है। जैसे- पज्जुमवणा देखो पज्जुमणा। पज्जुमणा देखो पज्जोमवणा। पलोहिय देखो पलोभिअ। पलोभिअ देखो पलोभविअ। रम्ह देखो रफ। रफ देखो रप। अनेक स्थलों पर शब्दों के पास-पास आने से पुनरुक्ति दोष-सा प्रतीत हो सकता है किंतु सुविधा की दृष्टि से हमने सभी शब्दों का अर्थ प्राय उनके सामने ही दे दिया है।

जहां दो समस्त शब्द एक अर्थ के वाचक हैं वहां देशी शब्द को अलग से प्रदर्शित करने के लिए ' ' चिह्न लगा दिया है जैसे—'कप्प'लइय', 'अट्टण' साला आदि।

इस कोश में अनेक ऐसे शब्द हैं जो अर्थ की दृष्टि से बहुत समृद्ध हैं। भिन्न भिन्न प्रसंगों में उन शब्दों के भिन्न भिन्न अर्थ मिलते हैं। जैसे—अक्खो, पडिल्ल, भड, वल्लर आदि।

प्रस्तुत कोश में प्रयुक्त ग्रंथों में कुछ ग्रंथ देशी शब्दों की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। जैसे—अंगविज्जा, भगवती, आवश्यकचूर्णि, कुवलयमाला, नंदीचूर्णि, निशीथभाष्य एवं चूर्णि, व्यवहार भाष्य, बृहत्कल्पभाष्य आदि-आदि। इनमें नवीन एवं अप्रचलित देशी शब्दों का प्रयोग हुआ है। जैसे—अवसुज्ज, अवम्गु, सद्ध, चोप्प, नागनि, तह, वियडामय आदि।

इस कोश में वनस्पति, जीवजंतु, आभूषण, खाद्यपदार्थ से संबंधित अनेक ऐसे शब्द हैं जो भिन्न भिन्न क्षेत्रों से संबंधित हैं। अनेक स्थानों पर स्वयं व्याख्याकार क्षेत्र विशेष का उल्लेख भी करते हैं। जैसे—

मूयग—मूयग त्ति मेदपाटप्रसिद्धस्तृणविशेष।

विरालिया—गोल्लविसए धन्नी।

घरच्छ—मगधेषु घरोल इति लिंगम्यम।

इस विभाग में प्रचलित एवं व्यवहृत होने वाले शब्द देश्य की कोटि में आते हैं। क्योंकि इनका मूलरूप न संस्कृत में मिलता है और न प्राकृत में। हमने भी अनेक ऐसे शब्दों का समावेश स्वयं किया है जो क्षेत्र विशेष से संबंधित हैं। जैसे—गारिसम, ताम्बूल, पाटग आदि। यद्यपि ये शब्द संस्कृत

साहित्य एव कोशो मे भी मिलते है, किन्तु ये शब्द क्षेत्र-विशेष मे प्रचलित भाषाओ के है। बाद मे इनका सस्कृत साहित्य मे प्रयोग होने लगा। इसी प्रकार वारक/वारग शब्द सस्कृत मे घडे के लिए प्रसिद्ध है किन्तु यह शब्द मरुधर देश मे मगलघट के अर्थ मे प्रसिद्ध था—**'वारकः मरुदेशप्रसिद्धनाम्ना मांगल्यघटः।'**

पण्णवणा सूत्र मे अनेक जीव-जतुओ एव वनस्पतियो का नामोल्लेख हुआ है। उनकी पहचान को कठिन बताते हुए स्वय टीकाकार कहते हैं—**देशतोऽवसेयाः। सम्प्रदायादवसेयः। लोकप्रतीतः। रूढिगम्यम्** आदि।

जहा हमे नाम के बारे मे निश्चित जानकारी मिली उसका नामोल्लेख किया है। अन्यथा वनस्पति-विशेष, लता-विशेष, पुष्प-विशेष का उल्लेख किया है। इसी प्रकार आभूषणो के बारे मे भी आभूषण-विशेष का उल्लेख किया है।

इस कोश मे ऐसे अनेक देशी शब्द सकलित है जो प्राचीन भारत की सभ्यता एव सस्कृति पर प्रकाश डालते है। जैसे—

आवाह, विवाह, आहेणग, पहेणग, गिरिजन, करडुयभत्त, मडगगिह, एमिणिआ, अण्णाण, आणदवड, वहूपोत्ति, भोयडा आदि आदि शब्द सामाजिक रीति-रिवाजो एव परम्पराओ के सवाहक है। अधिक्कमणक, अवयार, इदड्ढलय आदि शब्द उत्सवो तथा अइराणी, इदियाली, उत, उयणिसय, कोटल, विंटल आदि शब्द विशेष अनुष्ठानो एव मत्रो के वाचक है।

अप्पसत्थभ, आपुरायण, आमोसल, कडूसी, ककितजाण, गल्लोल आदि अनेक शब्द विविध गोत्रो के वाचक है।

इसी प्रकार नानाप्रकार के शिल्पकर्म, पुस्तके, जातिया, सिक्के, यान-वाहन, शस्त्र, रोग, खेल, जाल, वाद्य, वेशभूषा, खानपान, घर के अवयव, घरेलु उपकरण, पारिवारिक सम्बध आदि के ससूचक सैकडो शब्द इस कोष मे सगृहीत है।

अमोसली, कडजुम्म, उग्गह, अमुदग्ग, किट्टि, णिगोद, फड्डग, पउट्ट-परिहार आदि पारिभाषिक शब्द भी इसमे सगृहीत है।

इस कोश मे अनेक एकार्थक देशी शब्दो का संकलन है। जैसे—छोटी तलाई के वाचक तीन शब्द है—खल्लर खिल्लूर छिल्लर शब्दा देश्या एकार्थका.।

इसी प्रकार और भी उदाहरण द्रष्टव्य है—

१ विदग्ध—छलिआ छइल्ल छप्पण्ण।

२. मा—अल्ला अव्वा अम्मा।

३ दुष्टघोडा—तडीति वा गलीति वा मरालीति वा एगट्ठा।

४. पैवद—पडियाणिया थिग्गलय छदतो य एगट्ठ।

कोश परम्परा मे प्राय यह देखा जाता है कि पुल्लिग शब्द लेने के बाद उसी का स्त्रीलिंग शब्द स्वतत्ररूप म नही लिया जाता। किंतु हमने स्त्रीलिंग एव पुल्लिग दोनो प्रकार के शब्दो को सगृहीत किया है। जस— पिल्लक-पिल्लिका, सिगक सिंगिका, कव्वटठ-कव्वट्ठी आदि आदि। इनको सगहीत करने का एक विशेष उद्देश्य यह भी था कि कही कही शब्द मे लिंग-परिवत्तन के साथ अथ-परिवत्तन भी हो जाता है। जैसे—हालाहल—स्वामी। हालाहला—ब्राह्मणी (कीट-विशेष)।

ओवासण, उवासणा और उपासना—ये तीनो एकाथक हैं। इनका अथ है—क्षुरकम। उपासना टीकाकारो द्वारा प्रयुक्त सस्कृतनिष्ठ शब्द है, किन्तु सस्कृत से अथ भिन्न होने के कारण यह देशी है। ऐसे अनेक सस्कृत-निष्ठ देशी शब्द इस कोश मे सगहीत हैं। जैसे—छेलापनक, परिपूणक आदि।

कोश का बाह्य स्वरूप

प्रस्तुत ग्रथ के मूल भाग मे लगभग दस हजार देशी शब्दो का सकलन है। प्राय शब्दा के साथ सदभ-स्थल भी निर्दिष्ट हैं जिससे पाठक उस अथ को भली भाति हृदयगम कर सके। जसे—

१ अतोवगडा नाम उवस्सयस्स अब्भतर अगण।
२ एरडइए माणे त्ति हडककायित श्वा।
३ कुब्बति निम्न क्षामभित्यथ।
४ रज्ज कागिणी भणति।

जहा अथ की स्पष्टता के लिए सदभ स्थल अपेक्षित या अत्यावश्यक नही समझे गय वहा केवल शब्द का अथ और प्रमाण का उल्लेख मात्र किया गया है।

इस देशी शब्दकोश का उद्देश्य आगम एव उसके व्याख्या-ग्रन्थो के देशी शब्दो को सकलित करना था किन्तु कुवलयमाला, पाइयलच्छीनाममाला, प्राकृत व्याकरण एव सतुवध के देशी शब्द भी मूल भाग म सकलित हैं।

प्रस्तुत कोश के साथ दो परिशिष्ट भी सलग्न हैं। प्रथम परिशिष्ट अवशिष्ट देशी शब्दो का है। इसम आगमेतर प्राकृत तथा अपभ्रश ग्रन्था के ३३८१ देशी शब्दो का समावेश है। ग्रन्थ के मूलभाग में हमने मूल ग्रन्थो का दो या तीन बार पारायण किया तथा अथ-निधारण की दृष्टि से भी मूलग्रन्थो का अनेक बार अवलोकन किया। इस परिशिष्ट मे हमने मूलग्रथ को नही देखा, किन्तु उनके सपादको ने जहा अन्त म देशी शब्दो की सूची दी है, अथवा शब्द-सूची म जिन शब्दो को देशीचिह्न स चिह्नित किया है, उन शब्दो का इसम सकलन कर दिया है। पाइअसद्दमहण्णवो के सकडो शब्द जो कोश के मूल भाग म नहीं आए उनको भी इसी के अन्तगत रखा है। त्रिविक्रम के प्राकृत-

शब्दानुशासन के अन्त मे १६०० देशी शब्दो की सूची है। उनमे से कुछ शब्द हेमचन्द्र के देशी सग्रह मे आ चुके है। शेष सभी शब्द इस परिशिष्ट मे समाविष्ट है। यह ग्रथ हमे बहुत बाद मे प्राप्त हुआ अत. हम इनके शब्दो को ग्रन्थ के मूल भाग मे समाविष्ट नही कर सके।

समीक्षात्मक एव आलोचनात्मक ग्रन्थो मे भी यदि कही देशी शब्दो की सूची मिली है, उन शब्दो को भी हमने इस परिशिष्ट मे सम्मिलित किया है। जैसे—'हरिभद्र के प्राकृत कथा साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन" मे लेखक 'भाषा शैली और उद्देश्य'—अध्याय के अन्तर्गत कुछ देशी शब्दो का सकेत करते है। वे कहते हैं—'यहा कुछ देशी शब्दो की तालिका दी जाती है। यद्यपि इन शब्दो मे कुछ शब्दो को सस्कृत से व्युत्पन्न किया जा सकता है पर मूलत इन शब्दो को देशी कहा गया है।' ऐसा कह कर लेखक ने लगभग १६३ शब्दो का अर्थ सहित उल्लेख किया है, जिनमे कुछ शब्द देशीनाममाला के भी हैं। इस प्रकार जहा भी हमे देशी शब्द मिले, उनका बिना सदर्भ एवं प्रमाण के अर्थ सहित सकलन कर दिया है। इस परिशिष्ट मे प्रयुक्त ग्रन्थो के नाम इस प्रकार हैं—

१. मुणिचन्द कहाणय, २ कसवहो, ३. वज्जालग्ग, ४. हरिभद्र के प्राकृत कथा साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन, ५ जबूसामिचरिउ, ६. पउमचरिय, ७, आख्यानकमणिकोश, ८ अपभ्रश काव्यधारा, ९ चउप्पन्नमहापुरिसचरिय, १० गउडवहो, ११ वड्ढमाणचरिउं, १२. सुदमणचरिउ, १३ रावणवह-महाकाव्यम्, १४ महापुराणम्, १५. णायकुमारचरिउ, १६ पउमचरिउ-भाग १ से ३, १७ पुहविचदचरिय, १८ करकडुचरिउ, १९ मयणपराजयचरिउ, २० जसहरचरिउ, २१ सिरिवालचरिउ, २२ प्राकृतशब्दानुशासन।

इस परिशिष्ट में एकत्रित कुछेक देशीशब्द विमर्शणीय है। किन्तु हमने तत् तत् ग्रन्थ के विद्वान् सपादको के चिन्तन को मान्य कर उन शब्दो का यहा अविकल सकलन कर दिया है। अधिक से अधिक देशी शब्द एक ही ग्रन्थ में प्राप्त हो, यह इस सकलन का उद्देश्य है। प्रत्येक शब्द की समीक्षा हमें अभिप्रेत नही रही। सुधी पाठक इस बात को ध्यान में रखें।

दूसरा परिशिष्ट देशी धातुओ से सम्बन्धित है। इसमें १७४५ धातुएं हैं। हमने सन्दर्भ सहित तथा बिना सन्दर्भ वाली— दोनो प्रकार की धातुओ को साथ में ही रखा है। इनमें प्राकृत व्याकरण की सभी आदेशप्राप्त धातुओ का समावेश है तथा आगम तथा आगमेतर साहित्य में अन्य विद्वानो द्वारा मान्य देशी धातुओ का भी सकलन है। जिस सस्कृत धातु को आदेश हुआ है उसे भी कोष्ठक में दिया गया है। यह परिशिष्ट छोटा होते हुए भी व्याकरण एवं धातुज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

पचाग प्रणति

विक्रम सवत २०४०। नाथद्वारा की ऐतिहासिक भूमि। मर्यादा महोत्सव की सम्पन्नता। एक गोष्ठी का आयोजन। इसका उद्देश्य था आगम के काय को गति देना। उसी समय आचाय श्री ने मुझे तथा कुछ साध्वियो को लाडनू भेजा। एक दिन ग्रथागार में जब मैंने साध्वियो समणियो एव मुमुक्षु बहिनो द्वारा किए गए आगम-काय के विविध पहलुओ को देखा तो चितन उभरा कि इस बिखरे काय को समेटना आवश्यक है। उस समय तीन कोशो को सम्पन्न करने का निश्चय किया। एकार्थक कोश और निरुक्तकोश तो उसी वर्ष प्रकाश में आ गए। देशी शब्दकोश का काय चालू था। देशी शब्दो के चयन और अथ निर्धारण के लिए शताधिक ग्रथो का अवलोकन आवश्यक था। अन्यान्य बाधाओ के कारण काय में गति नही आ सकी। काय स्थगित कर दिया गया। वि० स० २०४३ के लाडनू चातुर्मास में फिर काय प्रारम्भ किया, पर उसका नरन्तय नही रहा। वि० स० २०४५ का पूरा वर्ष (२०४४ चैत्र शुक्ला १ से २०४५ चैत्र शुक्ला १ तक) इस काय की फलश्रुति/निष्पत्ति का वर्ष रहा। इसमें काय की निरन्तरता और सघनता भी रही।

साध्वी अशोकश्री तथा साध्वी विमलप्रज्ञा इस काय में प्रारम्भ से ही सलग्न रही हैं। कुछेक अनिवाय कारणो से इन दो वर्षों में इनकी सलग्नता व्यवहित रही, किन्तु इन दोनो की सपूर्ति कर दी साध्वी सिद्धप्रज्ञा ने। इन्होंने जिस निष्ठा, उत्साह और आनन्दप्रवणता से काय किया वह स्तुत्य है। शारीरिक अस्वास्थ्य के बावजूद भी इनका पूरा समय इसी कार्य में नियोजित रहा। ये तन्मना होकर कोश काय के प्रत्येक अवयव की सपूर्ति में सलग्न रही। इस काय से इन्होंने अपनी उपादेयता को बरकरार रखा। विधि विधान के अनुसार आने जाने में इन्हें एक साध्वी का सहयोग अपेक्षित था और वह अपेक्षा पूरी की साध्वी सूरजकुमारी ने। व प्रसन्नता से इनके साथ आती और अपना पूरा समय आगम-स्वाध्याय में बिताती। इनकी अनुपस्थिति में पूण उत्साह एव प्रसन्नता से सहयोग किया अस्सी वर्षीया साध्वी सूवटाजी ने।

साध्वी निर्वाणश्री ने भी प्रारम्भ में कुछेक ग्रथो के देशी शब्द चयन में सहयोग दिया है।

समणी कुसुमप्रज्ञा प्रारम्भ से ही देशी शब्द-सकलन में सलग्न रही हैं। इस बार लगभग ८-१० माह का अधिकाश समय इस देशी शब्दकोश को सवारने में लगाया। कोश की समायोजना में इनका सहयोग बहुत मूल्यवान है। समणी नियोजिका मधुरप्रज्ञा ने समणी श्रुतप्रज्ञा को इनके साथ नियोजित कर इनके काय को सुगम बना डाला। समणी श्रुतप्रज्ञा ने अपने समय का पूरा उपयोग किया और पूण प्रसन्नता और उत्साह से सहयोग दिया। इनकी अनुपस्थिति में अन्यान्य समणियो का नियोजन भी रहा और सभी ने वक्तव्य

भावना मे महयोग किया।

मुमुक्षु वहिन निरजना, इदु, अमिता, मधु, आशा, जतन, गुलाव आदि-आदि ने देशीकोश के कार्डो की प्रतिलिपि करने तथा अन्यान्य कार्यो में पूर्ण महयोग दिया।

यह सारा कोशकार्य के सहभागियो का स्मरणमात्र है। इन सवके महयोग का स्मरण आत्मतोष की अनुभूति कराता है।

मैं श्रुत-परम्परा के सवाहक और सवर्धक प्राचीन आचार्यो तथा मुनिजनो के प्रति प्रणत हू, जिन्होने श्रुतपरम्परा को अविच्छिन्न रखने का मतत प्रयास किया है और उम अपने ज्ञानकणो से मीचा है, विकसित किया है। उन मवकी श्रुतोपामना की ही यह फलश्रुति है कि जैन माहित्य भडार उनके मारस्वत अवदान से भरा रहा है। उन्होने श्रुतमागर का जो मथन किया, वह अपूर्व है। उनकी ग्रन्थराशि से कुछेक ग्रन्थो का अवलोकन कर हमने इम कोश ग्रन्थ का निर्माण किया है। मैं सभी श्रुतसमृद्ध आचार्यो को श्रद्धासिक्त भाव से नमन करता हू।

इसी श्रुतपरम्परा के वर्तमान सवाहक तथा त्रिविध स्थविर भूमिकाओ के धनी अक्षर पुरुप है—आचार्य तुलसी और युवाचार्य महाप्रज्ञ। तेरापथ धर्मसघ को इनका मारस्वत अवदान अपूर्व है। आगम-सम्पादन इनका शलाका-कार्य है और है साहित्यिक प्रसाद जो तन-मन का कायाकल्प करने में ममर्थ है। उमी आगम-सम्पादन महाकार्य का यह कोशकार्य एक स्फुलिग है। ऐसे स्फुलिग अनेक है। आचार्य श्री ने उन स्फुलिगो के सवाहक अनेक मुनियो, माध्वियो और समणियो को तैयार किया है और अपने इन सहस्रकरो से कार्य करवा रहे है। नए-नए आयामो का मर्जन, पोपण और सरक्षण इन्ही घटको पर आवृत है। दोनो युगपुरुपो के मार्गदर्शन ने इस वहु आयामी आगम कार्य को सुगम वनाया है और कार्य की मथरता मे भी नई निष्पत्तियो की सर्जना की है। मैं उनके इस शाश्वतिक अवदान को सहस्रश: नमन करता हू।

तीन साध्वियो को इस कोश-कार्य मे नियोजित करने और उन्हे निरतर प्रोत्साहित करने मे साध्वी प्रमुखा श्री कनकप्रभाजी का महान् योग रहा है। कोश के यात्रापथ की निर्विघ्न सपूर्ति मे उनकी मगलभावना वहुत ही कार्यकर रही है। मैं उनके इस भावना-योग के प्रति प्रणत हू।

मैं उन सभी ग्रन्थकर्त्ताओ, व्याख्याकारो तथा कोशकारो के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हू, जिनके ग्रन्थो के अवलोकन से हमारा दुरूह कार्य सुगम वना, दृष्टि परिमार्जित हुई और नए-नए उन्मेष आते रहे।

अनेकात शोधपीठ के डाइरेक्टर डॉ० नथमल टाटिया ने इस ग्रन्थ की भूमिका लिखकर हमें उत्साहित किया है। अभी-अभी एक मेजर आपरेशन

से गुजरने के बावजूद भी उन्होंने समय निकाल कर भूमिका लिखी, यह उनका श्रुत-सेवा के प्रति बनी हुई श्रद्धा का ही परिणाम है। श्रुत की उपासना उनका जीवनमंत्र है। इसी मंत्र ने उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर लाकर खड़ा किया है। मैं उनकी प्रेरणा का बहुत मूल्यांकन करता हूं।

मुनि प्रमोदकुमारजी मेरे सहयोगी हैं। वे अपने कर्तव्य-पालन के प्रति जागरूक हैं। उन्होंने मुझे अन्यान्य कार्यों से मुक्त रखकर, निरंतर इसी कार्य में संलग्न रहने का अवकाश दिया। उनका सहयोग भी स्मरणीय है।

इसी प्रकार मुनि सुदर्शनजी, मुनि श्रीचन्दजी 'कमल', मुनि राजेन्द्र कुमारजी, मुनि प्रशांतकुमारजी आदि का सहयोग भी स्मृति-पटल पर अंकित है। उन सबको प्रणाम।

अन्त में पंचांग प्रणति उन सबको जिनका प्रत्यक्ष या परोक्ष सहयोग मुझे मिला है/मिल रहा है।

वि० सं० २०४५, नूतन वर्ष का पहला दिन —मुनि दुलहराज
चैत्र शुक्ला १/२, ता० १९-३-८८
जैन विश्व भारती, लाडनूं (राजस्थान)

प्रयुक्त ग्रन्थ सूची

अंगविज्जा—(प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, बनारस, सन् १९५७)।

अंतकृद्दशा—(अंगसुत्ताणि भाग ३, जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९७४)।

अंतकृद्दशा टीका—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन १९२०)।

अनुत्तरोपपातिकदशा—(अंगसुत्ताणि भाग ३, जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९७४)।

अनुत्तरोपपातिकदशा टीका—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १९२०)।

अनुयोगद्वार—(नवसुत्ताणि (५), जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८६)।

अनुयोगद्वार चूर्णि—(श्री ऋषभदेव केशरीमल श्वेताम्बर संस्था, रतलाम, सन् १९२८)।

अनुयोगद्वार मलधारीया टीका—(श्री केशरबाई ज्ञानमन्दिर, पाटण, सन् १९३९)।

अनुयोगद्वार हारिभद्रीया टीका—(सेठ देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, बम्बई, संवत् १९७३)।

अपभ्रंश काव्यधारा—(संपादक डॉ॰ प्रेमसुख जैन, डा॰ कृष्णकुमार शर्मा, सरस्वती पुस्तक भण्डार, अहमदाबाद, सन् १९७४)।

अभिधानचिंतामणि नाममाला—(श्री जैनसाहित्यवर्धक सभा, अहमदाबाद, वि॰ सं॰ २०३२)।

अमरकोश—(चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी, सन् १९६८)।

अल्पपरिचित सैद्धान्तिक शब्दकोश—(संपा॰ आचार्य आनन्द सागर सूरि, देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, सूरत, प्रथम संस्करण, १९७४)।

अष्टाध्यायी—(पाणिनि'ज ग्रैमटिक, १९७७, जाज ओल्म्स वरलेग, हिलडेशियम, न्यूयार्क)।

आख्यानक-मणिकोश—(संपा॰ मुनि पुण्यविजय प्राकृत ग्रन्थ परिषद, वाराणसी, सन् १९६२)।

आचारांग—(अंगसुत्ताणि भाग १, जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९७४)।

आचारांग चूर्णि—(श्री ऋषभदेव केशरीमल श्वे॰ संस्था, रतलाम, सन् १९४१)।

आचारागचूला—(अगसुत्ताणि भाग १, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९७४)।

आचाराग टीका—(मोतीलाल वनारसीदास, दिल्ली, मन् १९७८)।

आचाराग निर्युक्ति—(मोतीलाल वनारसीदास, दिल्ली, सन् १९७८)।

आवश्यक—(नवसुत्ताणि (५), जैन विश्व भारती, लाडनू, मन् १९८६)।

आवश्यक चूर्णि १—(श्री ऋषभदेव केशरीमल श्वे मस्था, रतलाम, सन् १९२८)।

आवश्यक चूर्णि २—(श्री ऋषभदेव केशरीमल श्वे सम्था, रतलाम, मन् १९२९)।

आवश्यक टिप्पणकम्—(शाह नगीनभाई घेलाभाई जवेरी, वम्बई)।

आवश्यक निर्युक्ति—(भैरुलाल कन्हैयालाल कोठारी धार्मिक ट्रस्ट, वम्बई, सवत् २०३८)।

आवश्यक निर्युक्तिदीपिका—(श्री विजयदानसूरीश्वर जैनग्रथमाल, सूरत, मन् १९३९)।

आवश्यक मलयगिरि टीका—(आगमोदय समिति, वम्बई, मन् १९२८)।

आवश्यक हारिभद्रीया टीका १—(भैरुलाल कन्हैयालाल कोठारी धार्मिक ट्रस्ट, वम्बई, सवत् २०३८)।

आवश्यक हारिभद्रीया टीका २—(भैरुलाल कन्हैयालाल कोठारी धार्मिक ट्रस्ट, वम्बई, सवत् २०३८)।

इन्ट्रोडक्शन टु कम्पेरेटिव फिलोलोजी—(मम्पा पी डी गुणे)।

इसिभासियाइ—(सुधर्मा ज्ञान मन्दिर, वम्बई, मन् १९६३, श्री महावीर जैन विद्यालय, वम्बई, प्रथम सस्करण, मन् १९८४)।

उत्तराध्ययन—(नवसुत्ताणि (५), जैन विश्व भारती, लाडनू, द्वितीय सस्करण, सन् १९८६)।

उत्तराध्ययन चूर्णि—(देवचन्द लालभाई, जैन पुस्तकोद्धार, वम्बई, स १९९३)।

उत्तराध्ययन निर्युक्ति—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, भाडागार सस्था, वम्बई, स १९७२, ७३)।

उत्तराध्ययन शान्त्याचार्य टीका—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, भाडागार सस्था, वम्बई, स १९७२)।

उत्तराध्ययन सुखबोधा टीका—(पुष्पचन्द्र खेमचन्द्र, वलाद, वीर स. २४६७)।

उपासकदशा—(अंगसुत्ताणि भाग ३, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९७४)।

पासकदशा टीका—(श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय, कोटा, सन् १९४६)।

र्दू हिन्दी शब्द कोश—(अंजुमन तरक्की उर्दू (हिंद), नई दिल्ली, सन् १९५५)।

ओघनियुक्ति—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १९१९, देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, सूरत, स० १९८४)।

ओघनियुक्ति टीका—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन १९१९, देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, सूरत, स० १९८४)।

ओघनियुक्तिभाष्य—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १९१९ देवचन्द लालभाई, जैन पुस्तकोद्धार, सूरत, सन १९८४)।

ऑब्जर्वेशन्स आन हेमचन्द्राज देशीनाममाला—(सम्पा पी एल वैद्य एनेल्स ऑफ भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीटयूट)।

औपपातिक—(उवगसुत्ताणि (४) खण्ड १, जैन विश्व भारती, लाडनूं सन १९८७)।

औपपातिक टीका—(पण्डित दयाविमलजी ग्रन्थमाला, द्वितीय सस्करण, स १९९४)।

कमवहो—(सम्पा डॉ ए एन उपाध्याय, मोतीलाल बनारसीदास, द्वितीय सस्करण, १९६६)।

कन्नड हिन्दी शब्दकोश—(सम्पा डॉ एन एस दक्षिणामूर्ति हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रथम सस्करण, सन १९७१)।

कन्नडीज वर्ड्ज इन देशी लेक्सिकन्स—(सम्पा ए एन उपाध्ये, एनेल्स ऑफ भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीटयूट)।

कम्परेटिव ग्रामर ऑफ गौडियन लैंग्वेजिज—(सम्पा हानले)।

कम्परेटिव ग्रामर ऑफ मॉडर्न आयन लैंग्वेजिज—(सम्पा जान बीम्स)।

करकण्डचरिउ—(ले मुनि कनकामर सम्पा डॉ हीरालाल जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, सन १९६४)।

कल्पसूत्र—(सम्पा मुनि पुण्यविजयजी, साराभाई मणिलाल नवाब, अहमदाबाद, सन १९५२)।

कुवलयमाला भाग १, २—(सम्पा आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, सन् १९५९)।

कुवलयमालाकहा का सांस्कृतिक अध्ययन—(सम्पा डॉ प्रेमसुमन जैन, प्राकृत जैन शास्त्र एव अहिंसा शोध-सस्थान, वैशाली, सन् १९७५)।

गउडवहो—(वम्बई सस्कृत सिरीज, स० १८८७)।

गच्छाचारपइण्णय—(श्री महावीर जैन विद्यालय, वम्बई, प्रथम सस्करण, सन् १९८४)।

चउप्पन्नमहापुरिसचरिय—(सम्पा. पण्डित अमृतलाल मोहनलाल भोजक, प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, अहमदावाद, सन् १९६१)।

चदावेज्झयपइण्णय—(श्री महावीर जैन विद्यालय, वम्वई, प्रथम सस्करण, सन् १९८४)।

चन्द्रप्रज्ञप्ति—(उवगसुत्ताणि (४) खण्ड-२, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९८८)।

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति—(उवगसुत्ताणि (४), खण्ड-२, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९८८)।

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति टीका—(नगीनभाई घेलाभाई झवेरी, वम्वई, सन् १९२०)।

जम्बूसामिचरिउ—(सम्पादक डॉ विमलप्रकाश जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, सन् १९४४)।

जसहरचरिउ—(ले महाकवि पुष्पदन्त सम्पा डॉ हीरालाल जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, सन् १९७२)।

जीतकल्प—(ववलचन्द्र केशवलाल मोदी, अहमदावाद, स. १९९४)।

जीतकल्पभाष्य—(ववलचन्द्र केशवलाल मोदी, अहमदावाद, स १९९४)।

जीतकल्प विषमपद व्याख्या।

जीवाजीवाभिगम—(उवगसुत्ताणि (४), खण्ड १, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९८७)।

जीवाजीवाभिगम टीका—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, स १९९५)।

ज्ञाताधर्मकथा—(अगसुत्ताणि भाग ३, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९७४)।

ज्ञाताधर्मकथा टीका—(श्री सिद्धचक्र साहित्य प्रचारक समिति, सूरत, सन् १९५२)।

डिंगलकोश—(सम्पादक डॉ नारायणसिंह भाटी, राजस्थान शोध सस्थान, जोधपुर, द्वितीय सस्करण, सन् १९७८)।

णायकुमारचरिउ—(ले पुष्पदन्त, सम्पा डॉ हीरालाल जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, सन् १९७२)।

तदुलवेयालियपइण्णय—(श्री महावीर जैन विद्यालय, वम्वई, प्रथम सस्करण, सन् १९८४)।

तित्योगालीपइण्णय—(श्री महावीर जैन विद्यालय, बम्बई, प्रथम संस्करण, सन १९८४)।
तुलसी मञ्जरी—(जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८३)।
तुलसीशब्दसागर—(सम्पा हरगोविन्द)।
दशवैकालिक—(जैन विश्व भारती, लाडनूं, द्वितीय संस्करण, सन् १९७४)।
दशवैकालिक अगस्त्यसिंहचूर्णि—(प्राकृत ग्रन्थ परिषद, वाराणसी, सन् १९७३)।
दशवैकालिक चूलिका—(जैन विश्व भारती, लाडनूं, द्वितीय संस्करण, सन १९७४)।
दशवैकालिक जिनदासचूर्णि—(श्री ऋषभदेव केशरीमल श्वेताम्बर संस्था, रतलाम, सन १९३३)।
दशवैकालिक निर्युक्ति—(प्राकृत ग्रन्थ परिषद, वाराणसी, सन् १९७३)।
दशवैकालिक हारिभद्रीया टीका—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, सूरत)।
दशाश्रुतस्कन्ध—(नवसुत्ताणि (५), जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८६)।
दशाश्रुतस्कन्ध चूर्णि—(श्री मणिविजयजीगणिग्रन्थमाला, भावनगर, सं २०११)।
दशाश्रुतस्कन्ध नियुक्ति—(श्री मणिविजयजीगणिग्रन्थमाला, भावनगर, सं २०११)।
देशीनाममाला—(संपा० आर पिशेल, बोम्बे संस्कृत सिरीज १७, संस्कृत विभाग, दूसरा संस्करण, सन् १९३८)।
देशीनाममाला का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन—(सम्पा शिवमूर्ति शर्मा, देवनागर प्रकाशन, जयपुर)।
देशीशब्दसंग्रह—(संपा० बेचरदास दोशी, श्री फार्बस गुजराती सभा, मुंबई, प्रथम संस्करण, सन् १९४७)।
नंदी—(नवसुत्ताणि (५), जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८६)।
नंदी चूर्णि—(प्राकृत टैक्स्ट सोसायटी, बनारस, सन् १९६६)।
नंदी टिप्पणक—(प्राकृत टैक्स्ट सोसायटी, बनारस, सन् १९६६)।
नंदी टीका—(प्राकृत टैक्स्ट सोसायटी, बनारस, सन् १९६६)।
नाट्यशास्त्र—(भरतमुनि)।
निरयावलिका—(उवंगसुत्ताणि (४), खण्ड २, जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८८)।

निरयावलिका टीका—(आगमोदय समिति, बम्बई)।

निरुक्तम्—(यास्क)।

निशीथ—(नवसुत्ताणि (५), जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८६)।

निशीथचूर्णि भाग १-४—(सन्मति ज्ञानपीठ, दूसरा सस्करण, सन् १९८२)।

निशीथभाष्य—(सन्मति ज्ञानपीठ, दूसरा सस्करण, सन् १९८२)।

पउमचरिउ भाग १ से ३—(ले स्वयम्भूदेव, सम्पा डॉ. हरिवल्लभ चुन्नीलाल भायाणी, सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ, भारतीय विद्या भवन, बम्बई-७, वि स २००६, २०१७)।

पउमचरिय—(सम्पा डॉ हर्मन जेकोबी, मुनि पुण्यविजयजी, प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, अहमदाबाद, सन् १९६८)।

पचकल्पभाष्य—(आगमोद्धारक ग्रन्थमाला, पाटी, वि स २०२८)।

पचवस्तु—हस्तलिखित।

पाइयलच्छीनाममाला—(सम्पा. बेचरदास दोशी, श्री शादीलाल जैन, बम्बई-३, सन् १९६०)।

पाइयसद्दमहण्णवो—(पण्डित हरगोविन्ददास सेठ, प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी, द्वितीय सस्करण, ईस्वी सन् १९६३)।

पिण्डनिर्युक्ति—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, बम्बई, सन् १९१८)।

पिण्डनिर्युक्ति टीका—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, बम्बई, सन् १९१८)।

पिण्डनिर्युक्ति भाष्य—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, बम्बई, सन् १९१८)।

पुहइचन्दचरिय—(ले. आचार्य शान्तिसूरि, सम्पा मुनिश्री रमणीक विजय, प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, अहमदाबाद, सन् १९७२)।

प्रज्ञापना—(उवगसुत्ताणि (४) खण्ड-२, जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८८)।

प्रज्ञापना टीका—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १९१८)।

प्रवचनसारोद्धार—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, द्वितीय सस्करण, स १९८१)।

प्रवचनसारोद्धार टीका—(देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार, द्वितीय सस्करण, स १९८१)।

प्रश्नव्याकरण—(अगसुत्ताणि भाग ३, जन विश्व भारती, लाडनू, सन १६७४)।

प्रश्नव्याकरण टीका—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन १६१६)।

प्राकृतलक्षण—(चण्ड)।

प्राकृत वडस विद प्राकृत टर्मीनेशन्स—(सम्पा पी एल वैद्य)।

प्राकृत व्याकरण—(हेमचन्द्र, जैन दिवाकर दिव्यज्योति कार्यालय, ब्यावर, स २०१६)।

प्राकृत शब्दानुशासन—(त्रिविक्रमदेव, सम्पा पी एल वैद्य, जन संस्कृति संरक्षक संघ, शोलापुर, सन १६५४)।

प्राचीनकर्मग्रन्थ टीका—(जन आत्मानन्द सभा भावनगर वि स १६७२)।

बृहत्कल्प—(नवसुत्ताणि (५), जन विश्व भारती, लाडनू, सन १६८६)।

बृहत्कल्प चूर्णि—(हस्तलिखित, लाडनू भडार)।

बृहत्कल्प टीका—(जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर सन् १६३६)।

बृहत्कल्प भाष्य—(जैन आत्मानन्द सभा भावनगर, सन् १६३६)।

भगवती—(अगसुत्ताणि भाग २ जैन विश्व भारती, लाडनू, सन १६७४)।

भगवती टीका पत्र १-३२७—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १६१८)।

भगवती टीका, पृष्ठ ६०१-१२०८—(ऋषभदेव केशरीमल श्वेताम्बर संस्था, रतलाम, द्वितीय संस्करण, सन् १६४०)।

भत्तपरिण्णापइण्णय—(श्री महावीर जन विद्यालय, बम्बई, द्वितीय संस्करण, सन् १६८४)।

भविसयत्तकहा तथा अपभ्रंश कथा काव्य—(सम्पादक देवेन्द्रकुमार शास्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, सन् १६७०)।

भारतीय भाषाएं—(सम्पा कैलाशचन्द्र भाटिया, दिल्ली, सन् १६८१)।

भाषा विज्ञान कोश—(डॉ भोलानाथ तिवारी)।

मयणपराजयचरिउ—(सं हरिदेव, सम्पा डॉ हीरालाल जन, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी सन १६६२)।

मरणविभत्तिपइण्णय—(श्री महावीर जन विद्यालय बम्बई प्रथम संस्करण, सन् १६८४)।

महापच्चक्खाणपइण्णय—(श्री महावीर जन विद्यालय, बम्बई प्रथम संस्करण, सन् १६८४)।

महापुराण—(ले. महाकवि पुष्पदन्त, सम्पा परशुराम शर्मा, माणिकचन्द्र दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला समिति) ।

महाभारत—(भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना, सन् १९६१) ।

मुणिचन्द कहाणय—(सम्पा के आर चन्द्र, जय भारत प्रकाशन एण्ड कं., अहमदाबाद, द्वितीय संस्करण, सन् १९७७) ।

यशस्तिलकचम्पू का सांस्कृतिक अध्ययन— (सम्पा गोकुलचन्द्र जैन, अमृतसर)।

राजप्रश्नीय—(उवगसुत्ताणि (४) खण्ड १, जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८७) ।

राजप्रश्नीय टीका—(गूर्जर ग्रन्थरत्न कार्यालय, अहमदाबाद, वि. स. १९९४) ।

राजस्थानी शब्दकोष—(सम्पा सीताराम, राजस्थानी शोध संस्थान, जोधपुर, प्रथम संस्करण, स. २०१८) ।

रावणवहमहाकाव्य—(सम्पा. डॉ राधागोविन्द, संस्कृत कॉलेज, कलकत्ता, सन् १९५९) ।

लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया—(सम्पा. ग्रियर्सन) ।

वज्जालग्गम्—(सम्पा माधव वासुदेव पटवर्धन, प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, अहमदाबाद, प्रथम संस्करण, सन् १९६९) ।

वड्ढमाणचरिउ—(सम्पादक डॉ. राजाराम जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, सन् १९७५) ।

वाग्भटालंकार—(चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, सन् १९५७) ।

वाचस्पत्यम् भाग ६—(सम्पादक तारानाथ, चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी, तृतीय संस्करण, स. २०२५) ।

विपाकश्रुत—(अंगसुत्ताणि भाग ३, जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९७४) ।

विपाकश्रुत टीका—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १९२०) ।

विलसन्स फिलोलोजिकल लेक्चर्स—(सम्पा. श्री आर जी भंडारकर) ।

विशेषावश्यकभाष्य—(दिव्य दर्शन कार्यालय, अहमदाबाद, वीर स. २४८९) ।

विशेषावश्यकभाष्य कोट्याचार्य टीका—(ऋषभदेव केशरीमल, रतलाम, सन् १९३६) ।

विशेषावश्यकभाष्य मलधारीहेमचन्द्र टीका—(दिव्य दर्शन कार्यालय, अहमदाबाद, वीर स. २४८९) ।

व्यवहार—(नवसुत्ताणि (५), जैन विश्व भारती, लाडनूं, सन् १९८६) ।

व्यवहारभाष्य टीका—(वकील केशवलाल प्रेमचन्द, अहमदाबाद, सन् १९२६)।

शब्दकल्पद्रुम भाग १ से ५—(सम्पा राधाकातदेव, चौखम्बा सस्कृत सिरीज, वाराणसी, तृतीय सस्करण, वि स २०२४)।

शब्दार्थ कौस्तुभ—(रामनारायणलाल अग्रवाल, प्रयाग)।

सक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर—(सम्पा रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रथम सस्करण, सन् १९६६)।

सथारगपइण्णय—(श्री महावीर जैन विद्यालय, बम्बई, प्रथम सस्करण, सन १९८४)।

सस्कृत इगलिश डिक्शनरी—(सम्पा वी एस आप्टे, प्रसाद प्रकाशन, पूना)।

सस्कृत इगलिश डिक्शनरी—(सम्पा मानियर विलियम्स)।

सस्कृत प्राकृत जैन व्याकरण और कोश की परम्परा—(श्री कालूगणी जन्म शताब्दी समारोह समिति, छापर, सन् १९७७)।

समवायाग—(अगसुत्ताणि भाग ३, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९७४)।

समवायाग टीका—(कातिलाल चुन्नीलाल, अहमदाबाद, सन् १९३८)।

सारावलीपइण्णय—(श्री महावीर जैन विद्यालय, बम्बई, प्रथम सस्करण, सन् १९८४)।

सिरिवालचरिउ—(ले नरसेन देव, सम्पा डा देवेन्द्रकुमार जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी, सन १९७४)।

सुदंसणचरिउ—(ले नयनन्दी, सम्पा डॉ हीरालाल जैन, प्राकृत शोध-सस्थान, वैशाली, सन् १९७०)।

सूत्रकृताग—(अगसुत्ताणि भाग १, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९७४)।

सूत्रकृताग चूर्णि (प्रथमश्रुतस्कन्ध)—(प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, वाराणसी, सन् १९७५)।

सूत्रकृताग चूर्णि (द्वितीय श्रुतस्कन्ध)—(ऋषभदेव केशरीमल श्वेतांबर संस्था, रतलाम, सन् १९४१)।

सूत्रकृताग टीका १ (प्रथम श्रुतस्कन्ध)—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १९१९)।

सूत्रकृताग टीका २ (द्वितीय श्रुतस्कन्ध)—(श्री गोडी पार्श्वनाथ जैन ग्रन्थमाला, सन् १९५३)।

सूत्रकृताग निर्युक्ति—(मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, सन् १९७८)।

सूरशब्दसागर—(सम्पा हरदेव बाहरी, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सस्करण, सन् १९८१)।

सूर्यप्रज्ञप्ति—(उवगसुत्ताणि (४), जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९८८)।

सूर्यप्रज्ञप्ति टीका—(आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १९१९)।

सेतुवन्ध—(सम्पा. पण्डित शिवदत्त, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, सन् १९८२)।

स्टडीज इन हेमचन्द्राज देशीनाममाला—(सम्पा हरिवल्लभ सी भयाणी, पी वी. रिसर्च इस्टीट्यूट, जैनाश्रम हिन्दी यूनिवर्सिटी, बनारस)।

स्थानाग—(अगसुत्ताणि भाग १, जैन विश्व भारती, लाडनू, सन् १९७४)।

स्थानाग टीका—(सेठ माणेकलाल चुनीलाल, अहमदावाद, सन् १९३७)।

हरिभद्र के प्राकृत कथा साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन—(सम्पा. डॉ. नेमीचद शास्त्री, प्राकृत शोध सस्थान, वैशाली, सन् १९६५)।

हिन्दीशब्दसागर ११ भाग—(सम्पा श्यामसुन्दर, शम्भुनाथ वाजपेयी, नागरी मुद्रण, वाराणसी, प्रथम सस्करण, वि सं. २०२२)।

हिन्दी शब्दानुशासन—(सम्पा किशोरीदास वाजपेयी)।

संकेत सूची

अंत	अंतकृद्दशा
अंतटी	अंतकृद्दशा टीका
अंवि	अंगविज्जा
अचि	अभिधानचिंतामणि नाममाला
अनु	अनुत्तरौपपातिकदशा
अनुटी	अनुत्तरौपपातिकदशा टीका
अनुद्वा	अनुयोगद्वार
अनुद्वाचू	अनुयोगद्वार चूर्णि
अनुद्वामटी	अनुयोगद्वार मलधारीयटीका
अनुद्वाहाटी	अनुयोगद्वार हारिभद्रीयटीका
आ	आचारांग
आचू	आचारांगचूर्णि
आचूला	आचारांगचूला
आटी	आचारांग टीका
आनि	आचारांग निर्युक्ति
आव	आवश्यकसूत्र
आवचू १	आवश्यक चूर्णि १
आवचू २	आवश्यक चूर्णि २
आवटि	आवश्यक टिप्पणकम
आवदी	आवश्यक निर्युक्तिदीपिका
आवनि	आवश्यक निर्युक्ति
आवमटी	आवश्यक मलयगिरीटीका
आवहाटी १	आवश्यक हारिभद्रीयटीका १
आवहाटी २	आवश्यक हारिभद्रीयटीका २
इ	इसिभासियाइं
उ	उत्तराध्ययन
उचू	उत्तराध्ययन चूर्णि
उनि	उत्तराध्ययन निर्युक्ति
उपा	उपासकदशा

उपाटी	उपासकदशा टीका
उशाटी	उत्तराध्ययन शान्त्याचार्यटीका
उसुटी	उत्तराध्ययन सुखबोधा टीका
ओटी	ओघनिर्युक्ति टीका
ओनि	ओघनिर्युक्ति
ओभा	ओघनिर्युक्तिभाष्य
औप	औपपातिक
औपटी	औपपातिक टीका
कु	कुवलयमाला
ग	गच्छाचारपइण्णय
च	चदावेज्झयपइण्णय
चन्द्र	चन्द्रप्रज्ञप्ति
जबू	जबूद्वीपप्रज्ञप्ति
जबूटी	जबूद्वीपप्रज्ञप्ति टीका
जीत	जीतकल्प
जीभा	जीतकल्पभाष्य
जीव	जीवाजीवाभिगम
जीवटी	जीवाजीवाभिगम टीका
जीविप	जीतकल्प विषमपदव्याख्या
ज्ञा	ज्ञाताधर्मकथा
ज्ञाटी	ज्ञाताधर्मकथा टीका
तदु	तदुलवेयालियपइण्णय
ति	तित्थोगालीपइण्णय
द	दशवैकालिक
दअचू	दशवैकालिक अगस्त्यसिहचूर्णि
दचूला	दशवैकालिकचूलिका
दजिचू	दशवैकालिक जिनदासचूर्णि
दनि	दशवैकालिक निर्युक्ति
दश्रु	दशाश्रुतस्कन्ध
दश्रुचू	दशाश्रुतस्कन्ध चूर्णि
दश्रुनि	दशाश्रुतस्कन्ध निर्युक्ति
दहाटी	दशवैकालिक हारिभद्रीया टीका
दे	देशीनाममाला, देशीशब्दसग्रह
नदीचू	नदी चूर्णि
नदीटि	नदी टिप्पणक

नदीटी	नदी टीका
नि	निशीथ
निचू १, २, ३, ४	निशीथचूर्णि भाग १ से ४
निभा	निशीथभाष्य
निर	निरयावलिका
निरटी	निरयावलिका टीका
पक	पचकल्पभाष्य
पव	पचवस्तु
पा	पाइयलच्छीनाममाला
पिटी	पिण्डनियुक्ति टीका
पिनि	पिण्डनियुक्ति
पिभा	पिण्डनियुक्ति भाष्य
प्र	प्रश्नव्याकरण
प्रना	प्रज्ञापना
प्रज्ञाटी	प्रज्ञापना टीका
प्रटी	प्रश्नव्याकरण टीका
प्रसा	प्रवचनसारोद्धार
प्रसाटी	प्रवचनसारोद्धार टीका
प्रा	प्राकृतव्याकरण
प्राक	प्राचीनकमग्रन्थ टीका
ब	बृहत्कल्प
बृचू	बृहत्कल्प चूर्णि
बृटी	बृहत्कल्प टीका
बृभा	बृहत्कल्प भाष्य
भ	भगवती
भटी	भगवती टीका
भत्त	भत्तपरिण्णापइण्णय
म	मरणविभत्तिपइण्णय
महा	महापच्चक्खाणपइण्णय
राज	राजप्रश्नीय
राजटी	राजप्रश्नीय टीका
विपा	विपाकश्रुत
विपाटी	विपाकश्रुत टीका
विभा	विशेषावश्यकभाष्य
विभाकोटी	विशेषावश्यकभाष्य कोटयाचार्यटीका

विभामहेटी	विशेपावश्यकभाष्य मलधारीहेमचन्द्रटीका
वृ	देशीनाममालावृत्ति
व्य	व्यवहार
व्यभाटी १-१०	व्यवहारभाष्य टीका भाग १-१०
सं	सथारगपइण्णय
सम	समवायाग
समटी	समवायाग टीका
सा	सारावलीपइण्णय
सू	सूत्रकृताग
सूचू-१	सूत्रकृतांग चूर्णि, प्रथमश्रुतस्कध
सूचू-२	सूत्रकृताग चूर्णि, द्वितीयश्रुतस्कध
सूटी-१	सूत्रकृताग टीका प्रथमश्रुतस्कन्ध
सूटी-२	सूत्रकृतांग टीका द्वितीयश्रुतस्कध
सूनि	सूत्रकृताग निर्युक्ति
सूर्य	सूर्यप्रज्ञप्ति
सूर्यटी	सूर्यप्रज्ञप्ति टीका
से	सेतुबन्ध
स्था	स्थानाग
स्थाटी	स्थानाग टीका

अनुक्रम

देशी शब्दकोश

अअल—नि स्नेह, स्नेह रहित (दे १।१३)।

अइगय—१ मार्ग का पश्चाद भाग। २ समागत। ३ प्रविष्ट (दे १।५७)।

अइण—गिरि-तट, तराई, पहाड का निम्न भाग (दे १।१०)।

अइणिअ—लाया हुआ (दे १।२४)।

अइर—१ अतिरोहित (पिनि ५६०)। २ गाव का मुखिया, राज्य द्वारा नियुक्त गाव का अधिकारी (दे १।१६)।

अइरजुवइ—नववधू (दे १।४८)।

अइराउल—स्वामीकुल-'देशीपदमेतत् (प्रज्ञाटी प २५३)।

अइराणी—१ इद्राणी (अवि पृ २२३ दे १।५८)। २ सौभाग्य प्राप्त करने के लिए इद्राणी का व्रत करने वाली स्त्री (दे १।५८)।

अइरिप—कथाबध, कहानी (दे १।२६)।

अइरिका—देवी विशेष, इद्राणी (अवि पृ ६६)।

अइहारा—विद्युत, बिजली (दे १।३४)।

अक—निकट (दे १।५)।

अककरेलुय—जलज-वनस्पति (आचूला १।११३)।

अकार—सहायता मदद (दे १।६)।

अकिअ—आलिंगन (दे १।११)।

अकिल—नतक (ज्ञाटी प ४४)।

अकिल्ल—नट (ओपटी पृ ४)।

अकुसइअ—अकुश के आकार वाला (दे १।३८)।

अकेल्ल—नट (निचू २ पृ ४६८)।

अकेल्लण—चाबुक विशेष (जबू ३।१०६)।

अकेल्लि—अशोक वृक्ष (दे १।७)।

अकोल्ल—१ अकोठ वृक्ष (प्रज्ञा १।३५।१)। २ गुच्छ-विशेष (प्रज्ञा १।३७।५)। ३ नतक (ज्ञाटी प ४६)।

अगयड्ढण—रोग (दे १।४७)।

अ गयलिज्ज—शरीर का मोडना (दे १।४२)।

अंगारइय—घुण कीट द्वारा खाया हुआ—'घुणकाणिय अगारइय वा वुत्तय होति' (निचू ४ पृ ६६)।

अंगालिअ—ईख का टुकडा, गडेरी (दे १।२८)।

अंगुजट्ठ—अगूठा (आचू पृ ३५२)।

अंगुट्ठी—१ घूघट—'रगम्मि नच्चियाए, अलाहि अगुट्ठिकरणेण' (उसुटी प ५४, दे १।६)। २ अगूठा (प्रसा २००)।

अंगुत्थल—अगूठी (दे १।३१)।

अंगुलिणी—प्रियगु, वृक्ष-विशेष (दे १।३२)।

अंगोहली—१ देश-स्नान, शरीर को पोछना, हाथ-मुह आदि धोना (नदीटि पृ १३४)।

अंगोहलेऊण—देश-स्नान कराकर—'अगोहलेऊण दारग पेसेइ' (व्यभा १० टी प ५२)।

अंघोलि—देश-स्नान, शरीर को पोछना, हाथ-मुह आदि धोना (आवचू १ पृ ५४५)।

अंचित—दुर्भिक्ष—'अचित नाम दुर्भिक्षम्' (आवटि प ५३)।

अंचिय—१ नाट्य का एक प्रकार—'नट्ट चउव्विह—अचिय रिभिय आरभड भसोल ति' (निचू ४ पृ २)। २ दुर्भिक्ष (निचू २ पृ ११९)।

अंछण—विस्तार, फैलाव (निचू २ पृ २२३)।

अंछणय—विस्तार, फैलाव (निभा १५२९)।

अंछणिका—रज्जु-विशेष (अंवि पृ ११५)।

अंछिय—आकृष्ट, खीचा हुआ (प्र १।२९, दे १।१४)।

अंजणइसिआ—तमाल का वृक्ष (दे १।३७)।

अंजणई—वल्ली-विशेष (प्रज्ञा १।४०।५)।

अंजणईस—तमाल का वृक्ष (दे १।३७)।

अंजणिआ—तमाल का वृक्ष (दे १।३७)।

अंजणी—१ आभूषण-विशेष (अवि पृ १८३)। २. भाड-विशेष (अवि पृ २६०)।

अंजणेकसक—वनस्पति-विशेष (अवि पृ ७०)।

अंजस—ऋतु (दे १।१४)।

अंडअ—मत्स्य (दे १।१६)।

अंतरिज्ज—कटीसूत्र, करधनी (दे १।३५)।

अतरिया—समाप्ति, अत (जवू २)।

अतालूहण—प्रिय-'अतालूहणा मम एस पुत्तो' (कु पृ ४७)।

अतोहरी—दूती (दे १।३५)।

अतेल्ली—१ मध्य। २ जठर, पेट। ३ तरग (दे १।५५)।

अतोखरियत्ता—१ नगर मे रहने वाली वेश्या। २ विशिष्ट-वेश्या (भ १५।१८६)—'अताखरियत्ताए त्ति नगराभ्यन्तर-वेश्यात्वेन' विशिष्टवेश्यात्वेनत्यये (टी पृ १२७६)।

अतोवगडा—घर का आगन (ब २।१)—'अतोवगडा नाम उवस्सयस्स अब्भतर अगण' (चू प १४१)।

अतोहुत्त—अधोमुख (दे १।२१)।

अधधु—कूप, कुआ (दे १।१८)।

अधक—फल विशेष वृक्ष विशेष (अवि पृ २३८)।

अधग—वृक्ष (भ १८।६८)।

अधगवण्हि—स्थूल अग्नि (भ १८।६५)।

अधार—अधकार (पव २५७)।

अधारइअ—अधापन (आचू पृ ३७२)।

अधिया—चतुरिन्द्रिय जतु विशेष (भ १५।१८)।

अबकधूवि—खाद्यपदार्थ विशेष (अवि पृ ७१)।

अबकूणग—आम्रफल (भटी पृ १२५७)।

अबकोइलिया—१ आम्रविष्ठा। २ आम की छाल के टुकडे (दअचू पृ २३)।

अबखुज्ज—तलवे का मध्य भाग—यदाम्रकुब्ज पादतलमध्यम' (बटी पृ १०६२)।

अबट्टिक—भोज्य विशेष—अबट्टिकघतउण्हे पोवलिका ' (अवि पृ २४६)।

अबड—कठिन (दे १।१६)।

अबपिडी—भोज्य विशेष (अवि पृ ७१)।

अबप्पहार—प्रहार से दु खी (उशाटी प १६३)।

अबमसी—गूदा हुआ बासी गीला आटा—अवसमीत्यत्र सकारमकारयोर्व्यत्यये अब मसीति केचित पठति (दे १।३७ व)।

अबर—मत्स्य का मद—अम्बरशब्देनात्र मत्स्यमदोऽभिधीयते स हि किलात्यन्त सुगधो भवति (आवटि प ६५)।

अंबसमी—गूंदा हुआ वासी गीला आटा (दे १।३७)।
अंबाडग—बहुबीज वाला आम्रातक फल (प्रज्ञा १।३६)।
अंबाडगधूवि—खाद्यपदार्थ-विशेष (अवि पृ ७१)।
अंबाडिय—तिरस्कृत (वृटी पृ ५४)।
अंबिर—आम्र (दे १।१५)।
अंबिलिका—इमली (अवि पृ ७०)।
अंबुसु—सिंह से भी अति बलवान पशु, शरभ (दे १।११)।
अंबेट्टिआ—मुष्टिद्यूत, बालकों द्वारा मुट्ठी में खेला जाने वाला जूआ-'मा रम अबेट्टिआइ पुत्त ! तुम' (दे १।७ वृ)।
अंबेट्टी—मुष्टिद्यूत, बच्चों की क्रीडा-विशेष जो 'एकीबेकी' के रूप में खेली जाती है (दे १।७)।
अंबेल्ली—खट्टी राब-'एहि किराइ सीतलीहोति अंबेल्ली' (आवचू १ पृ १११)।
अंबेसी—घर का द्वार-फलक (दे १।८)।
अबोच्ची—फूलों को चुनने वाली स्त्री (दे १।६)।
अकडतलिम—१ निःस्नेह। २ अविवाहित (दे १।६०)।
अकरंडुय—मांस के उपचित होने के कारण जिसके पीठ के पास की हड्डी दिखाई न पड़े (प्र ४।७ टी प ८१)।
अकारय—भोजन की अरुचि, रोग-विशेष (ज्ञा १।१३।२८)।
अकासि—निषेध-सूचक अव्यय, पर्याप्त (दे १।८)।
अकोप्प—रम्य (प्र ४।८)।
अक्क—दूत (दे १।६)।
अक्कंत—प्रवृद्ध, बढ़ा हुआ (दे १।६)।
अक्कंद—परित्राता, रक्षा करने वाला (दे १।१५)।
अक्कबोंदि—वल्ली-विशेष (भ २२।६)।
अक्कसाला—१ बलात्कार। २ उन्मत्त-सी स्त्री (दे १।५८)।
अक्का—भगिनी, बहिन (दे १।६)। अक्का (कन्नड)।
अक्कुट्ठ—अध्यासित, अधिष्ठित (दे १।११)।
अक्कोड—बकरा (दे १।१२)।
अक्कोडिय—चुभाना, घुमाना-'तवियाओ सुईओ....वीससु वि अंगुलीनहेसु अक्कोडियाओ' (वृटी पृ ५७)।

अक्ख—उत्कृष्ट उपकरण (वभा १५४५)।

अक्खक—आभूषण विशेष (अवि पृ ६०)।

अक्खणवेल—१ मैथुन। २ सध्याकाल (दे १।५६)।

अक्खणिया—विपरीत मैथुन (पा ४३२)।

अक्खपूप—खाद्यपदार्थ-विशेष (अवि पृ १८२)।

अक्खर—आंख का रोग विशेष (आवचू २ पृ १०२)।

अक्खरा—आंख की पुतली—आसमक्खिया अक्खिमि अक्खरा सकडिढज्जइ त्ति' (आवहाटी २ पृ ६०)।

अक्खल—१ अखरोट वृक्ष। २ अखरोट वृक्ष का फल (प्रज्ञा १६)।

अक्खलिअ—१ प्रतिफलित, प्रतिबिंबित। २ आकुल-व्याकुल (दे १।२७)।

अक्खवाया—दिशा (दे १।३५)।

अक्खिवण—अपहरण (वभा २०५४)।

अक्खु—आम की छाल—अक्खु—अवमालमित्यर्थ (निचू ३ पृ ४८२)।

अक्खुय—आम की छाल (निभा ४७००)।

अक्खेवि—वशीकरण के द्वारा चोरी करने वाला (प्र ३।३)।

अक्खोड—१ राजकुल में दातव्य द्रव्य बेगार तथा सैनिक आदि की भोजन व्यवस्था (व्यभा २ टी प १०)। २ वह भूभाग जो बिना बाया हुआ तथा जनता में अनाघ्रात हो (आवटि प ६०)।

अक्खोडभग—राजकुल में दातव्य द्रव्य की राजा द्वारा दी जाने वाली छूट—'खोडभगानि वा उक्कोटभगोत्ति वा अक्खोडभगोत्ति वा एगट्ठ' (निचू ४ प २८०)। देखें—खोडभग।

अक्खोल—फल विशेष (अवि पृ ६४)।

अक्खोला—ककड़ी (अवि पृ ७१)।

अखरय—भृत्य विशेष (पिनि ३६७)।

अगअ—दानव (दे १।६)।

अगडिगेह—यौवन में उन्मत्त बना हुआ (दे १।४०)।

अगड—१ कूप (स्था ७।३६०)। २ कूप के पास पशुओं के जल पीने का गर्त।

अगत्थिय—गुल्म विशेष (जीव ३।५८०)।

अगय—असुर (प्रा ७।१७४)।

अगहण—कापालिक, वाममार्गी (दे १।३१)।

अगिला—अवगणना, अवज्ञा (दे १।१७)।

अगुज्झहर—रहस्यभेदी, गुप्त बात को प्रकाशित करने वाला (दे १।४३)।

अग्ग—१ ताजा—'अग्गेहि वरेहिं पुप्फेहिं जवखमच्चेउ' (उनुटी प ३५)। २ परिहास। ३ वर्णन।

अग्गक्खंध—रणमुख, युद्ध का अग्रिम मोर्चा (दे १।२७)।

अग्गवेअ—नदी का पूर (दे १।२६)।

अग्गहण—अवगणना, अवज्ञा (दे १।१७)।

अग्गाधमक—मत्स्य की एक जाति (अवि पृ ६३)।

अग्गाहार—१ उच्च जीविका, बहुमान—'दिट्ठो सक्कारिओ अग्गाहारो य से दिन्नो' (उसुटी प २३)। २ छोटी बस्ती—'अत्थि णाइदूरे मग्गलपुर णाम बंभणाण अग्गाहारं' (कु पृ २५८)।

अग्गिअ—१ इन्द्रगोप कीट। २ मन्द (दे १।५३)।

अग्गिचुल्लक—अग्नि का स्थान (अवि पृ २४४)।

अग्गिरस—गोत्र-विशेष (अवि पृ १५०)।

अग्गिलिय—आगे, पहले (पवटी प ५६)।

अग्गुमर—घर का प्रवेश द्वार—'गिहमुह अग्गुमरो' (आचू पृ ३७०)।

अग्घाड—अपामार्ग, लटजीरा (दे १।८)।

अग्घाडग—अपामार्ग, लटजीरा (प्रज्ञा १।३७।४)।

अग्घाण—तृप्त (दे १।१६)।

अग्घातित—आख्यात (आचू पृ ३०३)।

अघ—१ गढा। २ ह्रद—'अघा गर्त्ता ह्रदो वा' (वृटी पृ २०२)।

अचल—१ गृह। २ कहा हुआ। ३ घर का पिछला भाग। ४ निष्ठुर, निर्दय। ५ नीरस, विरस (दे १।५३)।

अचाइ—अशक्त, असमर्थ (आ ६।३०)।

अचिट्ठं—अप्रगाढ—'अचिट्ठं कूरेहिं कम्मेहिं, णो चिट्ठं परिचिट्ठति' (आ४।१८)

अचियत्त—१ अप्रीतिकर (द ५।१७)। २ अप्रीति—'अचियत्त देशीवचन अप्रीत्याभिधायकम्' (आवहाटी १ पृ १२७)।

अचोक्ख—अपवित्र (आवचू १ पृ १२२)।

अचोक्खलिणी—जल आदि से हाथ न धोने वाली (पिनि ६०२)।

अच्चंकारिय—असत्कारित, अपूजित—'अच्चंकारिओ उवघात करेस्सति' (निचू ३ पृ ४१८)।

अच्चाइय—व्यथित—अच्चाइओ मागडिओ (दहाटी प ६१)।
अच्चिरा—व्यथा (कन्नड)।

अच्छ—१ प्रचुर। २ शीघ्र (द १।४६)। ३ वक्ष (से ६।४७)।

अच्छत—आसीन (उ १६।७८)।

अच्छण—१ बैठना (अच्छणघर विश्रामगृह) (ज्ञा १।३।१६)। २ अवस्थान, आसन (उ २६।७)। ३ अपसपण—'अच्छण ति आसक्कण' (निचू १ पृ ८३)। ४ अवलोकन (व्यभा ३ टी प १०२)। ५ सेवा, शुश्रूषा (व ३)।

अच्छभल्ल—यक्ष, देव-विशेष (दे १।३७)।

अच्छराणिवात—१ चुटकी। २ चुटकी बजाने जितना समय (सूचू २ पृ ३५६)।

अच्छरानिवाय—चुटकी (जीव ३।८६)—'अप्सरोनिपातो नाम चप्पुटिका' (टी प १०६)।

अच्छहल्ल—रीछ (पा ३०२)।

अच्छारिय—नौकर कर्मचारी—तत्थ सरदकाले अच्छारियभत्ताणि दधिकूरेण णिमटठ दिज्जति' (आवचू १ पृ २९१)।

अच्छिक्क—अस्पृष्ट (व्यभा ४।२ टी प २४)।

अच्छिघरुल्ल—१ अप्रीतिकर। २ वेश, पोशाक (दे १।४१ व)।

अच्छिय—फल विशेष (आटी प ३४६)।

अच्छिरोड—चतुरिन्द्रिय जतु विशेष (प्रना १।५१)।

अच्छिरोडय—चार इन्द्रिय वाला जीव विशेष (उ ३६।१४८)।

अच्छिल—चार इन्द्रिय वाला जतु विशेष (उ ३६।१४८)।

अच्छिवडण—निमीलन, आखो का मूदना (दे १।३६)।

अच्छिविअच्छि—आपस की खींचतान, परस्पर आकर्षण (दे १।४१)।

अच्छिवेह—चतुरिन्द्रिय जीव विशेष (प्रना १।५१)।

अच्छिवेहय—चार इन्द्रिय वाला जतु विशेष (उ ३६।१४७)।

अच्छिहरिल्ल—१ अप्रीतिकर, द्वेष्य। २ वेश पोशाक (दे १।४१ व)।

अच्छिहरुल्ल—१ अप्रीतिकर। २ वेश, पोशाक (दे १।४१)।

अच्छुल्लूढ—निष्कासित बाहर निकाला हुआ (वृभा ५७५)।

अज—सर्प की एक जाति (अवि पृ० ६३)।

अजढर—नया, ताजा (सूचू २ पृ ३१२)।

अजराउर—उष्ण, गरम (दे १।४५)।

अजिणविलाल—पर्वत की गुफा मे रहने वाले सिंह की एक जाति (अवि पृ २२७)।

अजुअ—सप्तच्छद, सतौना का वृक्ष (दे १।१७)।

अजुअलवण्णा—इमली का वृक्ष (दे १।४८)।

अजुअलवन्न—सप्तपर्ण, छितवन का पेड (पा ८९५)।

अजुगित—शरीर तथा जाति से अजुगुप्सित (निचू ३ पृ ४५७)।

अज्ज—जिन, अर्हत्, बुद्ध (दे १।५)।

अज्जअ—१ सुरस नामक तृण। २ गुरेटक नामक तृण (दे १।५४)।

अज्जणी—भाड-विशेष (अवि पृ ६३)।

अज्जय—१ वनस्पति-विशेष, लघु तुलसी का पौधा (प्रज्ञा १।४४।३)। २ दादा। ३ नाना (द ७।१८)।

अज्जा—१ वृक्ष विशेष (भ २१।२१)। २ दुर्गा देवी का प्रशात रूप—'दुर्गाया पूर्वरूप अत्र कुष्माडिवत् तधाठिता अज्जा भन्नति' (अनुद्वाचू पृ १२)। ३ यह स्त्री (पा ८४३)।

अज्जिआ—१ दादी। २ नानी (द ७।१५)। आजी—दादी (मराठी)। अज्जी (कन्नड)।

अज्जिड्डीय—दिया, प्रस्तुत किया—'आसेण हिसिय, पट्ठी अज्जिड्डीया' (व्यभा २ टी प ९४)।

अज्जुण—तृण-विशेष (भ २१।१९)।

अज्जोरुह—वनस्पति-विशेष (प्रज्ञा १)।

अज्झ—यह (पुरुष) (दे १।५०)।

अज्झअ—पडौसी (दे १।१७)।

अज्झत्थ—आगत (दे १।१०)।

अज्झवसिअ—मुडित मुख (दे १।४०)।

अज्झसिअ—दृष्ट, देखा हुआ (दे १।३०)।

अज्झस्स—आक्रुष्ट, जिस पर आक्रोश किया गया हो वह (दे १।१३)।

अज्झा—१ असती, कुलटा। २ प्रशस्त स्त्री। ३ नववधू। ४ तरुणी। ५ यह (स्त्री) (दे १।५०)।

अज्झियक—उपयाचित, मागा हुआ (वृटी पृ १३२७)।

अज्झियग—उपयाचित, मागा हुआ (वृभा ४९६२)।

अज्झीण—अध्ययन विभाग—'अज्झयण अज्झीण आओ झवणा य एगट्ठा' (निचू १ पृ ५)।

अज्झेल्ली—बार-बार दोहन-योग्य गाय (दे १।७)।

अज्झोल्लिआ—वक्षस्थल के आभूषण में की जाती मोतियों की रचना विशेष (दे १।३३)।

अज्झोस—अध्यवसाय भावना—'अज्झोसो भावण त्ति एगट्ठ' (आचू पृ ३७३)।

अझिखिय—अनिन्दनीय (दे ३।५८ वृ)।

अटिट्टियाविज्जमाण—टिट टिट की आवाज नहीं करता हुआ (ना १।३।२६)।

अट्ट—१ आकाश—'अट्टे इ वा वियट्टे इ वा आधारे इ वा' (भ २०।१६)। २ कृश। ३ महान। ४ तोता। ५ सुख। ६ धृष्ट। ७ आलसी। ८ ध्वनि। ९ असत्य (दे १।५०)।

अट्टग—आटा (सूचू १ पृ १७८)।

अट्टट्ट—गया हुआ (दे १।१०)।

अट्टट्टहास—खिलखिलाकर हसना (पवटी प २३०)।

'अट्टण' साला—व्यायामशाला (भ ११।१३८)।

अट्टमट्ट—१ निरर्थक, ऊटपटांग—'अट्टमट्टं च भिक्खेज्जा, सिक्खियं ण णिरत्थयं। अट्टमट्टपसाएण, भुंजए गुडतुंबयं ॥' (उशाटी प २४५)। २ आलवाल, क्यारी (प्रा २।१७४)। ३ अशुभ संकल्प विकल्प।

अट्टयकल्ली—कमर पर हाथ देकर खड़ा रहना (पा ७२८)।

अट्टरुसग—गुच्छ वनस्पति विशेष (प्रज्ञा १।३७।४)।

अट्टालग—प्राकार के भीतर आठ हाथ चौड़ा मार्ग (आचू पृ ३६६)।

अट्ठिओ—पुनः पुनः—'अट्ठिओ पुणो पुणो' (निचू १ पृ १२४)।

अट्ठित्तो—पुनः पुनः (निभा ३५७)।

अट्ठिल्लय—बिनौला (पिनि ६०३)।

अट्ठोलय—बिनौला (पिनि ६०३)।

अड—१ सामपक्षी (जीवटी प ४१)। २ कूप, कुआ (पा ३०८)। ३ कूप के पास में पशुओं के पानी पीने के लिए बनाया हुआ गड्ढा (प्रा १।२७१)।

अडउज्झिअ—विपरीत मैथुन (दे १।४२)।

अडवइल्ला—रथ्या विशेष (आवहाटी १ पृ ६६)।

अडयक्खिअ—जागरकता, देखभाल (दे १।४१)।

अडड—संख्या-विशेष (भ ५।१८)।

अडडंग—संख्या-विशेष (भ ५।१८)।

अडणि—धनुष्य का प्रातभाग (?) (से १५।५६)।

अडणी—मार्ग (इ २६।३, दे १।१६)।

अडय—१ आत्मवान्। २ प्रशंसनीय (इ १।५)।

अडयणा—असती, कुलटा (दे १।१८)।

अडया—कुलटा (दे १।१८)।

अडयाल—१ अड़तालीस (निभा २१३२)। २ प्रशंसा—'अडयालशब्दो देशी-वचनत्वात् प्रशंसावाची' (प्रज्ञाटी प ८६)।

अडयालग—प्राकार का एक भाग—'अडयालग त्ति अट्टालक प्राकारावयवः सम्भाव्यते' (उपाटी पृ १००)।

अडाड—बलात्, जबरदस्ती—'अडाडाए बला हरंतो अक्कतिओ' (निचू ३ पृ २५६, दे १।१६)।

अडिल—चर्मपक्षी-विशेष (जीवटी प ४१)।

अडिला—चतुष्पद प्राणी-विशेष (अवि पृ ६६)।

अडिल्ल—चर्मपक्षी का एक भेद (प्रज्ञा १।७८)।

अड्ड—१ तिर्यक् (आवटि प ४६)। २ जो आडे आता हो, बीच मे बाधक होता हो, वह।

अड्डुग—जो आडे आता हो, बीच मे बाधक बनता हो—'गलए अड्डुग अट्टुं वा कट्ठं वा' (सूचू २ पृ ३५५)।

अड्डुपलाण—यान-विशेष, थिल्लि (भटी पृ ७३०)।

अड्डुपल्ल—लाट देश मे प्रसिद्ध खच्चरो से वाह्य यान (ज्ञाटी प ४७)।

अड्डुपल्लाण—लाट देश मे प्रसिद्ध यान-विशेष (औपटी पृ ११२)।

अड्डुवियड्डु—१ आडा-टेढा, अस्त-व्यस्त—'वितिकिण्ण विप्रकीर्णं अणाणुपुव्वीए अड्डुवियड्ड ति वुत्त भवति' (निचू ४ पृ ३७)।

अड्डित—चढाया, आरोपित किया—'खवे य अड्डितो' (व्यभा २ टी प ६४)।

अड्डिय—१ भिडने की क्रिया-विशेष (निचू ३ पृ ३४८)। २ आरोपित (व्यभा २ टी प ६४)।

अड्डुपल्लाण—लाट देश मे प्रसिद्ध यान-विशेष (अनुद्वाहाटी पृ १४६)।

अड्डुयक्कली—कमर पर हाथ रखना (दे १।४५)।

अड्ढेऊण—रोककर—'अड्ढेऊण सणिय विगिचइ, जह उज्जरा न जायति' (आवहाटी २ पृ ८७)।

अड्डोरुग—जैन साध्वी के पहनने का एक वस्त्र (पक १४८१)।

अण—पाप (भटी प ३५)।

अणगण—गुल्म विशेष (अवि पृ ६३)।

अणत—१ अगूठी (अवि पृ ६५)। २ निर्माल्य देवता को चढाया गया उपहार (दे १।१०)।

अणतग—वस्त्र (नि १।१३)।

अणतिक्क—जुलाहा बुनकर (आवचू १ पृ १५६)

अणक्क—१ म्लेच्छ जाति। २ म्लेच्छ देश विशेष (प्र १।२१)।

अणघ—नीराग (निचू १ पृ १२७)।

अणच्छिआर—अच्छिन्न, नहीं छेदा हुआ (दे १।४४)।

अणड—जार पुरुष (दे १।१८)।

अणत्त—निर्माल्य, देवोच्छिष्ट द्रव्य (दे १।१०)।

अणप्प—खड्ग, तलवार (दे १।१२)।

अणप्पज्झ—१ पराधीन- देशीपदमनात्मवशवाचकम् (बटी पृ १०३३)। २ भूताविष्ट (निचू २ पृ २६)।

अणप्फुण्ण—अव्याप्त, अस्पृष्ट (अनुद्वाचू पृ ५६)।

अणप्फुन्न—अनापूर्ण अस्पृष्ट (अनुद्वा ४३८)।

अणफुण्ण—अपूर्ण, अस्पृष्ट, अनाघ्रात (अनुद्वाहाटी पृ ८६)।

अणरामय—अरति, बेचैनी (दे १।४५)।

अणराह—सिर पर बांधी जाने वाली रंग बिरंगी पट्टी (दे १।२४)।

अणरिक्क—१ अवकाश रहित, व्यस्त (दे १।२०)। २ दधि, क्षीर आदि गोरस भाज्य (निचू १६)।

अणवदग्ग—१ अनन्त, निस्सीम—'अणवदग्गं संसारकंतारं अणुपरियट्टइ' (भ १।४५)। २ अविनाशी (सू २।५।२)।

अणवयग्ग—अनन्त, अपरिमित (आचू पृ १५६)।

अणवरिक्क—अवकाश रहित (दे १।२० व)।

अणह—१ अक्षत, सुरक्षित—'अणहसमग्गा' (ज्ञा १।१८।२४ दे १।११)। २ नीराग (निचू १ पृ १२७)।

अणहप्पणय—अनष्ट विद्यमान (दे १।४८)।

अणहारअ—खल्ल, वह भूमी जिसका मध्यभाग नीचा हो (दे १।३८)।

अणागलिय—अपरिमित (उपा २।३४)।

अणाड—जार पुरुष (दे १।१८)।

अणाडिया—१ कुचेष्टा, विक्रिया (आवचू १ पृ ४६७)। २ नटखटपन—'एक्का वि मए पुत्तस्स अणाडिया न दिट्ठा' (वृटी पृ ५७)।

अणाढायमाण—अस्मरण (आचू पृ ३०३)।

अणादुआल—विना हिलाये (सूचू १ पृ १२२)।

अणालिआ—कुचेष्टा, विक्रिया—'अणालिआ करेइ' (आवहाटी १ पृ २४७)।

अणिट्ठुह—अविगलक, नही थूकने वाला (सू २।२।६६)।

अणिट्ठुहअ—१ अनिष्ठीवक। २ सचेष्ट, जागरूक (भ २५।५७१)।

अणिड्डुगलित—अत्यधिक लिप्त—'अणिड्डुगलिते अतीव लेत्थरिय' (निचू २ पृ ३०१)।

अणिदा—अनुभव शून्य, ज्ञानशून्य—'सव्वे असण्णी असण्णीभूत अणिदाए वेदण वेदेति' (भ १।७८)।

अणिदाय—ज्ञान का अभाव (भटी पृ १४१७)।

अणिदोच्च—१ भय का होना। २ अस्वास्थ्य (व्यभा ६ टी प ५१)।

अणिय—अग्रभाग (प्र ७।२)।

अणियण—कल्पवृक्ष का एक प्रकार (प्रसाटी प ३१४)।

अणिलुक्क—प्रकट, अतिरोहित—'अणिलुक्के णिलुक्कमिति अप्पाण मण्णइ' (भ १५।१०२)।

अणिल्ल—प्रभात (दे १।१९)।

अणिह—१ सदृश। २ मुख (दे १।५१)।

अणु—चावल की एक जाति (दे १।५)।

अणुअल्ल—प्रभात (दे १।१९)।

अणुआ—यष्टि, लकडी (दे १।५२ वृ)।

अणुइअ—चना (दे १।२१)।

अणुज्जल—अचचल (अवि पृ ४)।

अणुदवि—प्रभात (दे १।१९)।

अणुद्धरी—कुथु आदि कीट-विशेष (निचू ३ पृ १२४)।

अणुबंधिअ—हिक्का रोग, हिचकी (दे १।४४)।

अणुय—१ धान्य-विशेष (दनि १५५, दे १।५२)। २ आकृति (दे १।५२)।

अणुरगा—गाडी—'अणुरगा णाम घसिआ' (निचू ४ पृ १११)।

अणुल्लय—द्वीन्द्रिय जंतु विशेष (उ ३६।१२६)।

अणुव—बलात्कार (दे १।१६)।

अणुवज्जण—सेवा-शुश्रूषा, देखभाल (दे १।४१ व)।

अणुवज्जिअ—१ जागरूकता, देखभाल (दे १।४१)। २ गत (व)।

अणुवहुआ—नववधू (दे १।४८)।

अणुसंधिअ—निरंतर हिचकी आना (दे १।४६)।

अणुसुत्ति—अनुकूल (दे १।२५)।

अणुसूआ—शीघ्र ही प्रसव करने वाली स्त्री (दे १।२३)।

अणेकज्झ—चचल (दे १।३०)।

अणोमट्ठ—अप्रार्थित, अयाचित (ओनि १४८)।

अणोयविय—अपरिकर्मित (निचू २ पृ ४२६)।

अणोरपार—१ अनादि-अनंत—'संसारे घोरम्मि अणोरपारे' (सू २।६।४६)। २ प्रचुर—अणोरपारमिति देशीवचन प्रचुरार्थे (आवहाटी १ पृ २३०)। ३ अपार—'अणोरपारम्मि देशयुक्त्या अपारं' (आवदी प १६१)।

अणोलय—प्रभात (दे १।१६)।

अणोहट्टय—उच्छृंखल (नाटी प २४५)।

अणोहट्टिय—स्वच्छंद (ना १।१८।१७)।

अणोहट्ट—अनिच्छित, अप्रार्थित—अणोहट्ठ अजाणिय' (निचू २ पृ १६६)।

अण्ण—१ पुरुष के लिए प्रयुक्त सम्बोधन (दे ७।१६)—'अण्ण' इति महाराष्ट्राणां आमंत्रणवचनं' (दचू पृ १६६)। २ आरोपित। ३ खण्डित।

अण्णअ—१ तरुण। २ धूर्त। ३ देवर (दे १।५५)।

अण्णइअ—तृप्त (दे १।१६)। २ सर्वांग-तृप्त, सभी विषयों से तृप्त (व)।

अण्णत्ति—अवज्ञा, अनादर (दे १।१७)।

अण्णमय—पुनरुक्त, पुनः कहा हुआ (दे १।२८)।

अण्णाण—१ विवाह-काल में वधू को दिया जाने वाला उपहार—दहेज। २ विवाह के लिए वर को वधू का दान—कन्यादान (दे १।७)।

अण्णाय—आ[illegible] शाला (भ ४।६)।

अण्णिआ—१ देवरानी। २ ननद। ३ फूफी (दे १।५१)।

अण्णी—१ देवरानी, देवर की पत्नी। २ ननद, पति की बहिन। ३ फूआ, पिता की बहिन (दे १।५१)।

अण्णे—१ महाराष्ट्र मे प्रयुक्त तरुणी स्त्री के लिए संबोधन-शब्द—'अण्णे त्ति मरहट्ठेसु तरुणित्थीसामंतणं' (द ७।१६, अचूपृ १६८)। २ महाराष्ट्र मे वेश्याओ के लिए प्रयुक्त चाटु वचन—'मरहट्ठविसए आमंतणं दोमूलइखरगाण चाटुवयणं अण्णेत्ति (जिचू पृ २५०)।

अण्णोसरिअ—अतिक्रान्त, उल्लंघित (दे १।३६)।

अण्हेअअ—भ्रान्त (दे १।२१)।

अंतितिण—बड-बड न करने वाला, बकवास न करने वाला (द ८।२६)।

अतिक्किमण—अलस, मथर—'अलसमभारो भीरु अतिक्किमणो मथरो त्ति वा' (अवि पृ २४१)।

अतित्थित—अतिक्रान्त (व्यभा १० टी प ६)।

अतिप्पणया—अश्रु न बहाना (भ ७।११४)।

अतिर—निरन्तर—'अतिर णिरतरं भण्णति' (जीभा १६८०)।

अतिराउल—स्वामीकुल—'अतिराउले इति देशीपद, स्वामिकुलमित्यर्थ.' (प्रज्ञाटी प २५३)।

अतिस—अप्रीति (अवि पृ १२)।

अतीत्थित—अतिक्रान्त (व्यभा १० टी प ६)

अत्ता—१ फूफी। २ सासू। ३ सखी (दे १।५१)।

अत्थ—अनवसर, अकस्मात् (दे १।१४)।

अत्थक्क—अकस्मात् (से ११।२४)। २ अखिन्न। ३ अनवरत।

अत्थग्घ—१ मध्यवर्ती (ओनि ३४)। २ अगाध, गहरा। ३ आयाम, लबाई। ४ स्थान (दे १।५४)।

अत्थणिउर—सख्या-विशेष (भ ५।१८)।

अत्थणिउरंग—सख्या-विशेष (भ ५।१८)।

अत्थभिल्ल—रीछ (निचू २ पृ ६३)।

अत्थयारिआ—सखी, सहेली (दे १।१६)।

अत्थाक्क—अकस्मात् (से ११।२४)।

अत्थार—सहायता, सहयोग (दे १।१६)।

अत्थारिय—कर्मकर, मूल्य लेकर खेत मे धान आदि काटने वाला नौकर—'अत्थारिएहिं तु ये मूल्यप्रदानेन शालिलवनाय कर्मकरा' (व्यभा ६ टी प ३८)।

अत्थाह—१ अगाध, गहरा, ऊडा। २ आयाम, लम्बाई। ३ स्थान। ४ मध्यवर्ती, बीच का (दे १।५४)।

अत्थिय—१ वृक्ष विशेष । २ बहुत बीज वाला फल (भ २२।३) ।
अत्थियल—क्षुद्र जंतु (अंवि पृ २५३) ।
अत्थुड—लघु (दे १।६) ।
अत्थुरण—आस्तरण (निचू ३ पृ ३२३) ।
अत्थुरणग—आस्तरण विशेष (निचू ३ पृ ५६८) ।
अत्थुरिय—फैलाया हुआ, बिछाया हुआ (बभा ६१०) ।
अत्थुवड—भल्लातक, भिलावा वृक्ष का फल (दे १।२३) ।
अत्थेक्क—आकस्मिक, अचिन्तित (से १२।४७) ।
अथक्क—१ अकस्मात अनवसर (ओटी प ८७) २ प्रसरणशील, फैलने वाला ।
अदंतवणय—अदंतधावन, दतौन का निषेध (स्था ६।६२) ।
अदसण—चोर (दे १।२६) ।
अदक्खेयव्व—ग्राह्य (ओनि) ।
अदिसल्ल—अंधा (निचू ४ पृ १०६) ।
अदु—१ अब (आ ६।३।१०) । २ अथ इसलिए (सू १।२।२४) । ३ अथवा (उ २।२३) । ४ अधिकारान्तर का सूचक । ५ इससे ।
अदुत्तर—आनंतय सूचक अव्यय, अब (सू २।२।१८) ।
अदुल— आम आदि का रूछा (अनुद्वाहाटी पृ ७६) ।
अदुव—अथवा (द ६।२) ।
अदुवा—अथवा (द ५।७५) ।
अदूपालिय—मिश्रित—'जत्तियाणि भरहे धण्णानि ताणि स वाणि अदूपालियाणि' (उशाटी प १४६) ।
अद्द—१ अभिमुख (आवचू १ पृ २७८) । २ परिहास । ३ वणन ।
अद्दण—आकुल (दे १।१५) ।
अद्दण्ण—१ व्याकुल (पक ६६१, दे १।१५) । २ असत्य (व्यभा ६ टी प ३) ।
अद्दन्न—आकुल व्याकुल (बभा ३६३३) ।
अद्दाइस—आदर्श, पवित्र आचरण वाला (व १) ।
अद्दाग—दर्पण (स्था ४।४३१) ।

विम्ब को पोंछने से रोगी नीरोग हो जाता है।
(व्यभा ५ टी प २६)।

अद्धंत—१ पर्यन्त, अंतभाग (दे १।८)। २ कतिपय, कई एक।

अद्धक्खण—१ प्रतीक्षा (दे १।३४)। २ परीक्षण—'परीक्षणमिति केचित्' (वृ)।

अद्धक्खिअ—संकेत करना (दे १३४)।

अद्धजंघा—'मोचक' नाम का जूता-विशेष (दे १।३३)।

अद्धजंघिया—पाद-रक्षक, जूता-विशेष (दे १।३३ वृ)।

अद्धविआर—१ मडन, भूषण (दे १।४३)। २ मटल, गोल (वृ)।

अद्धा—१ समय (स्था २।३६)। २ लब्धि, शक्ति-विशेष। ३ वस्तुत.। ४ साक्षात्। ५ दिन। ६ रात्रि। ७ सकेत।

अद्धाण—महान् अटवी—'अद्धाण महता अडवी' (निचू १ पृ ८०)।

अद्धुट्ठ—साढे तीन—'अद्धुट्ठणावि कुमारकोडीणं' (प्र ४।५)।

अधंकण—अमायी (सूचू १ पृ १८६)।

अधवण—अथवा (वृभा ४१६३)।

अधिकरणिखोडि—अहरन को रखने का काष्ठ-विशेष (भ १६।७)।

अधिवक्कमणक—उत्सव-विशेष (अवि पृ १२१)।

अनिदोच्च—भयभीत, अस्वस्थ—'अणिदोच्चमित्यनिर्भयमस्वस्थमित्यर्थः (व्यभा ७ टी प ५१)।

अन्न—पुरुष के लिए प्रयुक्त सबोधन-शब्द (द ७।१६)।

अन्नइलाय—वासी भोजन करने वाला (प्रटी प ११०)।

अन्नओहुत्त—पराङ्मुख—'रोसेण य अन्नओहुत्तो जाओ राया' (उसुटी प २६)।

अन्नतिलाय—वासी भोजन करने वाला (प्रटी प ५०६)।

अन्ना—१ तरुण स्त्री का सम्बोधन-शब्द (द ७।१६)। २ माता।

अपडिच्छिर—जड़-मति, मूर्ख (दे १।४३)।

अपडिहत—भोज्य पदार्थ-विशेष—'पूणे वा फेणके वा अक्खपूणे वा अपडिहतें वा' (अंवि पृ १८२)।

अपलोकणिक—सिर का आभरण-विशेष (अवि पृ १६२)।

अपातय—अकाल (?)—'अपातयं सस्सवापत्ति' (अवि पृ ११२)।

अपारमग्ग—विश्राम (दे १।४३)।

अपुप्फिय—स्वच्छ, सुगंधित (बृभा ४३८)।
अपोल—पोल रहित, असुषिर (पवटी प ६७)।
अपोल्ल—असुषिर, निबिड (प्रभा ६७४)।
अप्प—पिता (दे १।६)।
अप्पगुत्ता—कपिकच्छू, कवाछ, (दे १।२६)।
अप्पजूहिअ—पके हुए चावल आदि (आटी प ३३४)।
अप्पज्झ—आत्मवश, स्वस्थचित्त (बभा ३७३२, दे १।१४)।
अप्पत्तिय—१ अप्रीति। २ अविश्वास (दश्रु ६।४)।
अप्पहुण्ण—आत्मरक्षा में तत्पर, स्वयं को बचाने में तत्पर (बभा ११५३)।
अप्पसत्यम—गोत्र विशेष (अवि पृ २५०)।
अप्पाह—संदेश (व्यभा ७ टी प २६)।
अप्पाहट्टु—जानकर, कहकर (सू २।१।१२)।
अप्पाहण—संदेश (बृभा २३६)।
अप्पाहणी—संदेश (पिनि ४३०)।
अप्पाहित—संदिष्ट (बभा ३२८४)।
अप्पाहिय—संदिष्ट (बटी पृ ७४)।
अप्पोया—आस्फोता, वल्ली विशेष (प्रभा १।४०)।
अप्पोल—पोल रहित (निभा २१७०)।
अप्पोल्ल—पोल रहित, निगर (आभा ३२२)।
अप्फचिय—अपरिचित (निचू ३ पृ ३३३)।
अप्फच्चित—अपरिचित (निचू २ पृ ११७)।
अप्फाया—वनस्पति विशेष (जीवटी प ३५१)।
अप्फुण्ण—१ पूर्ण, भरा हुआ (विपा १।२।५३, दे १।२०)। २ आक्रांत, स्पृष्ट (अनुद्वाचू पृ ५६)। ३ आच्छादित (भ २।४)।
अप्फुन्न—आपूर्ण, स्पृष्ट, आक्रान्त (अनुद्वा ४३६)।
अप्फेया—आस्फोता, वल्ली विशेष (प्रभा १।४०)।
अप्फोता—वनस्पति विशेष (जीव ३।२६६)।
अप्फोतिका—वनस्पति विशेष (अवि पृ ७०)।
अप्फोय—वृक्ष-विशेष (अवि पृ ६३)।
अप्फोया—१ वनस्पति-विशेष (राज १८४)। २ वल्ली-विशेष (प्रभा १।४०।३)।

अप्फोव—१ लता (उ १८।५)। २ वृक्ष आदि से आकीर्ण, गहन (उशाटी प ४३८)।

अफुण्ण—परिपूर्ण (प्रज्ञा २६।५६)।

अफुन्न—स्पृष्ट (प्रसाटी प ३०४)।

अबीय—दुर्भिक्ष (निचू ४ पृ १२८)।

अबोट—अनाक्रमणीय (ओटी प ६२)।

अब्बुद्धसिरी—इच्छा से भी अधिक फल की प्राप्ति (दे १।४२)।

अब्भ—अध्यारोह वृक्ष, वृक्ष पर उत्पन्न होने वाला विजातीय वृक्ष—'अब्भेति वृक्षे समुत्पन्नो विजातीयो वृक्षविशेषोऽध्यवरोहक' (भटी पृ १४७६)।

अब्भंगिएल्लअ—घी आदि से चुपड़े हुए शरीर वाला (ओनि ८२)।

अब्भक्खण—अकीर्ति (दे १।३१)।

अब्भड—आहत, टकराना (आवहाटी १ पृ २८८)।

अब्भडवंचिउ—अनुगमन करके (प्रा ४।३९५)।

अब्भपिसाअ—राहु (दे १।४२)।

अब्भवालुय—अभ्रक का चूर्ण (उ ३६।७४)।

अब्भाकारिय—कर्मजीवी (?) (अवि पृ ६७)।

अब्भायत्त—प्रत्यागत, वापस आया हुआ (दे १।३१)—'अब्भायत्ता भमन्ति तुह रिउणो' (वृ)।

अब्भायत्थ—पश्चाद्गत, फिर गया हुआ—'अब्भायत्थो पश्चाद् गत इति तु गोपाल' (दे १।३१ वृ)।

अब्भिडिअ—१ सार, मजबूत। २ सगत, युक्त (दे १।७८)।

अब्भिडिऊण—टकरा कर—'सो चक्के अब्भिडिऊण भग्गो' (उशाटी प १४६)।

अब्भुट्ठि—हिंसक—'आउट्टि त्ति वा अब्भुट्ठि त्ति वा एगट्ठा' (आचू पृ २७५)।

अब्भुत्त—प्रदीप्त, चमकदार (निचू ३ पृ ३२१)।

अब्भुत्तिअ—१ प्रदीप्त, प्रकाशित। २ उत्तेजित्त (से १५।३८)।

अब्भूआण—उफनता हुआ—'आकठा आदाणस्स भरिया, तो तप्पमाणी भरिया अब्भूआणा छड्डिज्जति, अग्गि पि विज्झावेति' (निचू ३ पृ ८५)।

अभिचार—उच्चाटन आदि (निचू १ पृ १६३)।

अभिणूम—१ माया (सू १।२।७)। २ कर्म (सूचू पृ ५३)।

अभिणपुड—खाली पुडिया जिसको बच्चे लोगों को ललचाने के लिए रास्ते पर रख देते हैं (दे १।४४)।

अभिनिपिया—प्रत्येक का पृथक् पृथक् चूल्हा (व्य ६।१०)।

अभिनिव्वगड—१ अनेक और निश्चित परिक्षेप वाला स्थान। २ पृथग् पृथग् परिक्षेप वाला स्थान (व १।११ टी पृ ६४६)। ३ वह परिक्षेप जिसमें प्रवेश और निष्क्रमण का एक द्वार हो पर भीतर अनेक घर हों (व्यभा ८ टी प ४)।

अमगुल—इष्ट (निचू ३ पृ १४२)।

अमज्जाइल्ल—अमर्यादित अव्यवस्थित (निभा ४०३)।

अमणाम— मन के लिए अप्रिय (स्था २ २३३)।

अमय--१ चन्द्रमा, चांद (दे १।१५)। २ असुर दैत्य।

अमयणिग्गम—चन्द्रमा (दे १।१५)।

अमाघाय—अमारि– अमाघातो त्ति डिंडिमः त्वात अमारिरित्यर्थ '(उपाटी पृ ६१)।

अमिय—प्राप्त– अमिया गावीतो, जुज्म सपलग्ग (निचू ३ पृ १६७)।

अमिल—१ मेष, भेड (ओनि ३६८)। २ भाड विशेष (अवि पृ ७२)।

अमिला—१ भेड की ऊन से बना वस्त्र (आचूला ५।१४)। २ देश विशेष में सूक्ष्म रोओं से निर्मित वस्त्र (निचू २ पृ ३९९)।

अमुदग—अतीन्द्रिय मिथ्याज्ञान विशेष, जीव पुदगलों से बना हुआ नहीं है— ऐसा ज्ञान (स्था ७।२)।

अमुय—अस्मृत, अज्ञात (भ १।४२९)।

अमोग्गतिया—सम्मुख जाना त्वरित गति से जाना– तस्सागमणवेलाए सव्वो परियणो पच्चावणीए णिग्गतो अमोग्गतिया एति (निचू ३ पृ ४११)।

अमोसली—अप्रमादयुक्त प्रतिलेखना का एक प्रकार (स्था ६।४६)।

अम्मका—मां (आवटी प ८०)।

अम्मगा—मां (भ ६।१४८)।

अम्मणअंचिअ—अनुगमन, पीछे पीछे जाना (दे १।४६)।

अम्मया—माता, अम्बा (ज्ञा १।६।४)।

अम्मा—मां (अंत ५।१६ दे १।५)।

अम्माइआ—अनुगमन करने वाली पीछे-पीछे जाने वाली (दे १।२२)।

अम्मिय—प्राप्त (वटी पृ ७७६)।

अम्मो—१ माता का सम्बोधन (ज्ञा १।१४।२६)। २ आश्चर्यसूचक अव्यय (प्रा २।२०८)।

अम्मोगइया—सम्मुख-गमन, स्वागत करने के लिए सामने जाना—'राया सयमेव अम्मोगइयाए निग्गओ' (उसुटी प २३)।

अम्मोगतिया—सम्मुख-गमन (आवचू १ पृ ३९५)।

अय—१ विस्मृत। २ आदरणीय। ३ परित्यक्त (दे १।४९)।

अयक्क—दानव (दे १।६)।

अयग—दानव (दे १।६)।

अयड—कुआ, कूप (दे १।१८)।

अयतंचिअ—हृष्ट-पुष्ट, मासल (दे १।४७)।

अयसा—सुरा-विशेष (अवि पृ १८१)।

अयालि—मेघाच्छन्न दिवस, आकाश मे बादलो के छा जाने से होने वाला अन्धकार, दुर्दिन (दे १।१३)।

अयोइल्ल—कारावास—'डड पुरस्कृत्य राया अयोइल्लए ठवेति' (दश्रुचू प ३९)।

अरइय—१ अर्श, मसा (आचूला १३।२८)। २ अजीर्ण (नि ३।३४)।

अरंजरग—जलघट (सूचू १ पृ ११७)।

अरक—कृमि-विशेष (अवि पृ ६९)।

अरतीअ—मसा, अर्श (आचू पृ ३७२)।

अरबाग—१ एक अनार्य देश, अरब देश (प्रसा ८३)। २ अरब देश के वासी (कु पृ ४०)।

अरल—१ कीट-विशेष, चीरी। २ मच्छर (दे १।५२)।

अरलाया—चीरी, चार इन्द्रिय वाला छोटा प्राणी जो रात को लयबद्ध ध्वनि करता है, पर दृष्टिगोचर नही होता (दे १।२६)।

अरलूसा—अडूसा का वृक्ष (अवि पृ ७०)।

अरविंदर—दीर्घ (दे १।४५)।

अरहट्ट—रहट (ओटी प १९)।

अरिअल्लि—व्याघ्र (दे १।२४)।

अरिज्ज—अग्र, परिमाण (आचू पृ ३३६)।

अरिसिल्ल—बवासीर रोग वाला (विपा १।७।७)।

अरिहइ—निश्चित, अवश्य (दे १।२२)।

अरुग—व्रण, फोडा (बृभा ६०२८)।

अरुण—कमल (दे १।८)।
अरुय—व्रण (बभा २२२५)।
अलदक—कटोरा (अवि पृ ६५)।
अलदिका—थाली के आकार का पात्र (अवि पृ ७२)।
अलदिग—पात्र विशेष (आचू पृ ३४५)।
अलय—कुक्कुट (दे १।१३)।
अलक्कडअ—पागल कुत्ता (वटी पृ ८२६)।
अलग्ग—कलंक, आरोप (दे १।११)।
अलमजुल—आलसी सुस्त (दे १।४६)।
अलमल—दुर्दान्त वृषभ, दुष्ट बैल (दे १।२५)।
अलमलवसह—दुर्दान्त वृषभ दुष्ट बैल—'अलमलवसहा सप्ताक्षर नामनि गोपाला' (दे १।२५ वृ)।
अलय—विद्रुम, प्रवाल (दे १।१०)।
अलस—१ माम। २ कुसुम रंग में रंगा हुआ (दे १।५२)। ३ मद-मधुर ध्वनि (पा ६०७)।
अलसदक—अतसी, धान्य-विशेष (अवि पृ २२०)।
अलाहि—पर्याप्त, परिपूर्ण (ना १।१।६१)।
अलिय—बिच्छू का डंक, कांटा (विपा १।६।२३)।
अलिअल्ली—१ कस्तूरिका। २ व्याघ्र (दे १।४६)।
अलिआ—सखी (दे १।१६)।
अलिआर—दुग्ध (दे १।२३)।
अलिंजरअ—रांजन का बड़ा पात्र (पा ८२३)।
अलिंद—पात्र विशेष (अनुद्वा ३७५)।
अलिंदिगा—एक प्रकार का जलपात्र (आवचू २ पृ ७०)।
अलिण—वृश्चिक बिच्छू (दे १।११)।
अलित्तय—गौरा का वस्त्र। बांस—अलित्तआ कांट्टियाए विट्टा महन्ना यया (आचू पृ ३५७)।
अलियाण—अनुचर (प्र २।१४)।
अलिंमिद—पात्र विशेष—अलिंमिदा पयनागारा (निचू २ पृ १०६)।
अलीपट्ट—बिच्छू के डंक की आकृति वाली मांसी छुरी (विपा १।६।२०)।
अलीगअ—व्याध वन (दे १।८७)।

अलेभड—अस्थिर—'तत्थ नवमो वासारत्तो कओ, गो य अलेभडो जाओ' (आवहाटी १ पृ १४१)।

अल्ल—दिन (अवि पृ २४२, दे १।५)।

अल्लअ—परिचित (दे १।१२)।

अल्लकम्म—१ दैनिक व्यवहार की कला। २ सिंचन-कला (कु पृ २३३)।

अल्लट्टपलट्ट—पार्श्व का परिवर्तन (दे १।४८)।

अल्लट्टपलट्टया—पार्श्व का परिवर्तन (दे १।४८ वृ)।

अल्लत्थ—१ पानी से भीगा हुआ। २ केयूर, बाजूबंद (दे १।५४)।

अल्लपल्ल—बिच्छू के डंक की आकृति वाली तीखी खूंटिया (विपाटी प ७१)।

अल्लमुत्था—कंद-विशेष (प्रसा २३८)।

अल्लल्ल—मयूर (दे १।१३)।

अल्लविय—उठाना, भार ढोना—'तेण तस्स सत्यकोत्थलओ अल्लविओ' (उसुटी प २७)।

अल्ला—१ जननी, माता (दे १।५)। २ अवमीलन, आंख बंद करना (से १३।४३)।

अल्लिय—पास में आना (पव ६३७)।

अल्लियअ—समीप—'गतू साहूणमल्लियओ' (पक ६००)।

अल्लियाव—१ छीना हुआ (पक ४९२)। २ प्रवेश (आवचू १ पृ ४४६)।

अल्लीण—आया—'न कोइ कयगो अल्लीणो' (व्यभा २ टी प ४६)।

अवअक्खिअ—मुडाया हुआ मुंह (दे १।४०)।

अवअच्चिअ—मांसल (दे १।४७ वृ)।

अवअच्छ—१ कौपीन, कक्षावस्त्र (दे १।२६)। २ कांख, बगल (वृ)।

अवअच्छिअ—निर्वापित मुख, मुडाया हुआ मुंह (दे १।४०)।

अवअणिअ—असंघटित, अयुक्त (दे १।४४)।

अवअण्ण—उदूखल, उलूखल (दे १।२६)।

अवइ—अनंतकाय वनस्पति-विशेष (भटी पृ १४८५)।

अवउज्जिअ—नीचे झुककर—'अवउज्जिअत्ति अधोऽवनम्य' (आटी प ३४२)।

अवएज—पात्र-विशेष (ज्ञाटी प ४८)।

अवएड—पात्र-विशेष (ज्ञाटी प ४७)।

अवएडय—तापिकाहस्त, तवे का हाथा (भ ११।१५६)।

अवओडय—गले का मरोडना (विपा १।२।१४)।

अवओडयबंधणय—वह व्यक्ति जिसके गले और हाथों को मरोडकर उनको पृष्ठभाग के साथ रस्सी से बांध दिया जाए (अंत ६।२२)।

अवंग—कटाक्ष (दे १।१५)।

अवगुणित्ता—खोलकर (भ १५।१४२)।

अवगुणेत्ता—खोलकर (ना १।१६।६५)।

अवगुत—उद्घाटित (उभा ४०७१)।

अवगुय—उद्घाटित (भ २।६४)।

अवकड्ढिअ—पराजित—'अवकड्ढित पराहूते पराजित परम्मुहे (अवि पृ १०८)।

अवकीरिअ—विरहित (दे १।३८)।

अवकोडक—गले को मरोडना, कृकाटिका—गले के पिछले भाग को नीचे ले जाना (प्र ३।१२)।

अवक्करस—मद्य मदिरा (दे १।४६)।

अवग—जलीय वनस्पति विशेष (सू २।३।४३)।

अवगद—विस्तीर्ण, विशाल (दे १।३०)।

अवगर—कूडा (भटी पृ ७३०)।

अवगूढ—अपराध (दे १।२०)।

अवचुल्ल—छोटा चूल्हा (निचू ३ पृ १०६)।

अवचुल्ली—छोटा चूल्हा—'चुल्लीए समीव अवचुल्ली (निचू ३ पृ १०६)।

अवच्छुरण—क्रोध के वशीभूत होकर अनर्गल बोलना—विमिह जुत्त पिअम्मि अवच्छुरण (दे १।३६ वृ)।

अवछुरण—क्रोध के वशीभूत होकर अनर्गल बोलना (दे १।३६)।

अवज्झर—निर्झर विशेष (पाटी प १०६)।

अवज्झस १ कटि कमर। २ कठिन (दे १।५६)।

अवठंभ—ताम्बूल (दे १।३६)।

अवड—१ कूप। २ आराम बगीचा (दे १।५३)।

अवडअ—१ तृण पुष्प, घास की बनी हुई पुष्पाकृति (दे १।२०)। २ कूप। ३ बगीचा (दे १।५३ वृ)।

अवडक्किअ—कूप आदि में गिरकर मरा हुआ, जिसने आत्महत्या की हो वह (दे १।४७)।

अवडाहिअ—१ अभिशप्त ।(दे १।४७) । २ उत्कृष्ट ।

अवडिअ—खिन्न (दे १।२१) ।

अवडिच्छि—अनपेक्षित (से १०।४१) ।

अवडुअ—उलूखल, ऊखल (दे १।२६) ।

अवड्डा—कृकाटिका (भटी पृ १२५७) ।

अवण—१ पानी की तीव्र धारा जो नीचे से ऊपर की ओर निकलती है ।
२ घर का फलहक (दे १।५५) ।

अवण्ण—अवगणना, अवज्ञा (दे १।१७) ।

अवतंस—'पुरुषव्याधि' नामक रोग-विशेष (वृभा ६३३६) ।

अवतासाविय—अवश्लिष्ट (विपा १।१।५५) ।

अवतासित—बलात् आलिंगित—'बलामोटिकया आलिंगित'
(वृटी पृ १५१०) ।

अवत्त—उपलिप्त (वृभा ५८४) ।

अवत्तय—विसस्थुल, अव्यवस्थित (दे १।३४) ।

अवत्थरा—पाद-प्रहार (दे १।२२) ।

अवद्दुस—ऊखल, छाज आदि सामान्य उपकरण (दे १।३०) ।

अवधिका—उपदेहिका, दीमक (प्र १।३३) ।

अवपक्क—तवा (ज्ञाटी प ४७) ।

अवपुसिअ—संघटित, सयुक्त (दे १।३६) ।

अवमद—भाजन-विशेष (जबूटी प १००) ।

अवमिय—जिसको घाव हो गया हो वह, जख्मी (वृ ३) ।

अवयक्का—कडाही (भ ११।१५६) ।

अवयक्खिअ—मुडित मुख (दे १।४०) ।

अवयग्ग—अंत, अवसान—'अवयग्ग ति देशीवचनोऽन्तवाचक.' (भटी प ३५) ।

अवयच्छिय—१ प्रसारित (ज्ञाटी प १४४) । २ मुण्डित मुख (दे १।४०) ।

अवयड्डिय—युद्ध-क्षेत्र मे अपहृत (दे १।४६) ।

अवयत्थिय—प्रसारित—'अवयत्थिय-महल्ल-विगय-बीभच्छरत्ततालुय'
(ज्ञा १।८।७२) ।

अवयरिअ—विरह, वियोग (दे १।३६) ।

अवयाण—आकर्षण-रज्जु, खीचने की डोरी (दे १।२४) ।

अवयार—माघ-पूर्णिमा का एक उत्सव विशेष, जिसमे इक्षु-खड से दतवन करना आदि क्रियाए की जाती हैं (दे १।३२)।

अवयास—आलिंगन (पिनि ५८१)।

अवयासण—आलिंगन (कु पृ १७३)।

अवयासाविअ—आलिंगित (विपाटी प ६७)।

अवयासिअ—आलिंगित (बृभा ५७१०)।

अवयासिणी—नासा रज्जु, नाक म डाली जाती डोर (दे १।४६)।

अवयि—रोग विशेष (अवि पृ २०३)।

अवरज्ज—१ गत दिवस। २ आगामी दिवस। ३ प्रभात (दे १।५६)।

अवरत्तअ—पश्चात्ताप (दे १।४५)।

अवरत्तेअ—पश्चात्ताप अनुताप (दे १।४५ व)।

अवरद्धिग—१ लूतास्फाट, मकडी के काटने से होने वाला फोडा। २ सपदश (पिनि १४)।

अवराह—कटि, कमर (दे १।२८)।

अवरिक्क—अवकाश रहित, व्यस्त (दे १।२०)।

अवरिज्ज—अद्वितीय (दे १।३६)।

अवरिद्धि—१ मकडी के काटने से होने वाला फोडा। २ सपदश (पिटी प १६३)।

अवरिहट्टपुसण—१ अकीर्ति। २ असत्य। ३ दान (दे १।६०)।

अवरुडण—परिरम्भण, आलिंगन (पा ४६२)।

अवरुडिअ—आलिंगन (आवहाटी १ पृ १८३, दे १।११)।

अवरेय—रिक्तता (उशाटी प ३०५)।

अवरोह—कटि कमर (दे १।२८)।

अवलय—घर, मकान (दे १।२३)।

अवलिंब—१ बाहर के दरवाजे का प्रकोष्ठ (ओलिंद ?)। २ दीमक का ढूह (ओलिभा दे १।१५३ ?)। (स्था २।३६१)।

अवलिच्छिअ—अप्राप्त—'अवलिच्छिअसेससाअरो मअरहरो' (से ६।७८)।

अवलिय—असत्य (दे १।२२)।

अवलुआ—कोप (दे १।३६)।

अवल्ल—बैल (आवचू २ पृ १५३)।

अवल्लक—नौका खेने का उपकरण-विशेष (सूचू १ पृ ३६)।

अवल्लय—नौका खेने का उपकरण-विशेष (आचूला ३।१९) ।

अवल्लाव—असत्य कथन, अपलाप (दे १।३८ वृ) ।

अवल्लावअ—अपलाप, असत्य कथन (दे १।३८) ।

अवव—संख्या-विशेष—'चतुरशीतिरववाङ्गा शतसहस्राणि एकमववम्' (जीवटी प ३४५) ।

अववंग—सख्या-विशेष (भ ५।१८) ।

अवसंतुइय—बाहर निकालकर (दअचू पृ ११५) ।

अवसमिआ—गूंदा हुआ बासी आटा (दे १।३७) ।

अवसह—१ उत्सव । २ नियम (दे १।५८)

अवसावण—१ काञ्जिका—'अवसावणं लाडाण कंजिय भण्णई' (वृटी पृ ८७१) । २ भात वगैरह का पानी ।

अवह—शरीर का अवयव (अवि पृ ६६) ।

अवहट्ठ—अभिमानी, अहंकारी (दे १।२३) ।

अवहड—मुसल (दे १।३२) ।

अवहण्ण—उलूखल (दे १।२६ वृ) ।

अवहत्थरा—पाद-प्रहार (दे १।२२ वृ) ।

अवहन्न—ऊखल (वृभा २६३३) ।

अवहाअ—विरह (दे १।३६) ।

अवहित्था—मन की अस्त-व्यस्तता, अकुलाहट (से ११।६ टी) ।

अवहेअ—दया-पात्र, अनुकपा का पात्र (दे १।२०) ।

अवहेडग—आधासीसी रोग (उशाटी प १४३) ।

अवहेडय—आधासीसी रोग, आधे शिर का रोग (उनि १५०) ।

अवहेडिय—नीचे की तरफ मुडा हुआ, झुका हुआ—'अवहेडिय पिट्ठसउत्तमंगे' (उ १२।२९) ।

अवहेरी—तिरस्कार, अवहेलना (उसुटी प १९२) ।

अवहोडय—बन्धन का एक प्रकार, हाथ और सिर को पीठ से बांधना—'अवहोडएण जक्खस्सेव पुरओ बंधेऊण' (उसुटी प ३५) ।

अवार—बाजार, दुकान (निचू २ पृ १६०, दे १।१२) ।

अवारी—दुकान, बाजार (दे १।१२) ।

अवालुआ—होठ का प्रान्त भाग (दे १।२८)—'अवालुआ फुड फुडइ' (वृ) ।

अविअ—कहा हुआ (दे १।१०) ।

अविच्छिय—प्रसारित (ज्ञाटी प १४४)।
अविणयवइ—जार-पुरुष (दे १।१८ व)।
अविणयवर—जार-पुरुष (दे १।१८)।
अवियत्त—अप्रीति (व्यभा २ टी प ३४)।
अवियाउरी—१ प्रसव करने पर जिसकी सतान तत्काल मर जाती हो वह स्त्री (ज्ञा १।२।८)। २ वन्ध्या (आवचू १ पृ २६४)।
अविरल्ल—अविस्तारित, एकत्रित (व्यभा ४।४ टी प १०)।
अविरल्लण—अविस्तारित एकत्रित (व्यभा ५ टी प १०)।
अविराय—अविध्वस्त (जी ३।११८)।
अविरिक्क—अविभक्त (व्यभा ६ टी प ६)।
अविल—१ पशु। २ कठिन (दे १।५२)।
अविला—गड्डरिका (पिटी प २०)।
अविहाड—१ बालक, बच्चा—'देशीभाषया बालक' (बटी पृ ६०८)। २ अप्रकट (व्यभा ७ टी प ५)।
अविहाविअ—१ दीन। २ मौन (दे १।५६)।
अवेलि—खाद्य पदार्थ विशेष (अवि पृ ७१)।
अवेसि—द्वार फलक (दे १।८)।
अवेसिण—चौखट, द्वार फलिह (पा ७६१)।
अवोगिल्ल—अवाचाल—'महाराष्ट्रकमवागिल्लमवाचाल (व्यभा ७ टी प २५)।
अवोच्चत्थ—अविपरीत (निचू २ पृ १२६)।
अवोवच्छ—अविपर्यस्त (व्यभा ८ टी प ६)।
अव्वग—अक्षत (व्यभा ६ टी प ६६)।
अव्वा—जननी, माता (दे १।५)।
अव्वो—सम्बोधन-सूचक अव्यय (उसुटी प २१)।
अव्वोकड्ढ—खींचा हुआ—'उक्कड्ढमोक्कडे त्ति वा पुणो' (अवि पृ ८६)।
अव्वोगड—१ अविभक्त—'अव्वोगडमविभक्त (बभा ४७६६)। २ अविकृत—'अव्वोगड अविगड (व्यभा ७ टी प ६१)।
असखड—वाचिक कलह (निचू १ पृ ४६)।
असखडिय—कलह करने वाला (ओभा २२६)।
असखडी—कलह (प्रसाटी प २२८)।

असंगय—वस्त्र (दे १।३४)।

असंगिय—१ अश्व। २ अनवस्थित, चचल (दे १।५५)।

असंथड—असमर्थ (आचूला ४।३२)।

असंथडिय—अतृप्त (वृचू प २०८)।

असंथडी—अतृप्त (वृभा ५८१७)।

असंथर—१ दुर्भिक्ष–'असथर दुब्भिक्ख'। २ असमर्थ (निचू १ पृ ११६)। ३ अप्राप्ति। ४ अतृप्ति (व्यभा ४ टी प ८)।

असंथरंत—१ तृप्त न होता हुआ (ओनि १८३)। २ समर्थ न होता हुआ (ओनि २१०)।

असंथरण—१ निर्वाह का अभाव (आचू पृ ३३७)। २ असमर्थता (निचू १)। ३ पर्याप्त लाभ का अभाव (पंव ३)।

असंथरमाण—१ तृप्त न होता हुआ (नि १०।३२)। २ समर्थ न होता हुआ। ३ खोज न करता हुआ (व्यभा ४ टी प ७१)।

असंफर—नग्न पैर (वृभा ३८६५)।

असंफुर—ऐसा रोगी जिसकी शक्ति क्षीण होने के कारण पैर सकुचा जाते हैं और जो ठीक से सो नही पाता (वृभा ३६०७)।

असण—वृक्ष विशेष, एकास्थिक वृक्ष (भ ८।२१६)।

असधोण—प्रवास मे गए हुए (निचू २ पृ १४२)।

असरमाण—अनिर्वाह (निचू १ पृ ४१)।

असराल—प्रचुर–'असराललोहपडिवद्धो' (कु पृ ३७)।

असरासअ—कठोर हृदय वाला, निष्ठुर (दे १।४०)।

असवत्तअ—तृणविशेष–'दब्भो कुभीचक्को वा गोल्लविसए असवत्तओ भण्णति' (आचू पृ ३५७)।

असहोण—परदेश-गमन (निचू २ पृ १६१)।

असाढय—तृण-विशेष (प्रज्ञा १।४२)।

असारा—कदली-वृक्ष, केले का वृक्ष (दे १।१२)।

असारिय—निर्जन स्थान (वृटी पृ १३७१)।

असिअय—दात्र, दाती (भ १४।८५)।

असिय—दात्र, दांती–'असिएहिं लुणति' (ज्ञा १।७।१५, दे १।१४)।

असियग—शस्त्र-विशेष, दाती–'सत्थ वा असियगमादी' (सूचू २ पृ ३४१)।

असिया—मसा का रोग (आचू पृ ३७२)।

असीमालिका—कंठ का आभूषण (अवि पृ १६२)।

अह—दुःख (दे १।६)।

अहट्ट—आडम्बर, उपाधि (आवचू १ पृ ४४६)।

अहर—असमर्थ (दे १।१७)।

अहवण—१ अथवा—'अहवण' त्ति अखण्डमव्ययं अथवार्थे वर्त्तते' (बटी पृ ३०३)। २ वाक्यालंकार में प्रयुक्त होने वाला अव्यय।

अहव्वा—असती, कुलटा (दे १।१८)।

अहासयड—निष्कम्प, निश्चल—अहासयड नाम णिप्पकंप (निचू २ पृ १७०)।

अहिअल—कोप, क्रोध (दे १।३६)।

अहिआर—आजीविका, लोक-व्यवहार, जीवन-यात्रा (दे १।२६)।

अहिक्खण—१ उपालंभ (दे १।३५)। २ बार-बार—अभीक्ष्णमित्यर्थ (वृ)।

अहिगर—अजगर (जीव १)।

अहिगरणसाला—लोहकारशाला (भटी पृ १२८२)।

अहिगरणिखोडि—अहरन को रखने का काष्ठ-विशेष (भटी पृ १२८२)।

अहिगरी—अजगरी (जीव २)।

अहिड्डुय—पीड़ित (पा ५४६)।

अहिणुका—सांप की एक जाति (अवि पृ २२६)।

अहिणूका—सर्पिणी (अवि पृ ६६)।

अहिपच्चुइअ—१ अनुगमन, पीछे-पीछे चलना (दे १।४६)। २ आयात आगत।

अहिमर—१ वधक (निचू ३ पृ ३७)। २ आघात करने वाले चोर अथवा आदि को चुराने वाले चोर—अहिमरा णाम दहरचोरा, अग्गहणं या मारणं वा करेमाणा (निचू १ पृ ५३)।

अहिमार—पुष्प फल वाला वृक्ष विशेष (अवि पृ २३२)।

अहिमार—वृक्ष विशेष—एग अहिमारग्गाय (उशाटी प १४३)।

अहिरिक्क—उत्ताम भय (व्यभा ३ टी प ६२)।

अहिरोअ—निराश चीरा (दे १।२७)।

अहिरेमइअ—पूर्ण भरा हुआ (पा १४२)।

अहिलाण—मुख का आभरण-विशेष (अंगी पृ ८८२)।

अहिलिअ—१ अभिभव, पराभव । २ कोप (दे १।५७) ।

अहिलूका—चतुरिन्द्रिय जतु-विशेष (अवि पृ २३७) ।

अहिलोडिका—जीव-विशेष, गोपालिका (वृटी पृ १५४८) ।

अहिलोढी—सरटी, मादा गिरगिट—'अहिलोढी मरडी वि भण्णति' (दश्रुचू प ६८) ।

अहिल्ल—ईश्वर, धनवान् (दे १।१०) ।

अहिवण्ण—पीले और लाल रग वाला (दे १।३३) ।

अहिविण्णा—उपपत्नी (दे १।२५) ।

अहिसंधि—बार-बार, पुन-पुन (दे १।३२) ।

अहिसाय—परिपूर्ण (दे १।२०) ।

अहिसिअ—१ अनिष्ट ग्रहो की आशका से खेद करना, रोना (दे १।३०) । २ अनिष्ट ग्रह से भयभीत ।

अहिहर—१ देवकुल, पुराना मन्दिर । २ वल्मीक (दे १।५७) ।

अहिहाण—प्रशसा, स्तुति (दे १।२१) ।

अहोरण—उत्तरीय वस्त्र (दे १।२५) ।

आ

आअ—१ अध्ययन, परिच्छेद—'अज्झयणं अज्झीण आओ झवणा य एगट्ठा' (निचू १ पृ ५) । २ बहुत । ३ दीर्घ । ४ कठिन । ५ लोहा । ६ मुसल (दे १।७३) ।

आअड्डिअ—दूसरे की प्रेरणा से चलित (दे १।६८) ।

आअड्ढि—आकृष्ट (से १।१६) ।

आअर—१ उदूखल । २ कूर्च, दाढी (दे १।७४) ।

आअल्ल—१ रोग । २ चंचल (दे १।७५) ।

आअलिल—लताओं से सघन प्रदेश (दे १।६१) ।

आअल्ली—लताओं से सघन प्रदेश (दे १।६१) ।

आइं—वाक्य की शोभा के लिए प्रयुक्त अव्यय—'आइ ति देशभाषायाम्' (ज्ञाटी प १९५) ।

आइखणा—कणपिशाची देवी (प्रभा ११३)।

आइखणिया—१ कणपिशाचिका देवी। २ डोंबी, चाडाली—'आइखणिय त्ति इक्षणिका दैवना आख्यात्री लोकसिद्धा डोंबी (पवटी प २३२)।

आइखिणिया—१ डामिनी, चंडालिनी (व्रभा १३१२)। २ कण पिशाचिका देवी (निभा ४२६०)।

आइण्ण—१ कुलीन घोड़ा (प्र ४।७)। २ पिरोना—'मोत्तिय आइण्णता आगासे उक्खिवित्ता (आवहाटी १ पृ २८५)।

आइद्ध—प्रेरित (से ६।७)।

आइप्पण—१ चूर्ण, आटा। २ उत्सव में गृह शोभा के लिए चूना आदि की पुताई (दे १।७८)। ३ उत्सव के प्रसंग पर गृह गृहद्वार को सजाने के लिए गीले चावल के आटे से विभिन्न आकृतियों का निर्माण करना (व)।

आइसण—उज्झित, त्यक्त (दे १।७१)।

आउ—१ नक्षत्र देव विशेष (स्था २।३२४)। २ जल (सू २।१।२७, द १।६१)।

आउबालिय—आप्लावित (पा १३६)।

आउट्ट—१ आदर, सम्मान—'किं मम एद्दहेण आउट्टेण' (उनाटी प १४६)। २ प्रणत (व्यभा ६ टी प १८)। ३ करना—'करणार्थे आउट्ट शब्द' (दशचू प ६८)।

आउट्टण—निवेदन (बृभा २६३)।

आउट्टणा—आराधना प्रसन्न करना (निचू २ पृ १०६)।

आउट्टि—संयम (व्यभा १ टी प २४)।

आउट्टित—आराधित—आउट्टिता इट्टदाण देहिति (निचू २ पृ १०६)।

आउट्टिया—जानबूझकर—'आउट्टिया णाम आभोगा—जानान इत्यर्थ' (निचू ३ पृ ३१७)।

आउडिज्जमाण—१ आमवध्यमान। २ परस्पर आहन्यमान (भटी प २१६)। ३ पीटे जाते हुए (सू २।२।४०)।

आउर—संग्राम (दे १।६५)।

आउल—अरण्य (दे १।६२)।

आउलि—वृक्ष विशेष (पाजटी पृ ८६, दे ५।५)।

आउस—१ पराक्रम (नंदीटि पृ १३८)। २ कूर्च, दाढ़ी (दे १।६५)।

आऊडिअ—जुए में की जाने वाली प्रतिज्ञा (दे १।६८)।

आधारिका—तापसो का चर्ममय 'थोकनउ' जो काख मे धारण किया जाता है (नदीटि पृ १०१)।

आपुरायण—गोत्र-विशेप (अवि पृ १५०)।

आफकी—वृक्ष-विशेप (अवि पृ ७०)।

आफर—द्यूत, जुआ (दे १।६३)।

आभट्ठ—विज्ञप्त, सभापित (उशाटी प १७३)।

आभोग—उपकरण—'एगाभोग पडिग्गह केई सव्वाणि न य पुरओ', आभोग उपकरणम्' (ओनि ३६, टी प ३३)।

आभोगिणी—मानसिक निर्णय कराने वाली विद्या-विशेप (वृभा ४६३३)।

आमंड—आवला (आवहाटी १ पृ २६१)।

आमंडण—भाण्ड, पात्र (दे १।६८)।

आमंथिय (ओमंथिय ?)—ओधा किया हुआ (कु पृ २७)।

आमडाग—१ कच्चे पत्ते। २ अर्द्धपक्व या अपक्व मरणिक-तंदुलक (आटी प ३४८)।

आमलक—वहुवीजक वनस्पति-विशेप—'नवरमिहामलकादयो न लोक-प्रसिद्धा प्रतिपत्तव्या, तेपामेकास्थिकत्वात्, किन्तु देशविशेप-प्रसिद्धा वहुवीजका एव केचन' (प्रज्ञाटी प ३१)।

आमलय—१ नूपुर रखने की पेटी। २ सज्जागृह (दे १।६७)।

आमलिता—पूपिका (?) (आचू पृ ३४२)।

आमली—छोटे आंवलो का वृक्ष (अवि पृ ७०)।

आमिल—समस्त प्रकार के रोम, केश—'आमिलं सव्वरोमजाति' (दनि १५८, अचू पृ १४१)।

आमेल—केशो का एक प्रकार का जूडा, वालो को वाधने की एक पद्धति (दे १।६२)।

आमेलअ—आमोडक, वालों को वाधने का पुष्प-निर्मित वंध-विशेष (उशाटी प १४३)।

आमेलिअ—आपीड, पुष्पमाला (से ६।२१)।

आमोअ—हर्प (दे १।६४)।

आमोड—केशो का एक प्रकार का जूडा, वालो को वांधने की एक पद्धति (दे १।६२)।

आमोरअ—विशेषज्ञ, दक्ष (दे १।६६)।

आमोसल—गोत्र-विशेष (अंवि पृ १५०)।

आय—१ कुहन वनस्पति विशेष (प्रज्ञा १।४७)। २ वनस्पति विशेष से बना वस्त्र—'आय णाम तोमलिविसए सीयतलाए अयाण खुरेसु सेवालतरिया लग्गति तत्थ वत्था कीरति' (निचू २ पृ ३६६)। ३ देश विशेष की अजा-बकरी के सूक्ष्म रोम से निर्मित वस्त्र (आटी प ३६३)।

आयचण—गोमूत्र, गोबर, मगनी तथा खारी मिट्टी आदि(निचू ४ पृ ३५८)।

आयचणिया—कुंभकार का वह पात्र, जिसमें वह घड़ा आदि बनाते समय मिट्टी का पानी रखता है (भटी पृ १२५७)।

आयस—बैल आदि के गले का आभूषण—आदर्शस्तु वृषभादिग्रीवाभरण (अनुद्वारमटी प ४३)।

आयड्ढि—विस्तार (दे १।६४)।

आयल्ल—रोग (पा ८२)।

आयल्लय—बेचैन करने वाला, ददनाक—'आयल्लयवत्तो जइ वि तए साहिओ' (कु पृ १८१)।

आयावल—बाल आतप, प्रात कालीन सूर्य का आतप (दे १।७०)।

आयाम—१ बल। २ दीर्घ (दे १।६४)।

आयावल—सुबह की धूप (दे १।७०)।

आयावलय—सुबह की धूप (पा ६०६)।

आयासतल—प्रासाद का पिछला भाग (दे १।७२)।

आयासलव—पक्षिगृह, नीड (दे १।७२)।

आयुस—क्षुरकर्म, हजामत—ण्हाविता पुच्छिता—केण आउस कारित ?' (नन्दीटि पृ १३६)।

आयोइल्लाग—मेंदी (दश्रुचू प ३६)।

आरदर—१ जनसकुल। २ सकीर्ण (दे १।७८)।

आरमिअ—मालाकार, माली (दे १।७१)।

आरयुड—धातु-विशेष, पीतल (अवि पृ १६२)।

आरडिअ—१ विलाप, क्रन्दन। २ सचित्र (दे १।७५ वृ)।

आरण—अधर, होठ (दे १।७६)।

आरणाल—१ कमल (दे १।६७)। २ कांजी (वृ)।

आरद्ध—१ प्रवृद्ध। २ उत्सुक। ३ घर में आया हुआ (दे १।७५)।

आरनाल—१ कांजी—'कंजिय दगीभागाए आरनालं भण्णति' (निचू १ पृ ७८)। २ कमल (दे १।६७)।

आरवी—खर्जूरसार की गाली, अरब देश का दासा (पा १।१।८२)।

आराइअ—१ स्वीकृत । २ प्राप्त (दे १।७०) ।

आराडि—क्रन्दन (आवचू २ पृ १६५) ।

आराडी—१ विलाप । २ चित्रों से मडित (दे १।७५) ।

आरिग—आरी, शस्त्र-विशेष (पक २०२४) ।

आरिल्ल—तत्काल उत्पन्न (दे १।६३) ।

आरेइअ—१ मुकुलित । २ मुक्त । ३ भ्रान्त । ४ रोमाञ्चित, पुलकित (दे १।७७) ।

आरोग्गिअ—भक्षित, खाया हुआ (दे १।६९) ।

आरोट्ट—१ 'अरोडा' जाति-विशेष । २ छात्रजाति का सबोधन (कु पृ १५१) ।

आरोस—म्लेच्छ जाति-विशेष (प्र १।२०) ।

आरोह—स्तन (दे १।६३) ।

आल—१ व्यर्थ, निरर्थक—'मए आलो अब्भुवगओ, किं सक्का इयाणि निव्वहिउ ?' (वृटी पृ ५६) । २ कलक, दोषारोपण (प्रनाटी प १४५) । ३ छोटा प्रवाह । ४ कोमल, मृदु (दे १।७३) ।

आलइअ—पहना हुआ, आविद्ध—'आलइअमालमउडो' (आवहाटी १ पृ १२३) । देखें—लइअ ।

आलंकिअ—लगडा किया हुआ (दे १।६८) ।

आलंब—भूमिछत्र, वनस्पति-विशेष जो वर्षा मे उत्पन्न होती है (दे १।६४) ।

आलक—चतुरिन्द्रिय जतु-विशेष (अवि पृ २३७) ।

आलजाल—ऊलजलूल, निरर्थक—'आलजाल अणेगविहाइ सदेसकहं तेसिं दूर' (निचू ३ पृ ३५५) ।

आलत्थ—मयूर (दे १।६५) ।

आलप्पाल—१ आल-जजाल—'एय आलप्पाल अब्वो दूर विसवयइ' (उसुटी प २१) । २ दुराचार, कलक—'आलप्पाल आढत्त' (कु पृ ४७) ।

आलयण—शय्यागृह (दे १।६६) ।

आलास—वृश्चिक, विच्छू (दे १।६१) ।

आलि—वनस्पति-विशेष (जवूटी प ४५) ।

आलिंगिणी—१ जानु, कूर्पर आदि के नीचे रखने का तकिया (वृभा ३८२४) । २ रूई का बड़ा बिछौना (व्यभा १० टी प ७१) ।

आलिसद—धान्य विशेष (प्रज्ञा १।४५।१)।
आलिसदग—धान्य विशेष, चवला (भ ६।१३०)।
आलीघरय—वनस्पति विशेष (ना १।६।२०)।
आलील—निकट भविष्य म होने वाला भय (दे १।६५)।
आलीवण—प्रदीप्त अग्नि (दे १।७१)। पलेवणु (गुज)।
आलु—आलू, कन्द विशेष (भ २३।२)।
आलुका—कुण्डिका, छोटा घडा (अनुटी पृ ५)।
आलुगा—छोटा घडा (सूचू १ पृ ११७)।
आलुय—आलू, कद विशेष (भ २३।१)।
आलुया—कुडिका (अनुटी पृ ५)।
आवग—अपामार्ग का वृक्ष (दे १।६२)।
आवड्डिआ—१ नववधू। २ परतन्त्र स्त्री (दे १।७७)।
आवडिअ—१ सबद्ध। २ सार (दे १।७८)।
आवरेइअ—मारिका, मद्य परोसन का पात्र (दे १।७१)।
आवलिका—कठ का आभूपण–'हार अद्धहार-आवलिका' (अवि पृ १६२)।
आवल्ल—बलीवर्द, बैल (उशाटी प १६२)।
आवल्लक—१ नौका चलाने का एक साधन। २ वलयवाहा—नौका का लबा काष्ठ जिस पर ध्वजा बाधी जाती है–दीर्घकाष्ठलक्षणवाहुपु आवल्लकेष्विति सम्भाव्यते (नाटी प १४३)।
आवाडा—चिलात, एक अनार्य जाति–'आवाडा नाम चिलाता परिवसति (आवचू १ पृ १६४)।
आवाल—जल के निकट का प्रदेश (दे १।७० व)।
आवालय—जल के निकट का प्रदेश (दे १।७०)।
आवाह—१ वरपक्षसबंधी भोज (व्यभा ६ टी प ८)। २ नव विवाहित वर-वधू का लाना–'आवाह अभिनवपरणीतस्य वधूवरस्यानयनम् (प्रटी प १३६)।
आवि—१ प्रसव पीडा। २ नित्य। ३ दृष्ट, देखा हुआ (दे १।७३)।
आविअ—१ इन्द्रगोप, क्षुद्र कीट विशेष। २ मथित (दे १।७६)। ३ पिरोया हुआ (पा ६५५)।
आविअज्झा—१ नववधू। २ पराधीन स्त्री (दे १।७७)।
आविद्ध—प्रेरित (दे १।६३)।

आवेल्लक—नौका चलाने का साधन, डाट (ज्ञाटी प १४३)।

आवेल्लय—यानपात्र चलाने का साधन—'चालियाइं आवेल्लयाइं' (कु पृ ६७)।

आसंग—शयनकक्ष, वासगृह (दे १।६६)।

आसंघ—१ अध्यवसाय, परिणाम (से १।२५)। २ श्रद्धा। ३ आशंसा।

आसंघा—१ इच्छा (दे १।६३)। २ आस्था (बृ)। ३ आसक्ति।

आसंघिअ—१ अध्यवसित। २ अवधारित (से १०।६६)। ३ संभावित।

आसक्खअ—पक्षि-विशेष (दे १।६७)।

आसय—निकट (दे १।६५)।

आस'मिठ'—अश्व-प्रशिक्षक (नि ९।२५)।

आसरिअ—सम्मुख आया हुआ (दे १।६९)।

आसल—स्वादिष्ट (जीवटी प ३५१)।

आसवण—शयनकक्ष, वासगृह (दे १।६६)।

आसातिका—कृमि-विशेष (अवि पृ २२९)।

आसालिका—द्वीन्द्रिय जन्तु (अवि पृ २३७)।

आसिअअ—लोहमय, लोह-निर्मित (दे १।६७)।

आसित्तिया—खाद्य-विशेष—'विसाहाहिं आसित्तियाओ भोच्चा कज्जं साधेति' (सूर्य १०।१२०)।

आसिय—जाना, निकलना—'आसिय ति णिग्गच्छति' (निचू २ पृ २७६)।

आसियग—लोह निर्मित शस्त्र-विशेष (सूचू १ पृ ११६)।

आसियावण—अपहरण—'तुच्छलोभेण य आसियावणादी भवे दोसा' (निभा २४५२)।

आसियावित—अपहृत (निचू ३ पृ २१)।

आसीवअ—दरजी, वस्त्र सीने वाला (दे १।६९)।

आसीसा—आशीर्वाद (प्रा ३।१७४)।

आसूणिय—श्लाघा, प्रशंसा—'आसूणिक णाम श्लाघा, येन परैः स्तूयमानः सुज्जति' (सूचू १ पृ १७८)।

आसूय—औपयाचितक, मनौती (पिनि ४०५)।

आसेक्क—नपुंसक-विशेष (अवि पृ २२४)।

आहच्च—१ आकर, उपस्थित होकर—'संति संपाइमा पाणा, आहच्च संपयंतिय' (आ १।१६४)। २ कदाचिद् (प्रज्ञा १७।२)।

३ अत्यधिक (दे १।६२)। ४ शीघ्र। ५ व्यवस्था करके।
६ छीनकर। ७ अन्यथा। ८ निष्कारण।

आहट्ट—प्रहेलिका, पहेलिया—'तमु न विम्हयइ सय, आहट्ट-कुहडएहिं च' (बृभा १३०१)—'आहट्ट त्ति प्रहेलिका (प्रसाटी प १८०)।

आहरणा—खरंटि, धारण—'आहरणा धाग्यति घोरेण मराति महता शब्देन' (साटी प ८८)।

आहाडक—विलासयी प्राणी (अवि पृ २२६)।

आहाडोय—बार-बार आना-जाना (आवटि प २४)।

आहित्य—१ आकुल—'आहित्य उप्पिच्छ व आउल रोसभरिय च' (जीवटी प १६४, दे १।७६)। २ कुपित। ३ चलित (दे १।७६)।

आहिरिक्क—चनीमार (दश्रुचू प ४३)।

आहु—उल्लू (दे १।६१)।

आहुदुर—बालक—'आहुदुरा करि-हरीण (दे १।६६)।

आहुवुर—बालक (दे १।६६ व)।

आहुड—१ अनुराग की आवाज, सीत्कार—'रति म 'सी 'सी' की ध्वनि। २ वेचन योग्य वस्तु (दे १।७४)।

आहुडिअ—निपातित, गिराया हुआ (दे ६६)।

आहेण—१ विवाह के बाद वधू प्रवेश के समय किया जाने वाला भोज। २ अन्य घरों से लाई जाने वाली भोजन-सामग्री। ३ जो भोज्य-पदार्थ वधू के घर से वर के घर में ले जाया जाता है, वह। ४ वरपक्ष और वधूपक्ष का पारस्परिक लेन-देन—'अमन्नगिहाओ आणिज्जति त आहेण ज बहुगिहाओ वरगिह निज्जति ॥ आहेणं अहवा वरगृह ज आमन्न परोप्पर निज्जति त सव्व आहेण' (निचू ३ पृ २२२ २३)।

आहेणक—देखें—आहेण (निचू ३ पृ २२३)।

आहोडिय—आस्फालित, पूर-आहत (आपू पृ ३६३)।

इ

इंगिनि—[illegible]

चालिज्जति, तत्थ देवता काधिति, कहेतस्स पसिणापसिणं भवति, स एव इखिणि भण्णति' (निचू ३ पृ ३८३)।

इंखिणिया—१ अवहेलना–'अदु इखिणिया उ पाविया' (सू १।२।२४)। २ घुघरु, घटिका–इखिणियाओ–घटियाओ' (आवचू १ पृ १५७)।

इंखिणी—१ खिसणा, निन्दा–'अहऽसेयकरी अण्णेसि इखिणी' (सू १।२।२३) –'इखिणी णाम खिसणा निन्दणा हीलणा' (सूचू १ पृ ५६)। २ किंकिणी, छोटी घटिका (आवदी प ६०)।

इंगाली—इक्षुखण्ड (दे १।७६)।

इंघिय—घ्रात, सूघा हुआ (दे १।८०)।

इंचक—मत्स्य-विशेष (अवि पृ २२८)–'इंचका कुडुकालक सित्थमच्छका....'

इंदगाइ—वे कीट जो युक्त होकर एक के ऊपर एक चढकर घूमते है (दे १।८१)।

इंदग्गि—हिम, वर्फ (दे १।८०)।

इंदग्गिधूम—हिम, वर्फ (दे १।८०)।

इंदट्ठलअ—'इन्द्रमह' उत्सव की सपन्नता पर विधिपूर्वक 'इन्द्रध्वज' को हटाना (दे १।८२)

इंदट्ठलय—'इन्द्रमह' उत्सव की सपन्नता पर विधिपूर्वक 'इन्द्रध्वज' को हटाना (दे १।८२)।

इंदमह—१ कार्तिकेय। २ कुमारावस्था (दे १।८१)।

इंदमहकामुय—कुत्ता (दे १।८२)।

इंदिआलि—भूमीकर्म की विद्या का अभीष्ट शब्द, मत्र-विशेष का शब्द–'इमा भूमीकम्मस्स विज्जा—इदिआली इंदिआलि माहिंदे मारुदि स्वाहा' (अवि पृ ८)।

इंदिआली—भूमिकर्म की विद्या का अभीष्ट शब्द, मत्र-विशेष का शब्द (अवि पृ ८)।

इंदिंदिर—भ्रमर (दे १।७९)–'कैश्चित् इंदिदिर शब्दोऽपि देश्य उक्त'।

इंदोवत्त—इन्द्रगोपक, वर्षाऋतु मे होने वाला लाल या सफेद रग का कीट-विशेष (दे १।८१)।

इक—प्रवेश–'इकमप्पए पवेसणमेय' (विभा ३४८३)–'इकशब्दो देशीवचनः क्वापि प्रवेशार्थे वर्तते' (टी पृ ३४३)।

इक्कड—तृण विशेष—'वणस्सतिभेदा इक्कडा लाडाण पसिद्धा'
(निचू २ पृ ४८१)।

इक्कण—चोर (दे १।८०)।

इक्कलिया—अकेली (उसुटी प १४५)।

इक्कल्लय—अकेला (उसुटी प ११२)।

इक्कास—१ रस विशेष (अवि पृ १३४)। २ भोज्य (अवि पृ १०१)।
३ गुग्गुल वृक्ष का गोंद (अवि पृ २३२)।

इक्कुस—नीलोत्पल (दे १।७६)।

इग—अवयव, प्रदेश—'इगमवि देशीपद क्वापि प्रदेशार्थे वर्तते'
(आवहाटी १ पृ ३१६)।

इग्ग—भयभीत (दे १।७६)।

इग्घिअ—भर्त्सित (दे १।८०)।

इज्जा—१ मा। २ देवी। ३ देवपूजा—'इज्जत्ति वज्जा माया मज्जा भणिया
देवपूया वा इज्जा (अनुद्वाचू पृ १३), 'देशीभाषया इज्यति माता'
(अनुद्वामटी प २६)।

इट्टग—खाद्य विशेष,सेवई (पिनि ४६१)।

इट्टगा—खाद्य विशेष, सेवई (जीभा १३९७)।

इट्टाल—ईंट (दे ५।६५)।

इड्डुकार—वधकी, बढ़ई (अवि पृ १६१)।

इड्डुर—१ धान्य रखने का कोठा (अनुद्वा ३७५)। २ गाडी का एक अवयव
(ओटी पृ ३७४)। ३ ढक्कन (भटी प ३१३)।

इड्डरक—बडी पटी—इडडरक महत् पिटक येन समस्तापि स्थवती
स्थग्यते' (राजटी पृ ३२५)।

इड्डुरग—ढक्कन—'पईव इड्डुरय अतो अतो ओभासेइ , नो चेव
इड्डुरगस्स बाहिं' (भ ७।१५६)।

इड्डरय—ढक्कन—त पईव इड्डुरएण पीहज्जा (भ ७।१५६)।

इड्डुरिका—१ खाद्यविशेष, इडली—'रात्रिपरिवसनेन सम्पन्न इड्डुरिकादि,
यतस्ता पर्युषित श्लनीकृता अम्नरसा भवन्ति
(स्थाटी प २१३)। २ एक प्रकार की मिठाई(प्रश्नाटी प ५१)।
इडहरिगे—चावल का रवा और उड़द से निष्पन्न खाद्य विशेष
(कन्नड)।

इड्डुर—गाडी का एक अवयव (ओनि ४७८)।

इड्ढसिय—याचक-विशेष (भटी पृ ८८४)।

इणं—यह (दे १।७९ वृ)।

इण्हि—अब (पिनि ६३४, दे १।७९ वृ)।

इणमो—यह (दे १।७९ वृ)।

इतिपिंडि—भोज्य-विशेष—'सत्तुपिंडि... ....तप्पणपिंडि त्ति इतिपिंडि त्ति' (अवि पृ ७१)।

इत्ताहे—इस समय (व्यभा ४।३ टी प १६)।

इत्तोप्पं—इत प्रभृति, यहा से लेकर (पा ४४८)।

इत्थीदोस—व्यभिचारिणी—'इत्थीदोसो णाम व्यभिचारिणी' (सूचू १ पृ १०८)।

इदूर—सूत आदि से बुना हुआ धान्य रखने का साधन-विशेष—सुम्बादिव्यूर्त ढञ्चनकादि तदिदूर' (अनुद्वामटी प १३९)।

इदंड—भ्रमर (दे १।७९)।

इद्ध—चित्त—'इद्ध चित्त भण्णति' (जीभा २५२६)।

इब्भ—वणिक्, व्यापारी (दे १।७९)।

इय—१ इस प्रकार (वृभा २१५२)। २ प्रवेश।

इर—किल—सभावना, निश्चय आदि अर्थो का सूचक अव्यय (प्रा २।१८६)।

इरमंदिर—करभ, ऊट (दे १।८१)।

इरहा—अथवा—'जइ रायवसेण अन्नेण सम वसेज्जा। इरहा वभचारिणी' (उसुटी प ३०)।

इराव—हाथी (दे १।८०)।

इरिआ—कुटी, झोपडी (दे १।८०)।

इरिकाक—पुप्प-विशेप—'तधा चपगपुप्फ ति इरिकाक ति वा पुणो' (अवि पृ ६३)।

इरिण—१ स्वर्ण (दे १।७९)। २ सुन्दर—'रमणीयेसु इरिण वा' (अवि पृ १३४)।

इरिमंदिर—लक्ष्मी-मदिर—'इरिमदिरि पत्तहारतो गततो मज्झ कतो वणिजारतो' (दअचू पृ २८)।

इलअ—छुरिका—'इलएण छिहलि छिदित्ता भणति' (निचू १ पृ २१)।

इलिका—क्षुद्र जतु, इल्ली (अवि पृ २२९)।

इलिया—क्षुद्र जन्तु (वृभा १२०)।

इल्ल—१ दरिद्र । २ बालक । ३ प्रतीहार द्वारपाल । ४ सचिव ।
५ कृष्णवर्ण माला (दे १।८२) ।

इल्लि—१ व्याघ्र । २ सिंह । ३ छाता (दे १।८३) । ४ व्याघ्र चर्म से बना प्रावरण (अभि पृ ७१) ।

इल्लीर—१ गृहद्वार । २ वृषा, कुटिला का आसन । ३ वर्षा से बचने का साधन (दे १।८३) ।

इसिय—[illegible] (सू २।१।१७) ।

इहरा—अन्यथा ([illegible] प १६०) ।

ई

ईय—इस प्रकार (बृभा २१५०) ।

ईस—कीलक (दे १।८४) ।

ईसम—[illegible] (दे १।८४) ।

ईसर—मन्मथ (दे १।८४) ।

ईसिम—१ [illegible] । २ [illegible] (दे १।८४) ।

ईसिणिया—[illegible] (ज्ञा १।१।८०) ।

ईसी—[illegible] ([illegible] १ ६४) ।

उ

उअ—१ [illegible] ।
[illegible] (दे २।१११) ।
[illegible] (दे [illegible]) ।

उअअ—[illegible] (दे १ ६६) ।

[illegible]

[illegible]

उअचिय—परिकर्मित (औपटी पृ ३२)।

उअट्टी—नीवी, स्त्री का कटिवस्त्र या कटिवस्त्र के दी जाने वाली रस्सी की गाठ, नाडा (नारा) (पा ४९१)।

उअत्त—निष्क्रात, अतिक्रात–'जाहे जल वेलाए उअत्त भवति' (निचू ३ पृ १४०)।

उअपोत—आकीर्ण, व्याप्त–'उअपोते देशीपदत्वाद् आकीर्णे' (वृटी पृ ८८९)।

उअरी—शाकिनी, देवी-विशेष (दे १।९८)–'उच्छयवाडे मज्जारिरुवयाओ भमन्ति उअरीओ' (वृ)।

उअह—देखो–'उअह त्ति पेच्छहत्थे' (दे १।९८)।

उअहारी—दोहन करने वाली स्त्री (दे १।१०८)।

उआलि—अवतस, शिरोभूषण (दे १।९०)।

उइंतण—उत्तरीय वस्त्र, चादर (दे १।१०३)।

उंगुणी—वनस्पति-विशेष (अवि पृ ७०)।

उंचहिआ—चक्रधारा (दे १।१०९)।

उंछ—१ गर्ह्य, जुगुप्सनीय (सूटी १ प १०८)। २ छीपा, कपडो को छापने वाला (पा ७७०)।

उंछय—वस्त्र छापने का काम करने वाला (दे १।९८)।

उंजण—उत्सेचन (दजिचू पृ १५६)।

उंड—१ मुख–'देसीवयणतो उड–मुह' (अनुद्वाचू पृ १३)। २ ऊडा, गहरा (औपटी पृ ५, दे १।८५)–'खणिआ उड्डेहिं कूवया य अइउडा' (वृ)।

उंडअ—पाव मे पिण्डरूप मे लग जाए उतना गहरा कीचड (ओभा ३३) –'उडका –पिण्डकास्तद्रूपो यो भवति, पादयोर्य पिण्डरूपतया लगति स पिण्डक इत्यर्थः' (टी प २९)। उडे–मिट्टी, गोवर (कन्नड)।

उंडग—१ स्थण्डिल (द ४।२३)। २ पिण्ड, लोथडा–'वालाई मसउडग मज्जाराई विराहेज्जा' (ओभा २४६)।

उंडणाही—अतरिक्ष मे होने वाले क्षुद्र जतु–'अतलिक्खेसु सताणका उंडणाही घुक्कभरधा वा वि विण्णेया' (अवि पृ २२९)।

उंडय—मासपिण्ड–'तेसिं जीवंतगाण चेव हिययउडए गिण्हावेइ' (विपा १।५।१४)।

उंडरुक्क—मुह से वृषभ की भाति शब्द करना–'देसीवयणतो उड–मुह तेण

रुक्कति मद्दकरण, त च वसभढिक्किकयाइ' (अनुद्वाचू पृ १३)।

उडल—१ मच, मचान। २ समूह (दे १।१२९)।

उडि—मुद्रा (व्यभा ६ टी प ३५)।

उडिअ—मुद्रा वाला (व्यभा ६ टी प ३५)।

उडिय—मास पिण्ड—'तेसिं जीवतगाण चेव हियियउडियाओ गिण्हावेइ' (विपा १।२।१५)।

उडिया—मुद्रा-विशेष, पत्र पर लगाई जाने वाली मुहर (बृभा १८६) —'उडिया लेहस्स मुद्दा इति चूर्णौ' (टी पृ ६१)।

उडी—पिंड, गोलाकार वस्तु—'तत्थ ण एगा वणमयूरी दो पुट्ठे परियागए पिट्ठुडीपडुरे निव्वणे निरुवहए भिण्णमुट्ठिप्पमाणे मयूरी-अडए पसवइ' (ज्ञा १।३।५)।

उडुय—स्थान—'सपिंडपायमागम्म उडुय पडिलहिया' (द ५।१।८७)।

उडेरग—एक प्रकार का खाद्य (आवचू २ पृ ३१७)।

उडेरय—खाद्य वस्तु, बडा (आवचू २ पृ १६८)।

उढिय—सकुचित—'जह वा उढियपादे पाअ काऊण हत्थिणा पुरिसे' (व्यभा १० टी प ७३)।

उत—मत्र का अभीप्ट शब्द देव विशेष (अवि पृ ६)।

उदर—चूहा (उभाटी प १६६)।

उदु—मुख—'देशीवचन उदु—मुख (अनुद्वामटी प २६)।

उदुक—स्थान—'उदुम इति स्थानम्' (बटी पृ ३८०)।

उदुय—स्थान (बृभा १२२३)।

उदुर—१ वक्ष पर रहने वाला प्राणी-विशेष (अवि पृ २२६)। २ पर्वत की कन्दरा मे रहने वाला प्राणी-विशेष (अवि पृ २२७)।

उदुरल—मेघ्या दिन (दे १।१०५)।

उदुरी—चुहिया (अवि पृ ६६)।

उदुरवक—मुह से वृषभ की भाति शब्द करना—'उदुरवक ति देशीवचन उदु—मुख तेन रवक—वृषभादिशब्दकरणमुदुरवक स्वतादिपुग्नो वृषभगर्जितादिकरणमित्यर्थ' (अनुद्वामटी प २६)।

उदोइया—पुडिया (बृटी पृ २६०)।

उयमरिया—एकाम्यिक वनस्पति विशेष (भ ८।२१६।२)।

उयर—प्रचुर (दे १।९०)।

उयरउप्फ—गवी आदि अन्य अपूप उन्नति (दे १।११६)।

उंबा—बन्धन (दे १।८६)।

उंबी—पका हुआ गेहू (दे १।८६)।

उंबेभरिया—एकास्थिक वृक्ष-विशेष (प्रज्ञा १।३५)।

उकरड—कूडा-करकट डालने का स्थान—'भाषायाम् उकुरडो इति प्रसिद्धं मलनिक्षेपणस्थानम्' (राजटी पृ २६)।

उकुरटिका—अकुरड़ी, कूडा डालने का स्थान (ओटी प १६२)।

उक्क—पाद-पतन, पैरो मे गिरना (दे १।८५)।

उक्कंचण—१ बधन—'वंसग कडणोक्कचण छावण छेवण दुवार भूमी य' (वृभा ५८३)। २ माया (दश्रुचू प ४०)। ३ झूठी प्रशसा, चापलूसी, अगुणी के गुण बताना (ज्ञाटी प ८६)। ४ घूस, रिश्वत। ५ मूर्ख या भोले पुरुष को ठगने वाले धूर्त्त का, समीपस्थ विचक्षण व्यक्ति के भय से, कुछ समय के लिए निश्चेष्ट रहना (ज्ञाटी प २४५)। ६ मानोन्मान मे कुटिलता करने वाले ठग का, अधिकारी की उपस्थिति मे, कही यह राजा को मेरी शिकायत न कर दे, इस चिन्तन से छुप जाना (सूचू २ पृ ४६२)।

उक्कंठुलय—उत्सुक (कु पृ १३४)।

उक्कंडा—रिश्वत, लचा (दे १।६२)।

उक्कंति—कूपतुला, कुए से पानी खीचने का साधन (दे १।८७)।

उक्कंती—कूपतुला (दे १।८७)।

उक्कंदि—कूपतुला, कूप से पानी खीचने का साधन (दे १।८७)।

उक्कंदी—कूपतुला (दे १।८७)।

उक्कंपित—वास की खपचियो से वांधा हुआ (दश्रुचू प ६५)।

उक्कंविय—वास की खपचियो से वाधा हुआ—'कडिए वा उक्कविए वा छन्ने वा लित्ते वा' (आचूला २।१०)।

उक्कड—त्रीन्द्रिय जतु-विशेष (प्रज्ञा १।५०)।

उक्कडिअ—तोड़ा हुआ, छिन्न (पा ४९६)।

उक्कल—मकडी (उ ३६।१३७)।

उक्कलिय—१ त्रीन्द्रिय जन्तु, मकडी (प्रज्ञा १।५०)। २ उबला हुआ।

उक्कली—मकडी, लूता (दअचू पृ १८८)।

उक्का—कूपतुला, कुए से पानी खीचने का साधन (दे १।८७)।

उक्कारिका—खाद्य पदार्थ-विशेष (अवि पृ १८२)।

उक्कारिग—अलग होने का भेद विशेष, जैसे एरंड के बीज से छिल्का अलग होता है (सूचू १ पृ १३०)।

उक्कासिल—उत्थित, उठा हुआ (दे १।११४)।

उक्किट्ठि—निंदा—पाणिए निब्बुडडो, उक्किट्ठी कया, एवं डंभएहिं लागो खज्जइ त्ति' (आवहाटी १ पृ २७५)।

उक्कुड—उन्मत्त (दे १।९१)।

उक्कुट्ठ—आनन्द की महाध्वनि—'उत्कृष्टिनाद—आनन्दमहाध्वनिरित्यर्थ (प्रटी प ४९)।

उक्कुट्ठि—१ खुशी की ध्वनि (ति १३५)। २ ऊंचे स्वर मे पुकारना—'उक्कुट्ठी पुक्कारा' (जीभा १७२२)। ३ निंदा—'ण य कोलाहल करे, ण उक्कुट्ठिबोल वा करेज्ज रायससारिय वा (सूचू १ पृ १८२)।

उक्कुडनिक्कुडिया—बार बार उठ-बैठकर थाकना—'उक्कुडनिक्कुडियाहिं पलाएइ भिक्खा वेला हुया न व त्ति' (आवमटी प २८१)।

उक्कुडिक—कूडा करकट डालने का स्थान (अवि पृ २०६)।

उक्कुडुनिउडिया—बार बार उठ-बठकर थाकना—'उक्कुडुनिउडियाहिं पलोएति म वेल देसकालो भविस्सइ त्ति' (आवचू १ पृ २८६)।

उक्कुरुड—१ ईट काठ आदि का ढेर (बभा २६५३)। २ अकुरडी, घूरा, कचरा डालने का स्थान (बभा १६२५, दे १।११०)। ३ रत्नो की राशि—'उक्कुरुडा रत्नादीनामपि राशि (व)।

उक्कुरुडय—ढेर, कूडा डालने का स्थान (अनुद्वा ३४६)।

उक्कुरुडिक—घूरा, कूडा डालने का स्थान (अवि पृ २०६)।

उक्कुरडिया—कूडा डालने की जगह—एय तुम दारग एगत उक्कुरडियाए उज्झाहिं (विपा १।१।६५)।

उक्कुरुडी—घूरा, कचरा डालने का स्थान (दे १।११०)—'णच्चनि चडिल उक्कुरुडिं (वृ)।

उक्कुलिणी—गृह उपकरण, भाड विशेष (अवि पृ ७२)।

उक्केर—१ समूह (आनि ७०४)। २ उपहार, भेंट (दे १।९६)।

उक्केलाविय—ढकेलाया हुआ खनवाया हुआ—गहणा उक्केलाविपाइ घातयाइ निम्मवियाइ समतला (उसुटी प ६५)।

उक्केल्ल—उकेलना एक-एक कर उघाडना (दजिचू पृ १२४)।

उक्कोट—१ गाम्यकर (प्र ३।११)। २ रिश्वत (आचू पृ २३७)।

३ राजकुल मे दातव्य द्रव्य, वेगार तथा सैनिक आदि की भोजन-व्यवस्था (निचू ४ पृ २८०)।

उक्कोडभंग—राजकुल मे दातव्य की राजा द्वारा दी जाने वाली छूट, देखे—'खोडभग' (निचू ४ पृ २८०)।

उक्कोडा—रिश्वत, लचा (विपा १।१।४९; दे १।९२)।

उक्कोडी—प्रतिशब्द, प्रतिध्वनि (दे १।९४)।

उक्कोल—घाम, गरमी (दे १।८७)।

उक्कोस—अरुण रग का पक्षी-विशेष (अवि पृ २२५)।

उक्ख—जैन साध्वियो के पहनने के वस्त्र-विशेष का एक अंग—'परिधाण-वत्यस्स अब्भितरचूलाए उवरिकण्णो नाभिहेट्ठा उक्खो भण्णइ' (वृटी पृ ३३४)।

उक्खंड—१ सघात। २ विपमोन्नत प्रदेश (दे १।१२६)।

उक्खंडिय—आक्रात (दे १।११२)।

उक्खंद—छावनी, घेरा डालना (निचू २ पृ ४२७)।

उक्खडमड्डा—पुन पुन—'उक्खडमड्डा इति देशीपदमेतत् पुन. पुन शब्दार्थश्च' (व्यभा २ टी प ४७)।

उक्खणण—खाडना, निस्तुपीकरण (दे १।११५ वृ)।

उक्खणिअ—कडित, निस्तुपीकृत (दे १।११५)।

उक्खल—ओखली (निचू ३ पृ ३७८)।

उक्खलित—उन्मूलित, चलित (आचू पृ ३३९)।

उक्खलिय—उन्मूलित, उत्पाटित (से ६।२९)।

उक्खलिया—१ स्थाली, पात्र-विशेष (पिनि २५०) २ उलूखल, ऊखल (आवचू २ पृ ३१७)।

उक्खली—थाली, पिठर—'अलिदक त्ति पत्ति त्ति उक्खली थालिक त्ति वा' (अवि पृ ७२, दे १।८८)।

उक्खलुंपिय—खुजला कर—'णो गाहावइ अगुलियाए उक्खलुपिअ-उक्खलुपिअ जाएज्जा'—(आचूला १।६२)

उक्खल्लय—अगूठे को आच्छादित करने वाला जूता (आचू पृ ३५२)।

उक्खा—पिठर, स्थाली—'दोहिं उक्खाहिं परिएसिज्जमाणे पेहाए' (आचूला १।२१)।

उक्खिण्ण—१ अवकीर्ण। २ गुप्त, आवृत। ३ पार्श्व मे शिथिल, एक तरफ से ढीला (दे १।१३०)।

उक्खिन्न—व्याप्त (वृचू प १४१)।

उक्खिरण—दान, उपहार—'रहगमनो य विविधफले खज्जगे य कवड्डगवत्थ-
मादी य उक्खिरणे करेंति' (निचू ४ पृ १३१)।

उक्खिरणग—दान, उपहार (निभा ५७५४)।

उक्खुड—१ उल्मुक, अलात। २ समूह। ३ वस्त्र का एक भाग, अंचल
(दे १।१२५)।

उक्खुडहुच्चिय—उत्क्षिप्त, उछाला हुआ (दे १।४ वृ)।

उक्खुरुहुच्चिय—उत्क्षिप्त, उछाला हुआ (दे १।४ व)।

उक्खुलविय—खुजला कर (आटी प ३४०)।

उक्खुलविय—खुजला कर (आचूला १।६२ पा)।

उक्खुलणियत्थ—जिसके वस्त्र अस्त व्यस्त हो, वह (बृभा ४११२)।

उक्खुलि—ऊखली (अवि पृ १६३)।

उखड्डुमड्डा—बार बार—'उखड्डुमड्ड त्ति वा बहुसो त्ति भूयो भूयो त्ति वा पुणा
पुणा त्ति वा एगट्ठं (निचू ४ पृ ३०८)।

उखलिका—ऊखली (अवि पृ २२१)।

उखली—उलूखल, ऊखली (आवहाटी २ पृ २४३)।

उखा—थाली (भटी प ३२६)।

उखुल—अस्तव्यस्त (बृटी पृ ११२१)।

उगारिया—क्षुद्र जन्तु, दीमक (सूचू १ पृ १४५)।

उगाल—पनक (व्यभा ४।४ टी प १०२)।

उगाली—पनक (व्यभा ४।४ टी प १०२)।

उग्गह—योनिद्वार—'उग्गह इति जोणिदुवारस्स सामइयी सण्णा'
(निचू २ पृ १८६)।

उग्गहिय—अच्छे प्रकार से ग्रहण किया हुआ (दे १।१०४)।

उग्गाल—पान की पिचकारी (पव ३८)।

उग्गाहिय—१ गहीत। २ उत्क्षिप्त। ३ प्रवर्तित (दे १।१३७)। ४ उच्चालित
(पा ५४६)।

उग्गुंडिय—धूल से सना हुआ—'पमुउग्गुंडियगमणा' (भ ७।११६)।

उग्गुतिय—उत्तेजित—'सिंगाररसुगुतिया मोहकुवितफुंफगा' (दशचू पृ ५६)।

उग्गुलुंछिआ—हृदय रस का उछलना—१ भावातिरेक। २ वमन के पूर्व
के कारण होने वाला उथल-पुथल (दे १।११८)।

उग्घट्टि—अवतस, शिरोभूषण (दे १।९०)।

उग्घाडपोरिसि—प्रहर का तीन चौथाई भाग—'उद्घाटपौरुष्या समयभाषया पादोनप्रहरे' (प्रसा ५९० टी प १६६)।

उग्घाय—१ सघात। २ विषमोन्नत प्रदेश (दे १।१२६)।

उग्घुट्ट—१ पौरुष, शूरता (दे १।९९)। २ लुप्त, विनष्ट।

उचूलयालग—नीचा सिर और ऊपर पाव कर पानी मे डुबोना (विपाटी प ७२)।

उच्च—नाभितल (दे १।८६)।

उच्चंतग—दतराग, दांतों को रगने की मसी—'उच्चतगो दतरागो भन्नइ' (प्रज्ञाटी प ३६२)।

उच्चंपिअ—१ दवाया हुआ, रौंदा हुआ—'सीस उच्चपिअं कवधम्मि' (नदु १४९)। २ दीर्घ (दे १।११६)।

उच्चड्डिय—उत्क्षिप्त, ऊपर उछाला हुआ (दे १।१०६)।

उच्चत्त—निश्चित अवधि तक स्वामी के कथनानुसार कार्य करने वाला (भृतक)—'एच्चिरकालोच्चत्ते, कायव्वं कम्म ज वेंति' (निभा ३७२०)।

उच्चत्तवरत्त—१ दोनो पार्श्व मे स्थूल। २ अनियत भ्रमण (दे १।१३९)।

उच्चत्तवरत्तय—दोनो पार्श्वों को ऊचा-नीचा करना, इधर-उधर करना (पा ६६३)।

उच्चत्थ—दृढ, मजबूत (दे १।९७)।

उच्चप्प—आरूढ, ऊपर वैठा हुआ (दे १।१००)।

उच्चरग—कमरा, कक्ष (निचू १ पृ ६७)।

उच्चाड—विपुल (दे १।९७)।

उच्चाडिर—१ रोकनेवाला। २ अफसोस करने वाला (प्रा २।१९३)।

उच्चात—परिश्रान्त (व्यभा ६ टी प २५)।

उच्चाय—परिश्रान्त (ओनि ५१८)। २ आलिंगन, परिरम्भ।

उच्चार—विमल, स्वच्छ (दे १।९७)।

उच्चारिय—गृहीत (दे १।११४)।

उच्चिइय—आभूषण-विशेष (जीवटी प १४७)।

उच्चिवलय—गदा पानी (पा १५८)।

उच्चिडिम—मर्यादा-रहित, निर्लज्ज—'उच्चिडिमं मुक्कमज्जाय' (पा ५११)।

उच्चुंच—दृप्त, अभिमानी (दे १।९९)।

उच्चुप्पिय—आरूढ (दे १।१००)।

उच्चुलउलिय—कुतूहलवश त्वरता से जाना (दे १।१२१)।

उच्चुल्ल—१ उदविग्न। २ अधिरूढ, चढा हुआ। ३ भयभीत (दे २।१२७)।

उच्चूर—विविध प्रकार—'उच्चूरपउरलभे' (व्यभा ४।२ टी प ८२)।

उच्चेल्लर—१ हल आदि से बिना जोती हुई भूमी। २ साथल के रोम (दे १।१३६)।

उच्चेव—प्रकट (दे १।९७)।

उच्चोल—१ विश्रान्त। २ नीवी, स्त्री के अधोवस्त्र के दोनों छोरों पर दी जाने वाली गांठ (दे १।१३१)। ३ चुल्लू, चुलुक—'पाणिए उच्चाल-एहिं मारिज्जइ' (आवहाटी २ पृ १२५)।

उच्चोली—गठरी—'परिकरेण बधइ चुण्णस्स उच्चोलीओ (सूचू १ पृ १९३ टि)।

उच्छ—आंतों का आवरण (दे १।८५)।

उच्छंगिय—पुरस्कृत (दे १।१०७)।

उच्छट्ट—जल्दी जल्दी चोरी करना (दे १।१०१)।

उच्छटअ—शीघ्र चोरी करना (पा ६७६)।

उच्छद—छीला हुआ, तोड़ा हुआ (आचू पृ ३४४)।

उच्छदण—मदन, अभ्यंगन—'मक्खणउब्भगण उच्छदण उव्वट्टण' (अंवि पृ १९१)।

उच्छट्टु—चोर, डाकू (दे १।१०१)।

उच्छडिय—चुराई हुई वस्तु (दे १।११२)।

उच्छय—व्याप्त—'देवेहि य देवीहि य समतओ उच्छय गयण (आवहाटी १ पृ १२३)।

उच्छल्लिउ—एक ओर ले जाकर—'उच्छल्लिउ ति एकपार्श्वे नयित्वा (निचू १ पृ ९८)।

उच्छल्लिस्तु—एक ओर ले जाकर (निचू १ पृ ९८)।

उच्छल्लिय—१ एक ओर ले जाकर (निभा २८१) २ जिसकी छाल छील दी गई हो वह (दे १।१११)।

उच्छविय—शय्या बिछौना (दे १।१०३)।

उच्छाह—सूत का तंतु (दे १।९२)।

उच्छिंदण—१ ब्याज पर लेना। २ उधार लेना (पिनि ३१७)।

उच्छिपक—चोरों का एक प्रकार (प्र ३।३)।

उच्छित्त—१ विक्षिप्त। २ उत्क्षिप्त (दे १।१२४)।

उच्छिल्ल—छिद्र (दे १।९५)।

उच्छु—१ राई (उसुटी प ५९)। २ वायु, पवन (दे १।८५)।

उच्छुअ—भय से की हुई चोरी (दे १।९५)।

उच्छुअरण—ईक्षु का खेत (दे १।११७)।

उच्छुआर—संछन्न, ढका हुआ (दे १।११५)।

उच्छुआरिअ—छादित, ढका हुआ (दे १।११५ वृ)।

उच्छुंडिअ—१ वाण आदि से अत्यन्त व्यथित। २ अपहृत (दे १।१३५)।

उच्छुच्छु—दृप्त, अभिमानी (दे १।९९)।

उच्छुड्डु—आहत—'ततो उच्छुड्ड फुमति रागो लगति' (निचू २ पृ २२०)।

उच्छुद्ध—१ विक्षिप्त—'उच्छुद्धणयणकोसे' (अनु ३।५२)। २ रोगग्रस्त —'उच्छुद्धसरीरे वा, दुव्वलतवसोसिते व जो होज्जा' (बृभा ४५५८)। ३ परित्यक्त (बृभा ३१३२)। ४ विखरा हुआ (ओभा २२१)।

उच्छुर—अविनश्वर (दे १।९०)।

उच्छुरण—१ ईख का खेत (दे १।११७)। २ ईख—'उच्छुरण इक्षुरिति केचित्' (वृ)।

उच्छुल्ल—१ अनुवाद। २ विश्रान्त (दे १।१३१)।

उच्छूढ—चुराना, अपहरण करना—'साय एकल्लयाइं जायाइ चोरेहिं उच्छूढाइं' (बृटी पृ १०८)।

उच्छूर—१ असमय, विलव—'रन्धनवेला तामुच्छूर एव करोति येन साधोरपि भक्त भवति' (ओटी प १४८)। २ प्रचुर (निचू ३ पृ २०६)।

उच्छूरिय—सुप्रावृत—'उच्छूरिया णडी विव दीसति कुप्पासगादीहिं' (बृभा ४१२५)।

उच्छूलग—परिखा, शत्रु-सेना का नाश करने के लिए ऊपर से आच्छादित गर्त्त-विशेष (उ ९।१८ पा)।

उच्छेव—१ छत का नीचे गिरना—'परिपेलवच्छातितेे णेव्वे गलण उच्छेवो' (निचू २ पृ ३३८)। २ दीवार का छेद (व्यभा ४।४ टी प ६)।

उच्छेवण—घृत (दे १।११६)।

उच्छोलणा—प्रचुर जल (द ४।२६)—'उच्छोलणा—पभूओदगेण' (जिचू पृ १६४)।

उजल्ल—वलवान् (प्रा २।१७४)।

उज्जगल—१ बलात्कार। २ दीघ (दे १।१३५)।

उज्जग्गिर—जागृति, अनिद्रा (दे १।११७)।

उज्जगुज्ज—स्वच्छ (दे १।११३)।

उज्जड—उजाड, बस्ती-रहित स्थान (दे १।९६)।

उज्जणिअ—टेढा, वक्र (दे १।१११)।

उज्जर—१ प्रवाह (आवहाटी २ पृ ८७)। २ मध्यगत, भीतर का। ३ निजरण, क्षय।

उज्जल—अत्यधिक—'वेयणा पाउब्भूया—उज्जला विउला कक्खडा (अत ३।९०)।

उज्जला—छोटी सघाटी (व्यभा ७ टी प ४५)।

उज्जल्ल—१ पसीने से लथपथ, मलिन—'मुडा कडू विणट्ठगा, उज्जल्ला असमाहिया' (सू १।३।१०)। २ हठ (प्रा २।१७४)।

उज्जल्ला—१ अत्यन्त मलिन (बृभा २४५७)। २ बलात्कार (दे १।९७)।

उज्जाण—प्रतिलामगामी नौका (निभा १८३)।

उज्जाणिय—नीचा किया हुआ (दे १।११३)।

उज्जात—(विवेक) शून्य (सूचू १ पृ ६१)।

उज्जीरिय—अपमानित, तिरस्कृत (दे १।११२)।

उज्जुग—बिल—'उज्जुग बिल (दशुचू प ६८)।

उज्जूरिय—१ क्षीण (दे १।११२)। २ शुष्क (व)।

उज्जूहिगा—जगल की ओर जाने वाली गायों का समूह—'गोसखडी उज्जूहिगा भ नति' (निचू ३ पृ ३४८)।

उज्जोमिआ—रस्सी, डोरी (दे १।११५)।

उज्जोवण—१ गायो को चरने के लिए खुला छोडना। २ गाडी आदि को चलान म प्रवृत्त होना—'उज्जावण ति गावीण पसरण सगडादीण वा पयट्टण (निचू २ पृ ६)।

उज्झखणी—१ लोकापवाद (निभा ६५८)। २ फुहार, शीतल वायु—'दगवातो सीतभरो, सा य उज्झखणी भण्णति (निचू २ पृ ३३८)

उज्झमण—पलायन (दे १।१०३)।

उज्झरिय—१ टेढी नजर से देखा हुआ, कानी आख से देखा हुआ। २ विनि... पागत। ३ क्षिप्त, फेंका हुआ। ४ त्यक्त (दे १।१३३)।

उज्झस—उद्यम, प्रयत्न (दे १।९५)।

उज्झाइ—विरूप, मैला (वृभा ३९१३)।

उज्झाइग—विरूप (वृभा ३९९४)।

उज्झिखिअ—लोकापवाद, लोक-निन्दा (दे ३।५५ वृ)।

उट्ट—१ जल-जतु विशेप। २ सिंधु देश के कोमल चमड़ी वाले मत्स्य-विशेप—'उट्टा मच्छा सिंधुविसए, तेसिं चम्मयं मउय भवति' (आचू पृ ३६४)। ३ कुत्ते की आकृति वाले जलचर प्राणियों का चर्म (निचू २ पृ ४००)। देखें—'उट्ठ'।

उट्टिक—वडा भाजन-विशेप (अवि पृ २१४)।

उट्टिया—पात्र-विशेप (अवि पृ २२१)।

उट्ठ—१ घड़े आदि का किनारा, कागरा—'वोडो जस्स उट्ठा णत्थि' (आवचू १ पृ १२२)। २ कुत्ते की आकृति वाले जलचर प्राणियो का चमडा—'सुणगागिती जलचरा सत्ता तेसिं अजिणा उट्ठा' (निचू २ पृ ४००)।

उट्ठल—उल्लास (दे १।९१)।

उट्ठल्ल—उल्लास (दे १।९१)।

उट्ठी—१ मुट्ठी। २ अंश—'महीए एका उट्ठी छुब्भइ' (आवहाटी २ पृ ९०)।

उट्ठोणा—उठकर—'उट्ठोणा (? उट्ठित्ता) से ण इमं लोग तिरिय करेति' (सूचू १ पृ २११)।

उडद—उरद, माप (निरटी पृ २७)।

उडिद—उरद, माप (दे १।९८)।

उडु—तृण का आच्छादन (दे १।८६)।

उडुक्किय—दातो से काट कर दागी करना—'सव्वतउसाणि दतेहिं उडुक्कियाणि' (दअचू पृ २९)। उडि—काटना, टुकड़े करना (कन्नड)।

उडुरुक्क—मुह से वृपभ की भाति शब्द करना (अनुद्वाहाटी पृ १९)।

उडुरुक्ख—मुह से वृपभ की भाति शब्द करना—'उडुरुक्खं ति देशीवचन वृपभगर्जितकरणाद्यर्थम्' (अनुद्वाहाटी पृ १९)।

उड्डुहिय—१ विवाहित स्त्री का कोप। २ जूठा, उच्छिष्ट (दे १।१३७)।

उड्ड—१ दीर्घ, वडा (सू १।५।३४)। २ उडीसा देश का वासी (प्र १।२१)। ३ कुआ आदि खादने वाला (निभा ३७२०, दे १।८५)। ओड्ड (कन्नड)। ४ तीव्र (आचू पृ १४३)। ५ कूप (आवटि प २४)।

उड्डंचक—उड्डाह, उपहास—'देशीपदमेतत्' (वृटी पृ १६०)।

उड्डचग—१ उपहास करने वाला (निभा १०६५)। २ याचक—'उदञ्चका याचका' (वृटी पृ १६०)।

उड्डचय—अवहेलना—'वदणादिसु उड्डचये करेज्ज' (निचू २ पृ १७२)।

उड्डडग—वे भिक्षु जो पाणिपात्र होते हैं (आचू पृ १६६)।

उड्डवालग—कोतवाल—'तत्थ चारियत्ति काऊण उड्डवालगा अगडे पक्खि-विज्जंति (आवहाटी १ पृ १३६)।

उड्डस—खटमल (उ ३६।१३७)।

उड्डुण—अंगीकार—'तत्थोड्डुण अप्पणो कुणति' (व्यभा ४।३ टी प १८)। २ दीघ। ३ बैल (दे १।१२३)।

उड्डुरुट्ठ—प्रद्विष्ट (आचू पृ १४३)।

उड्डुस—खटमल (दे १।९६)।

उड्डुहण—१ लोकापवाद (निचू ३ पृ ४९८)। २ चोर (दे १।१०१)।

उड्डाल—उद्गम, उदय (दे १।९१)।

उड्डाण—१ प्रतिध्वनि। २ कुरर पक्षी। ३ विष्ठा। ४ अभिमानी। ५ मनोरथ (दे १।१२८)।

उड्डावणक—आकर्षण—'तस्स कड्ढणट्ठाए उड्डावणक करेति' (निचू ४ पृ ७६)।

उड्डास—संताप परिताप (दे १।९६)।

उड्डाह—निंदा (पिनि ४१४)।

उड्डिआहरण—छुरी के अग्रभाग पर रखे हुए फूल को पाव की अगुलियो से लेकर ऊपर उछलना (दे १।१२१)।

उड्डिय—१ उत्क्षिप्त, फेंका हुआ—'वस्सेण हेसिय पट्ठी च उड्डिया' (निचू ४ पृ ३४३)। २ वचन के लिए रखना (आवहाटी १ पृ २६४)।

उड्डिहिअ—ऊपर फेंका हुआ (पा ५१७)।

उड्डुय—डकार (आचूला ८।२९)।

उड्डुयर—जो मलमूत्र का विसर्जन करते हुए चचलता के कारण हाथ आदि पर भी लेप लगा लेता है (वृटी पृ ५१४)।

उड्डुहिअ—छिन्न (दे १।१०५ व)।

उड्डोय—१ डकार (जीभा ९०८)। २ उवाक, आवाई (निचू ३ पृ ८०)।

उड्ढ—१ दीघ, बड़ा (सू १।५।३४)। २ वमन (वृटी पृ १५३६)। ३ पात्र का किनारा (निचू ४ पृ १५७)।

उड्ढल—उल्लास (दे १।६१)।

उड्ढल्ल—उल्लास (दे १।६१)।

उणुयत्त—अवस्थित, ठहरा हुआ—'सावि तं पलोएंती तहेव उणुयत्तेति' (आवहाटी १ पृ १८२)।

उण्णम—समुन्नत (दे १।८८)।

उण्णलिय—१ कृश, दुर्बल। २ ऊंचा किया हुआ (दे १।१३६)।

उण्णुइअ—१ हुकार। २ आकाश की ओर मुह किए हुए कुत्ते की आवाज (दे १।१३२)। ३ गर्वित (व्यभा ४।२ टी प ६६)।

उण्हाली—चतुष्पद प्राणी-विशेष—'मज्जारी मुगसी व त्ति उण्हाली अडिल त्ति वा' (अवि पृ ६६)।

उण्हिआ—खिचडी (दे १।८८)।

उण्हेला—कीट-विशेष, घृतपिपीलिका—'उण्हेला णाम तेल्लपाइयाओ, तातो तिक्खेहि तुडेहि अतीव दसति' (आवमटी प २८६)।

उण्होदयभंड—भ्रमर (दे १।१२०)।

उण्होलक—वृक्ष-विशेष (अंवि पृ ६३)।

उण्होला क्षुद्र जन्तु-विशेष—'उण्होला-तेल्लपातियाओ। तातो तिक्खेहि अतीव दसति' (आवचू १ पृ ३०४)।

उतपोत—आकीर्ण (वृभा ३१७२)।

उत्तइय—उत्तेजित (दअचू पृ ५६ पा)।

उत्तंपिअ—खिन्न, उद्विग्न (दे १।१०२)।

उत्तप्प—१ गर्वित। २ अधिक गुण वाला (दे १।१३१)।

उत्तम्मिअ—खिन्न (दे १।१०२)।

उत्तरणवरंडिआ—उडुप, नौका, जहाज आदि (दे १।१२२)—'समुद्रनद्यादौ जलतरणोपकरण प्रवहणादि' (वृ)।

उत्तरणवरंडी—जलसतरण के साधन नौका आदि—'भवउत्तरणवरंडि सभर सव्वण्णुमण्णहा तुज्झ। णरगोत्तिरिविडिमज्झे होही उत्थल्ल-पत्थल्ला॥' (दे १।१२२ वृ)।

उत्तरिविडि—एक के ऊपर एक रखे हुए भाजनो का ढेर (दे १।१२२ पा)।

उत्तलहअ—वृक्ष (दे १।११६)।

उत्ताणपत्त—एरण्ड से संवधित, एरण्ड के पत्ते (दे १।१२० वृ)।

उत्ताणपत्तय—एरण्ड-सवधी, एरण्ड के पत्ते (दे १।१२०)।

उत्ताणय—तत्पर (आवचू १)।

उत्ताल—लगातार रुदन, अंतर रहित क्रन्दन की आवाज (दे १।१०१)।

उत्तावल—१ उतावल, शीघ्रता। २ शीघ्रकारी, आकुल—'उत्तावलो सहियत्था' (कु पृ १८०)।

उत्ताहिय—ऊपर उछाला हुआ (दे १।१०६)।

उत्तिग—१ चीटियों का बिल (आ ८।१०६)। २ सपच्छत्र वनस्पति (द ८।११)। ३ छिद्र—'उत्तिगा पुण छिड्ड' (निभा ६०१८)।

उत्तिरिविडि—एक के ऊपर एक रखे हुए भाजनों का ढेर (दे १।१२२)। उतरड (गुज), उत्तरड (मराठी)।

उत्तुइय—उत्तेजित (दनि ११९ पा)।

उत्तुण—अभिमानी, गर्वयुक्त (उसुटी प २३४, दे १।६६)।

उत्तुपित—चिकना किया हुआ (प्रटी प ५६)।

उत्तुपिय—स्निग्ध, चिकना (प्र ३।१६)।

उत्तुयय—उत्तेजित (व्यभा ६ टी प ३२)।

उत्तुरिद्धि—१ अभिमानी (दे १।६६)। २ दर्प गर्व (वृ)।

उत्तुहिअ—उत्पाटित, छिन्न, नष्ट (दे १।१०५)।

उत्तूइय—गर्व—'एव भणितो मता उतूल्ओ सा कहेइ सव्व—उत्तूइओ त्ति दशीपदमेतद् गर्वं वनत' (व्यभा ४।२ टी प ६६)।

उत्तुहु—तटशून्य कूप (दे १।६४)।

उत्तेड—बिंदु—'भटगपासवलग्गा उत्तेटा बुंदुया न सम्मति' (पिनि १६)।

उत्थंघिय—उत्थापित (से ५।६०)।

उत्थंघ—मर्दन, उपमर्द (दे १।६३)।

उत्थरिय—१ उत्थित (द ७।६२)। २ आक्रांत (पा ५८५)। ३ निर्गत।

उत्थलिअ—१ गृह। २ ऊंचा गया हुआ (दे १।१०७)।

उत्थल्ल—उथलना, पलटना (दअचू पृ ११५)।

उत्थल्लण—धकेलना, उछालना (प्र ३।१०)।

उत्थल्लपत्थल्लण—उथल-पुथल—'उत्थल्ल-पत्थल्लणेण भुक्तम्' (ओटी प १६२)।

उत्थल्लपत्थल्ला—दोनों पार्श्वों से परिवर्तन, उथल-पुथल (दे १।११२)।

उत्थल्ला—१ परिवर्तन (दे १।६३)। २ उद्वर्तन।

उत्थाण—अतिसार रोग (व्यभा ७ टी प ८५)।

उदअ—गढा, अवपात–'गर्त्ताविशेषेषु उदक इत्येवरूढेषु' (प्रटी प २२)।

उदंक—जल का पात्र-विशेष जिससे जल ऊंचा छिड़का जाता है (जीवटी प १४६)।

उदकघसर—नाली, मोरी (ओटी पृ ३६५)।

उदग—अनतकायिक वनस्पति–'तत्थ उदग नाम अणंतवणप्फई, से भणिय च उदए अवए पणए सेवाले' (दजिचू पृ २७७)।

उदरिय—१ आजीविका के लिए इधर उधर घूमने वाले। २ पाथेय युक्त यात्री–'उदरिया णाम जहिं गता तेहिं चेव स्वगावी छोटु समुट्ठि-सति पच्छा गम्मति। गहियसवला उदरिया' (निचू ४ पृ ११०)।

उदसी—छाछ–'तक्कं उदसी छासि त्ति एगट्ठ' (निचू १ पृ ९२)।

उदाण—वनस्पति का एक प्रकार (अवि पृ २६६)।

उदूक्खल—मुशल–'मुशल उक्खलं वा' (आचू पृ ३३९)।

उद्द—१ सिन्धु देश के मत्स्य-विशेष–'उद्रा सिन्धुविषये मत्स्या'। २ मत्स्य-चर्म का बना हुआ वस्त्र-विशेष (आचूला ५।१५, टी प ३९३)। —देखें–'उट्ट'। ३ जल-मानुष। ४ ककुद, बैल के कधे का कूबड (दे १।१२३)।

उद्दंसग—मत्कुण, त्रीन्द्रिय जन्तु-विशेष (प्रज्ञा १।५०)।

उद्दद्दर—सुभिक्ष–'दुविधा दरा–धण्णदरा पोट्टदरा य, ते उद्द जाव भरिया तं उद्दद्दर भण्णति। पर्यायवचनेन सुभिक्षमित्यर्थः' (निचू ३ पृ ८०)।

उद्दरिअ—१ उखाडा हुआ (दे १।१००)। २ स्फुटित, विकसित (पा ५१३)। ३ उद्दीपित (नदीटि पृ १०१)। ४ युद्ध से पलायित।

उद्दा—ऊदविलाव, जलमार्जार (सू १।७।१५)।

उद्दाइंत—शोभमान (ज्ञा १।१।३३)।

उद्दाइय—दीमक, कीट (निचू १ पृ १५५)।

उद्दाण—१ परित्यक्त (निचू २ पृ १४)। २ मृत–'उद्दाणे भोइयम्मि चेडयाइ वदामि' (उसुटी प २)। ३ चुल्हा (दे १।८७)।

उद्दाणग—मृत–'उद्दाणग जायं त मए विगिंचियं' (आवहाटी २ पृ १४०)।

उद्दाणभत्तारा—पति के द्वारा परित्यक्त स्त्री–'उद्दाणभत्तारा भत्तारेण परिठविता' (निचू २ पृ १४)।

उद्दाम—१ सघात। २ विषमोन्नत प्रदेश (दे १।१२६)।

उद्दाल—वृक्ष-विशेष (जीव ३।५८१)।

उद्दालक—वृक्ष-विशेष (जीवटी प १४५)।

उद्दिक—घट का एक प्रकार (अवि पृ २५५)।
उद्दिट्ठा—अमावस्या (स्था ४।३६२)।
उद्दिसिअ—उत्प्रेक्षित (दे १।१०६)।
उद्दीढ—भक्षित, खाया हुआ (निचू ३ पृ ५८७)।
उद्दुडुग—उपहास का पात्र (बभा ४००२)।
उद्दूढ—१ चुराया हुआ, मुषित—'देशीवचनत्वाद मुषित (वटी पृ ८२५)।
२ पराजित (अवि पृ २५०)।
उद्देसग—जतु विशेष, दीमक (जीवटी प ३२)।
उद्देहि—उपदेहिका, दीमक (दे १।९३)।
उद्देहिगा—१ दीमक। २ दीमक द्वारा कृत वल्मीक की मिट्टी (पिटी प २०)।
उद्देहिया—दीमक—'उद्देहियाखइय वा कट्ठ दुवन' (आचू पृ २१२)।
उद्धइय—आभ्यतर—'उद्धइयाहि देसीभासातो ज अभतर वुच्चति'। (आचू पृ २१५)।
उद्धच्छवि—विसवादित, विपरीत, अप्रमाणित (दे १।११४)।
उद्धच्छविअ—सज्जित (दे १।११९)।
उद्धच्छिअ—निषिद्ध (दे १।१११)।
उद्धट्ट—ऊचा (सूचू १ पृ १०४)।
उद्धट्टक—उपहास पैदा करने वाली भाषा या आवाज (वटी पृ १६७०)।
उद्धत्थ—विप्रलब्ध, वचित (दे १।९६)।
उद्धरण—उच्छिष्ट, जूठा (दे १।१०६)।
उद्धवअ—उत्क्षिप्त, ऊपर फेंका हुआ (दे १।१०६)।
उद्धविअ—पूजित (दे १।१०७)।
उद्धाअ—१ ऊबड खाबड प्रदेश, ऊचा-नीचा प्रदेश। २ श्रान्त, थका हुआ। ३ सघात, समूह (दे १।१२४)।
उद्धाण—उदवसित, उजडा हुआ (व्यभा ४।४ टी प ७०)।
उद्धाविय—समुद्रचारी डाकू आदि अत्यन्त क्रूर मनुष्य—'किं वा अह सभग्गो त्ति चितयता च्चिय सहसा उद्धाविएहिं बद्धो (कु पृ ६६)।
उद्धि—गाडी का एक अवयव (सूय १०।३७)। उध (गुज)।
उद्धुमात—व्याप्त (नन्दीचू पृ ६)।
उद्धुमाय—पूर्ण (पा १८२)।

उधेइ—दीमक (निचू ३ पृ १२४)। उदई (राज)।

उन्नालिअ—उन्नामित, ऊंचा किया हुआ (पा ५०८)।

उपघसर—नाली, मोरी (ओटी पृ ३६५ पा)।

उपासना—नापित-कर्म, हजामत—'उपासना नाम श्मश्रुकर्त्तनादिरूपं नापित-कर्म' (आवमटी प १६६)।

उप्पंक—१ कर्दम, पंक। २ ऊंचाई। ३ समूह। ४ अत्यधिक (दे १।१३०)।

उप्पर—ऊपर (जीभा १४६२)।

उप्पल—संख्या-विशेष—'चतुरशीतिरुत्पलाङ्ग-शतसहस्राणि एकमुत्पलम्' (जीवटी प ३४५)।

उप्पलंग—संख्या-विशेष (भ ५।१८)।

उप्पल्लाणित—अश्व से पलाण उतारना—'उप्पल्लाणितो आसो। विस्सामितो राया' (उसुटी प २५१)।

उप्पाडक—त्रीन्द्रिय जन्तु-विशेष (अवि पृ २६७)।

उप्पातिका—मत्स्य की एक जाति (अवि पृ २२८)।

उप्पाय—त्रीन्द्रिय जन्तु-विशेष (प्रज्ञा १।५०)।

उप्पाहल—उत्कण्ठा (पा ८०३)।

उप्पि—ऊपर (अनु ३।६)।

उप्पिगलिआ—करोत्संग, हाथ को गोदरूप बनाना (दे १।११८)।

उप्पिजल—१ मैथुन। २ धूल। ३ अपकीर्ति, अपयश (दे १।१३५)।

उप्पिच्छ—१ त्वरित। २ तीव्र श्वास—'श्वासयुत त्वरित वा' (अनुद्वाचू पृ ४६)। ३ त्रस्त, भीत (ज्ञाटी प १६८)। ४ आकुल। ५ कुपित—'उप्पिच्छ नाम आकुलम् आहित्य उप्पिच्छं च आउल रोसभरियं च' (जीवटी प १६४)।

उप्पित्थ—१ व्याकुल—'उप्पित्थशब्दस्त्रस्तव्याकुलवाची देशीति क्वचित्' (से ११।४०)। २ लयबद्ध श्वास (राजटी पृ १८६)। ३ कुपित। ४ विधुर (दे १।१२६)।

उप्पियण—बार-बार श्वास लेना (व्यभा ४।४ टी प ५०)।

उप्पीड—समूह, राशि (से ४।३७)।

उप्पील—१ संघात, समूह—'पसरिओ बहुलो धूमुप्पीलो' (कु पृ १०८, दे १।१२६)। २ विषमोन्नत-प्रदेश (दे १।१२६)।

उप्पुय—उत्सुक (प्रटी प ५२)।

उप्पेल—अभ्यंग, तैल आदि से मालिस—'उप्पल देशीपदमेतत् अभ्यङ्गम' (व्यभा ६ टी प १०)।

उप्पेस—त्रास (से १०।६१)।

उप्पेहड—१ उदभट, तीव्र (दे १।११६)। २ आडंबरयुक्त (पा ६०)।

उप्फदोल—अस्थिर (दे १।१०२)।

उप्फल्ल—दुर्जन, खल (ति ६०१)।

उप्फाल—दुर्जन (ति ६००, दे १।६०)।

उप्फिस—उफनना (वटी)।

उप्फुकिआ—धोबिन, कपडा धोने वाली (दे १।११४)।

उप्फुडिअ—बिछाया हुआ, आस्तृत (दे १।११३)।

उप्फुण्ण—आपूर्ण, भरा हुआ (दे १।६२)।

उप्फुन्न—स्पृष्ट, छुआ हुआ (प्रसाटी प ३०४)।

उप्फुल्लसिगा—प्रज्वलित अंगीठी (सूचू १ पृ १२५)।

उप्फेणउप्फेणिय—क्रोध से उफनते हुए—'उप्फेणउप्फेणियं सीहसेणं रायं एवं वयासी' (विपा १।६।१८)।

उप्फेणओफेणीय—क्रोध से उफनते हुए (विपाटी प ८३)।

उप्फेस—१ मुकुट (स्था ५।७२)। २ त्रास, भय (दे १।६४)। ३ अपवाद, निन्दा (व)।

उप्फेसण—त्रास, भय (उसुटी प ५८)।

उप्फेसया—निन्दा—'अमरिसजण उप्फेसया ण हु सहियव्वा कुले पसूएण' (दे १।६४ व)।

उप्फोअ—उद्गम, उदय (दे १।६१)।

उप्फोस—१ त्रास (निभा १४८०)। २ प्रक्षालन (निभा ४०८५)।

उप्फोसण—सिंचन, छिडकाव—'आवरिसण पाणिएण उप्फोसण' (निचू २ पृ १७५)।

उबेड्ड—अन्तःप्रविष्ट (आवचू २ पृ १६५)।

उब्बिब—१ खिन्न। २ शून्य। ३ भयभीत। ४ उद्भट, उग्र। ५ त्रस्त। ६ प्रकट वेष वाला (दे १।१२७)।

उब्बिबल—कलुषित जल, मैला पानी (दे १।१११)।

उब्बुक्क—१ प्रलपित। २ संकट। ३ बलात्कार (दे १।१२८)।

उब्बुड्ड—अन्तःप्रविष्ट, गडी हुई—'उब्बुड्डणयणकोसे' (अनुटी प ७)।

उब्बूर—१ अधिक। २ सघात, समूह। ३ स्थपुट, विषमोन्नत प्रदेश (दे १।१२६)।

उब्भ—१ खडा हुआ (निचू १ पृ ५४)। २ ऊर्ध्व (दे १।८६ वृ)।

उब्भंड—फूहड, अस्त-व्यस्त वेशभूषा (वृभा ६१५७)।

उब्भंत—ग्लान (दे १।९५)।

उब्भग्ग—व्याप्त (दे १।९५)–'तिमिरोब्भग्गणिसाए' (वृ)।

उब्भज्जी—क्षीरपेया–'कलमोतणो उ पयसा, उक्कोसो हाणि कोद्दवुब्भज्जी' (ओभा ३०७)।

उब्भट्ठ—मागा हुआ–'उब्भट्ठपरिन्नायं अन्न लद्ध पओयणे घेत्वी' (पिनि २८१)।

उब्भाअ—शात (दे १।९६)।

उब्भालण—१ धान्य को छाज आदि से साफ-सुथरा करना (दे १।१०३)। २ अपूर्व (वृ)।

उब्भालिअ—सूर्प आदि से साफ किया हुआ (पा ५३८)।

उब्भावण—परिभव (ओनि १४८)।

उब्भावणा—अपभ्राजना, तिरस्कार (उशाटी प १६६)।

उब्भाविअ—मैथुन (दे १।११७ वृ)।

उब्भासुअ—शोभा-हीन (दे १।११०)।

उब्भुआइअ—उभरा हुआ (दे १।१०५ वृ)।

उब्भुआण—उफनता हुआ, अग्नि से तप्त दूध आदि का उछलना (दे १।१०५)।

उब्भुग्ग—चल, अस्थिर (दे १।१०२)।

उब्भुत्तिअ—उद्दीपित, प्रदीपित (पा १६)।

उब्भुभंड—भाड-विशेष (अवि पृ १९३)।

उब्भे—तुम सब (दे १।८६ वृ)।

उभज्झी—क्षीरपेया (ओटी प १९६)।

उमत्थिय—बाधकर–'सव्वोवही (एगट्ठा कज्जति भायण उमत्थिए) एगट्ठाणे पुढो कज्जति' (निचू ३ पृ ३७४)।

उमाण—प्रवेश–'उमाणं ति प्रवेशः' (आटी प ३२६)।

उमुत्तिल्लय—१ बहु-मूत्र रोगवाला। २ मूत्राशय मे सूजनवाला–'जेण वा कट्ठाइणा सचालेति त सविसं उमुत्तिल्लयं वा खय वा कट्ठेण हवेज्जा' (निचू २ पृ २८)।

उम्मइअ—मूढ, मूर्ख (दे १।१०२)।

उम्मड—१ हठ, आग्रह। २ उद्‌वृत्त, बचा हुआ (दे १।१२४)।

उम्मच्छ—१ असम्बद्ध। २ भंगयुक्त, विकल्प से कथित। ३ क्रोध (दे १।१२५)।

उम्मच्छविअ—उद्‌भट, तीव्र (दे १।११६)।

उम्मच्छिअ—१ रुष्ट। २ आकुल (दे १।१३७)।

उम्मड्डा—बलात्कार (दे १।६७)।

उम्मत्त—१ धतूरा (दे १।८६)। २ एरण्ड (व)।

उम्मत्थ—अधोमुख, विपरीत (दे १।६३)।

उम्मर—देहली (आचू पृ ३६४, दे १।६८)।

उम्मरिअ—उत्खात (दे १।१००)।

उम्मल—जमा हुआ, स्त्यान, कठिन (दे १।६१)।

उम्मल्ल—१ नप। २ मेघ। ३ पुष्ट पीवर। ४ बलात्कार (दे १।१३१)।

उम्मल्ला—तृष्णा (दे १।६४)।

उम्माल—देवता को चढ़ाई गई वस्तु निर्माल्य (पा ३५२)।

उम्मुह—अभिमानी (दे १।६६)।

उम्हाविअ—मैथुन (दे १।११७)।

उयचित—परिकर्मित, मस्कारित (नाटी प १७)।

उयचिय—परिकर्मित (नाटी प १७)।

उयट्टिणी—जघा—उयट्टिणीए णीणेऊण दरिसिआ—जघाया निष्काश्य दर्शित' (उनाटी प ११८)।

उयट्टी—१ घटी। २ जघा—'जेण घेत्तु उयट्टीए छूढो—येन गहीत्वा घटया (जघाया ?) क्षिप्त (उनाटी प ११८)।

उयणिसय—रहस्य-कला, जादू-टोना, मूगटनी कला (कु पृ २२)।

उयरिय—उतरकर—'मज्झे वा उयरिय पाणिय पियह (ओटा पृ ३६२)।

उयरी—गभवती (कु पृ १६२)।

उयल्ल—मृत—जाह अदिस्सा जाआ ना' तहठिया चेव रागसमोहियमणा उयल्ला' (आवहाटी १ पृ १८२)।

उयविय—शीत न न पर—'उयविए प्रगाधिते अधमरत' (व्यभा ६ टी प ४७)।

उर—आरम्भ (दे १।८६)।

उरंउरेण—साक्षात्–'रहबलेण वा चाउरंगेण पि उरउरेणं गिण्हित्तए' (विपा १।३।५०) ।

उरंमुह—ओंधेमुह–'परंमुहा पडतु उरमुहा पासेल्लिया (वा)' ? (आवहाटी १ पृ २८५) ।

उरच्छक—मद्य का बडा पात्र (अवि पृ २५९) ।

उरणा—वेणी मे गूथा जाने वाला ऊन का आभरण (अवि पृ ६४) ।

उरणि—जन्तु-विशेष (बृभा ५८८३) ।

उरणी—त्रीन्द्रिय जतु-विशेष (अवि पृ २३७) ।

उरत्त—खण्डित, विदारित (दे १।९०) ।

उरत्थय—कवच, वर्म (पा २७४) ।

उररि—पशु, बकरा (दे १।८८) ।

उरल—१ स्थूल, बडा । २ असघन, विरल–'उरल ति विरल न तु घनम्' (प्रज्ञाटी प २६९) ।

उराल—१ सुन्दर–'अणुस्सुओ उरालेसु जयमाणो परिव्वए' (सू १।९।३०) । २ प्रधान (स्था १०।१०३) । ३ भीषण–'भीमा भय भेरवा उराला' (उ १५।१४) । ४ विशाल, विस्तृत–'भण्णइ य तहोराल वित्थरवतवणस्सति पप्प । पयतीय णत्थि अण्णं एद्दहमेत्तं विसालति ॥' (अनुद्वाहाटी पृ ८७) । ५ हरित वनस्पति-विशेष (प्रज्ञा १।४४) ।

उरालक—धान्य-विशेष (अवि पृ ६६) ।

उरालिय—औदारिक शरीर–'मंसट्ठिण्हारुबद्ध उरालियं समयपरिभासा' (अनुद्वाहाटी पृ ८७) ।

उरिणण—कपास निकालना (ओटी पृ ३७३ पा) ।

उरुणण—कपास निकालना (ओटी पृ ३७३) ।

उरुणी—गृह-उपकरण (अवि पृ १४२) ।

उरुपुल्ल—१ अपूप, पूआ । २ धान्यो के मिश्रण से बना खाद्य, खिचड़ी आदि (दे १।१३४) ।

उरुमिल्ल—प्रेरित (दे १।१०८) ।

उरुलुंचग—त्रीन्द्रिय जन्तु-विशेष (प्रज्ञा १।५०) ।

उरुसोल्ल—प्रेरित (दे १।१०८) ।

उलइय (ओलइय ?)—लटका दिया (व्यभा १० टी प ८०) ।

उलग—हल चलाने वाला–'उलगादिभतओ भतीए घेप्पति' (दश्रुचू प ३८) ।

उलणा—दवी विशेष (अवि पृ २२३)।
उलवी—पानी को सुगंधित करनेवाला एक प्रकार का घास (पा ६२८)।
उलाण—बाज पक्षी—'उलाणसिंगतससयाण आलच्छइयाए
(निचू २ पृ २८१)।
उलिअ—निकूणित आख वाला, टेढी आख वाला (दे १।८८)।
उलित्त—ऊंचा कुआ, ऊंची भूमी पर स्थित कुआ (दे १।८६)।
उलुउंडिअ—१ प्रलुठित। २ विरेचित (दे १।११६)।
उलुकसिअ—पुलकित (दे १।११५)।
उलुखड—उन्मुक, अलात (दे १।१०७)।
उलुफुंटिअ—१ विनिपातित। २ प्रशान्त (दे १।१३८)।
उलुहंत—काक, कौआ (दे १।१०६)।
उलुहलिअ—जो कभी तृप्त नहीं होता, अतृप्त (दे १।११७)।
उल्लअण—वपण (से ११।५१)।
उल्लकय—काष्ठपात्र—'उल्लकओ कट्ठमओ पत्तो (निभा ४११३)।
उल्लचिय—खाली करना—'सो तस्स कए समुद्द उल्लचिउमाढत्तो'
(आवहाटी १ पृ २७६)।
उल्लठ—उद्धत—'उल्लठवयणा विप्पाणि करेंति (उसुटी प ६६)।
उल्लडग—मिट्टी का गोला—'उल्लडगा परिवज्जति मदगोलकमित्यथ'
(निचू ३ पृ १६०)।
उल्लडिअ—बाहर निकाला हुआ, रिक्त किया हुआ (पा ५६२)।
उल्लग—कृश, क्षीण—'मा उल्लगसरीरा जाया' (उशाटी प ३००)।
उल्लढ—शुष्क, सूखा (ओटी पृ ३५६ पा)।
उल्लण—छाछ से गीला किया हुआ ओदन, खाद्य विशेष (पिनि ६२४)।
उल्लणिया—शरीर पोछने का वस्त्र, तोलिया (उपा १।२६)।
उल्लत्थपल्लत्थ—असमजस, उलट पलट, अव्यवस्थित—'उल्लत्थपल्लत्था से
आलावया दिज्जति (आवहाटी २ पृ ६१)।
उल्लद—उतार कर—'तत्थ बइल्ले उल्लदेत्ता उवक्खडेंति'
(आवहाटी १ पृ १६४)।
उल्लरय—कौडियों का आभूषण (दे १।११०)।
उल्ललिअ—शिथिल, ढीला (दे १।१०४)।
उल्लसिय—पुलकित (दे १।११५)।

उल्लाय—पाद-प्रहार (तदु १६२) ।

उल्लायक—कर्मजीवी (अंवि पृ ६०) ।

उल्लिअ—१ खीचा हुआ, छीला हुआ—'उल्लियो फालिओ गहिओ मारिओ य अणतसो' (उ १९।६४) । २ उपागत (कु पृ १६१) ।

उल्ली—काई, शैवाल—'पणओ उल्ली' (निचू २ पृ १६७) । २ दांत पर जमनेवाली पपडी—'उल्ली दतेसु दुग्गधा' (आवचू २ पृ ७२) । ३ चुल्हा,चुल्ली (दे १।८७) ।

उल्लुंटिअ—चूर्णित, चूरा-चूरा किया हुआ (दे १।१०९) ।

उल्लुक्क—त्रुटित, टूटा हुआ (दे १।९२) ।

उल्लुग—विकृत, त्रुटित (प्रटी प २२) ।

उल्लुट्ट—मिथ्या (दे १।८९) ।

उल्लुरुह—छोटा शख (दे १।१०५) ।

उल्लूड—विध्वस (व्यभा ५ टी प ७) ।

उल्लूडित—विध्वसित, नष्ट (व्यभा ५ टी प ७) ।

उल्लूढ—१ आरूढ (दे १।१००) । २ अकुरित (वृ) ।

उल्लूरधूविता—खाद्य-पदार्थ-विशेष (अवि पृ ७१) ।

उल्लूरिया—मिठाई (उसुटी प ८६) ।

उल्लूह—शुष्क, सूखा—'उल्लूह च नलवण हरियं जाय' (ओटी प ३५६) ।

उल्लेव—हास्य, हसी (दे १।१०२) ।

उल्लेवअ—हसी, हास्य (दे १।१०२ वृ) ।

उल्लेहड—लम्पट, लुब्ध (दे १।१०४) ।

उल्लोइय—खड़ी आदि से भीत को पोतना (जंबू १।३७) ।

उल्लोग—थोडा, अल्प (वृभा १६०५) ।

उल्लोच—वितान, चदोवा (दे १।९८) ।

उल्लोट्ट—अपवर्तन, मुडना (प्रटी प ८६) ।

उल्लोपिक—भोज्य-पदार्थ-विशेष (अवि पृ १८२) ।

उल्लोय—चदोवा, वितान (वृभा ५६८१) ।

उल्लोल—१ शत्रु (ति ८८५; दे १।९९) । २ जलतरग (पा ५६) । ३ कोलाहल ।

उल्लोहित—पुता हुआ—'उल्लोहित उव्वलित तधा उच्छाडितं ति वा' (अवि पृ १०६) ।

उल्हक—छोटा चूल्हा (पिनि ५४)।
उल्हसिअ—उद्भट, तीव्र (दे १।११६)।
उव—पक्षी-विशेष (अवि पृ ६२)।
उवअ—हाथी को पकडने के लिए बनाया गया गर्त (पा ६००)।
उवइक—दीमक (वटी पृ १६६६)।
उवइग—दीमक (निचू १ पृ ६६)।
उवइय—त्रीन्द्रिय जन्तु विशेष (जीव १।८८)।
उवउज्ज—उपकार (दे १।१०८)।
उवएइआ—मद्य परोसने का पात्र (दे १।११८)।
उवक्क—गढा, खातिका (नूटी पृ २२२)।
उवकय—सज्जित (दे १।११६)।
उवकयय—सज्जित (दे १।११६ वृ)।
उवकसिअ—१ सन्निहित, पास में पडा हुआ। २ परिसेवित। ३ सज्जित, मष्ट (दे १।१३८)।
उवक्खडाम—कारडू, जो धान्य-कण पकाने पर भी नहीं पकता—'उवक्खडाम णाम जहा चणयादीण उक्खडियाण जे ण सिज्झति ते कण्डुया, ते उवक्खडाम भण्णति' दशें—कंकडुय' (निचू ३ पृ ४८४)।
उवग—१ याप्य—'उवगा नाम याप्या' (सूचू १ पृ ४५)। २ गढा (निचू ४ पृ ४८)।
उवचिक—त्रीन्द्रिय जंतु विशेष (अवि पृ २६७)।
उवचुल्ल—छोटा चूल्हा (निचू १ पृ ८२)।
उवचुल्लग—छोटा चूल्हा (निचू १ पृ ८२)।
उवजगल—दीर्घ (दे १।११६)।
उवट्टिअ—अनाथ, अशरण—'उवट्टितो अणाहा असरणेत्यर्थ (निचू १ पृ १२२)।
उवतिग—दीमक—'मचारोवतिगादी, मजम आयाऽहि विच्छुगादीया। (वभा ६३२२)।
उवत्थवण—अस्तमन (वेला) (निचू १ पृ ८७)।
उवदीव—द्वीपान्तर, अन्यद्वीप (दे १।१०६)।
उवयिय—त्रीन्द्रिय जन्तु विशेष (जीवटी प ३२)।।
उवर—कक्ष, कोठरी, तलघर (निभा १७३)।

उवरिग—माल का निरीक्षण करने वाला अधिकारी—'सामि ! येनेह उवरिगो जो भड निरुवेइ' (उसुटी प ६५)।

उवरिल्ल—ऊपर (पक १४१)।

उवरिल्लअ—मजबूत वस्त्र, मोटा कपड़ा—'विरइओ उवरिल्लएण पासो, णिवद्धो य कीलए' (कु पृ ५३)।

उवरेग—व्यापाररहित—'तत्थ वरिसमेत्त उवरेग गओ' (उसुटी प ७६)।

उवलभत्ता—कगन (दे १।१२०)।

उवलयभग्गा—कगन (दे १।१२०)।

उवललय—मैथुन (दे १।११७)।

उवलुअ—लज्जायुक्त, लज्जालु (दे १।१०७)।

उवलेद्द—सन्तुष्ट—'तीसे महिलाए कप्पासमोल्लं दिन्न, सा य उवलेद्दा' (उशाटी प १९२)।

उवसग्ग—मद (दे १।११३)।

उवसेर—रति-योग्य (दे १।१०४)।

उवहत्थिय—समारचित, सज्जित (दे १।११६ वृ)।

उवहा—मच्छ (निभा ४२२३ पा)।

उवहावण—परिभव (ओटी प १३१)।

उवाई—'पोताकी' विद्या की प्रतिपक्षी विद्या (उसुटी प ७३)।

उवातिय—खाद्य-विशेष (निचू ३ पृ ५२१)।

उवारस—एक प्रकार का प्रावरण—'उवारसा कवला खरडगपारिगादि पावारगा' (निचू २ पृ ४००)।

उवासणा—क्षौरकर्म, हजामत (वृभा २०६७)।

उविअ—१ सस्कारित, परिकर्मित (ज्ञा १।१।२४)। २ शीघ्र (दे १।८६)।

उव्वक्क—धौत, दूध मे भिगोकर निकाला हुआ—'जह पुण ते चेव तिला उसिणोदगधोयखीरउव्वक्का' (व्यभा ३ टी प ११०)।

उव्वट्ट—१ नीराग, रागरहित। २ गलित (दे १।१२९ वृ)।

उव्वट्टी—नीवी, स्त्री के कटिवस्त्र की नाडी (दे १।१५१ पा)।

उव्वण्ण—उत्कण्ठित (व्यभा ७ टी प ६)।

उव्वत्त—१ रागरहित। गलित (दे १।१२९)।

उव्वर—१ कक्ष, तलघर—'पुव्वखओ जो भूघरोव्वरो' (निचू १ पृ ६७)। २ धान्य रखने का कोठा (वृभा ३२९९)। ३ घाम, ऊष्मा (दे १।८७)।

उव्वरअ—कोष्ठागार—'उव्वरओ त्ति वा कोट्ठगो त्ति वा एगट्ठ विशेपचूर्णी' (वटी पृ ६२६)।

उव्वरग—कोठरी—'सव्वोवगरण उव्वरगे छुभति, अह णत्थि उव्वरगा तो सव्वोवकरण एगकोणे करेंति' (निचू २ पृ १७८)।

उव्वरिअ—१ अधिक। २ अनीप्सित। ३ निश्चित। ४ ताप। ५ अगणित (दे १।१३२)। ६ अतिक्रान्त, उल्लंघित।

उव्वविय—तीन इन्द्रिय वाला जन्तु विशेष (जीव १।८८)।

उव्वहण—महान् आवेश (दे १।११०)।

उव्वा—घम, ताप (दे १।८७)।

उव्वाअ—खिन्न (दे १।१०२)।

उव्वाउल—१ गीत। २ उपवन (दे १।१३४)।

उव्वाडुअ—१ विपरीत मैथुन। २ मर्यादा शून्य मथुन (दे १।१३३)।

उव्वाढ—१ विस्तीर्ण विशाल। २ दुःखमुक्त (दे १।१२६)।

उव्वात—श्रान्त, थका हुआ (निचू ४ पृ २८७)।

उव्वाय—परिश्रान्त थका हुआ—'धावन्तो उव्वाओ मग्गन्नू किं न गच्छइ कमेण' (वभा ३२०)।

उव्वाह—घम, ताप (दे १।८७)।

उव्वाहिअ—उत्क्षिप्त, ऊपर उछाला हुआ (दे १।१०६)।

उव्वाहुल—१ कामासक्ति से उत्पन्न उत्सुकता। २ द्वेष्य, द्वेष-पात्र (दे १।१३६)।

उव्विडिम—१ अधिक प्रमाणवाला। २ मर्यादारहित स्वच्छंद (दे १।१३४)।

उव्वियार—भूकंप—'उव्वियारा जलोहता ततणाए मताट्ठित (इ ४५।१४)।

उव्विरव—१ उद्भट वेषयुक्त (पा ५६७)। २ क्रुद्ध।

उव्वीढ—उत्खात, खोदा हुआ (दे १।१००)।

उव्वुण्ण—१ उद्विग्न। २ उत्सिक्त। ३ उद्भट, तीव्र। ४ शून्य (दे १।१२३)।

उव्वेत्ताल—निरन्तर रुदन (दे १।१०१)।

उव्वेल्लय—त्वरा—'एसा सो चेय मओ चल चलुव्वेल्लय करेण (सु पृ १८६)।

उव्वेल्लिर—१ उत्फुल्ल, चपल (सु पृ ७८)। २ शीघ्रगामी (सु पृ २०१)।

उव्वेहलिया—वनस्पति-विशेष (भ २३।४)।

उव्वेहासित—ऊंचा किया हुआ (अवि पृ १४८)।

उसणसेण—बलभद्र (दे १।११८)।

उसणी—एक प्रकार का धान्य जिसमे से तेल निकलता है (अंवि पृ २३२)।

उसद्ध—उत्कृष्ट—'उसद्धं—उत्कृष्टं' (आचू पृ ३६२)।

उसध—पुष्प-विशेष (अंवि पृ २३२)।

उसीर—पद्मनाल, कमलनाल (दे १।६४)।

उसु—बालक का इषु के आकार का एक आभरण (पिनि ४२४)।
२ तिलक—'उसू तिलगा' (निचू ३ पृ ४०७)।

उसुअ—दूषण, भूल (दे १।८६)।

उसुक—तिलक, आभरण-विशेष (निचू ३ पृ ४०७)।

उसुकाल—उदूखल (निचू ३ पृ ३७८)।

उसुयाल—ऊखल, उदूखल (आचूला ५।३६)।

उस्स—ओस (स्था ४।६४०)।

उस्सण्ण—१ प्राय (बृभा २०४)। २ प्रभूत (व्यभा २ टी प ६२)।

उस्सन्न—प्राय (भ १५।१८६ वृ)।

उस्सयण—अभिमान—'पलिउंचणं च भयणं च थंडिल्लुस्सयणाणि च।
(सू १।६।११)।

उस्सरण—वपन, बुआई—'निच्चुदग नदी कुडंगमुस्सरणं' (बृभा ४०३५)।

उस्सा—गाय (दे १।८६ वृ)।

उस्सिघण—मर्दन—'उस्सिघण-मक्खणऽब्भगण उच्छंदण उव्वट्टण'
(अंवि पृ १६३)।

उस्सुग—मध्य-भाग (आचूला १।११६ पा)।

उस्सूलग—परिखा, खाई (उ ६।१८)। देखे—'उच्छूलग'।

उस्सूलय— १ परिखा। २ शत्रु सेना का नाश करने के लिए ऊपर से
आच्छादित गर्त्त-विशेष (उशाटी प ३१०)।

उस्सेल्लय—सर्षपनाल से निष्पन्न शाक—'एगेण साहुणा सासवणालुस्सेल्लयं
नुसंभूतं लद्धं' (निचू ३ पृ २६४)।

उहर—१ छोटा घर, उपगृह (प्र १।१२)—'उहर त्ति उपगृहाणि आश्रय-
विशेषा.' (टी प ११)।२ छोटा—'उहरग्गाममयंमी'
(व्यभा ७ टी प ५६)।

उहरक—छोटा गांव (व्यभा ७ टी प ५६)।
उहावणा—अपमान (व्यभा ६ टी प ५)।

ऊ

ऊ—१ गर्हा, निन्दा सूचक अव्यय—'ऊति णाम मरहट्टादिसु णादिदुगुच्छिज्जति' (आचू पृ २३३)। २ प्रस्तुत वाक्य के विपरीत अर्थ की आशंका से उसे उलटना। ३ विस्मय। ४ सूचना।
ऊआ—यूका, जू (दे १।१३६)।
ऊढिअय—१ प्रावृत, आच्छादित। २ आच्छादन, प्रावरण (पा ६३७)।
ऊणंदिअ—आनन्दित (दे १।१४१)।
ऊणिमा—पूर्णिमा—'तओ तीए चेव ऊणिमाए भरिऊण भंडस्स पत्थिओ' (उसुटी प ६४)।
ऊणिस—तकिया 'सामायति मुहाइ ऊणिसगंहियाण व थणाण' (कु पृ १७)।
ऊमुत्तिअ—दोनों पार्श्वों में आघात करना (दे १।१४२)।
ऊयरिणिया—जंतु विशेष—'पत्तगवधे ऊयरिणिया लग्गा' (निचू १ पृ ९८)।
ऊर—१ ग्राम। २ संघ (दे १।१४३)।
ऊरणिया—जन्तु विशेष (निभा २८१)।
ऊरणी—मेष, भेड (दे १।१४०)।
ऊरणीया—जंतु विशेष। (निचू १ पृ ९८)
ऊल—गतिभंग, उतावल (दे १।१३९)।
ऊसढ—श्रेष्ठ वर्ण आदि गुणों से युक्त, ताजा—'ऊसढं ऊसढे ति वा, रसियं रसिए ति वा (आचूला १।५७)।
ऊसण—कामासक्ति से उत्पन्न उत्सुकता (दे १।१३९)।
ऊसत्थ—१ जम्भाई। २ आकुल (दे १।१४३)।
ऊसय—उपधान तकिया (दे १।१४०)।
ऊसल—पीन पुष्ट (दे १।१४०)।
ऊसलिअ—१ रोमांचित, पुलकित (दे १।१४१)। २ उल्लसित (वृ)।
ऊसविअ—१ उद्भ्रांत। २ ऊंचा किया हुआ (दे १।१४३)।

ऊसाइअ—१ विक्षिप्त (दे १।१४१)। २ उत्क्षिप्त—'ऊसाइअ उत्क्षिप्तमिति धनपाल' (वृ)।

ऊसायंत—खेद होने पर शिथिल (दे १।१४१)।

ऊसार—विशेष प्रकार का गढा (दे १।१४०)।

ऊसिक्किअ—प्रदीप्त (पा १६)।

ऊसिग—मध्यभाग (आचूला १।११६ पा)।

ऊसुंभिअ—१ अवरुद्ध गले से रोना, धीरे रोना (दे १।१४२)। २ उल्लसित (वृ)।

ऊसुक्किअ—विमुक्त (दे १।१४२)।

ऊसुय—मध्य-भाग (आचूला १।११६)।

ऊसुर—ताम्बूल, पान (प्रा २।१७४)।

ऊसुरुसुंभिअ—अवरुद्ध गले से रोना, धीरे रोना (दे १।१४२)।

ऊहट्ठ—उपहसित (दे १।१४०)।

ए

एआवंती—इतने—'एआवन्ती सव्वावन्ती ति एतौ द्वौ शब्दौ मगधदेशीभाषाप्रसिद्धया एतावन्तः सर्वेऽपीत्येतत्पर्यायौ' (आटी प २६)।

एकल्ल—अकेला (ज्ञा १।१।१५७)।

एकहेला—एक साथ (प्रटी प ४९)।

एकाणंसा—देवी-विशेष (अवि पृ २२३)।

एकुडिया—तीतर आदि का मास पकाने की प्रक्रिया—'आतकाभिभूत रसगादिहेउ वगतित्तिरादीहि य एकुडियाओ पकरेति' (आचू पृ १६)।

एक्क—स्नेहिल (दे १।१४४)।

एक्कंग—चन्दन (दे १।१४४)।

एक्कक्कम—परस्पर (से ५।५९)।

एक्कघरिल्ल—देवर, पति का छोटा भाई (दे १।१४६)।

एक्कणड—कथिक, कथा कहने वाला (दे १।१४५)।

एक्कमुह—१ धर्म रहित। २ दरिद्र। ३ प्रिय, इष्ट (दे १।१४८)।

एक्कमेक्क—परस्पर (प्र ४।६)।

एक्कयाण—अकेला—'किमराय तुम हरिणजातीण एक्कयाण परिनिव्विट्ठो',
(व्यभा ४।३ टी प ८)।

एक्कल्लग—एकाकी (अनुद्वाहाटी पृ ३५)।

एक्कल्लपुडिग—अल्प बिन्दु वाली वृष्टि (दे १।१४७)।

एक्कल्लय—अकेला (उसुटी प ८६)।

एक्कल्लु—अकेला (उसुटी प ८०)।

एक्कवई—रथ्या (दे १।१४५ व)।

एक्कसरय—एक बार (व्यभा ६ टी प २)।

एक्कसराए—१ एक साथ। २ एक बार (वटी पृ ४६६)।

एक्कसरिअ—१ शीघ्र (आवचू १ पृ २४६)। २ सप्रति, आजकल
(प्रा २।२१३)।

एक्कसाहिल्ल—एक स्थान में रहने वाला, स्थिरवासी (दे १।१४६)।

एक्कसि—एक बार (व्यभा १० टी प ६०)।

एक्कसिंबली—शाल्मली पुष्पों के साथ नूतन फली (दे १।१४६)।

एक्कसिय—एक बार (वचू प २०८)।

एक्कार—लोहकार (दे १।१४४ व)।

एक्कावण्ण—इक्यावन (निचू ४ पृ ११३)।

एक्केक्कम—अन्योन्य, परस्पर (दे १।१४५)।

एगओवत्त—द्वीन्द्रिय जन्तु विशेष (प्रज्ञा १।४६)।

एगट्ठिया—नौका—'एगट्ठियाए मग्गण-गवेसण करेंति' (ना १।१६।२८२)।

एगल्ल—एकाकी (जीभा २१५)।

एगसरग—एक बार—'एगसरग त्ति एक्क वार दिज्जति' (निचू ४ पृ ३४६)।

एगायत—अकेला—'एगायता णुवक्कमण करेंति (सू १।५।४८)।

एगाहच्च—एक ही प्रहार से मारना—'से पुरिसे एगाहच्चं कूडाहच्चं
जीवियाओ ववरोवेइ (भ ७।२०२)।

एगुणि—उन्नीस (उपाटी प ६)।

एडण—उल्लंघन—'तए णं सा नागसिरी ... नित्ताताउयस्स बहुसंभार-
संभियस्स नेहावगाढस्स एडणट्ठयाए (ना १।१६।१४)।

एडावण—उल्लंघन—'अवक्कूणग-एडावणट्ठयाए एगतमंते सगार भुज्जति
(भ १५।१३४)।

एडिज्जमाण—उत्सृज्यमान, उत्सर्जन करता हुआ (ज्ञा १।१६।७५) ।

एडेत्ता—उत्सृज्य, उत्सर्जन करके (ज्ञा १।१६।७३) ।

एणुवासिअ—मेढक (दे १।१४७) ।

एत्ताहे—अब (दे १।१४४ वृ) ।

एत्तोप्पं—यहां से लेकर, यहां से (दे १।१४४) ।

एद्दह—इतना (दे १।१४४ वृ) ।

एमाण—प्रवेश करता हुआ (दे १।१४४) ।

एमिणिआ—वह स्त्री, जिसके शरीर को, किसी देश के रिवाज के अनुसार, सूत के धागे से नाप कर उस धागे को फेंक दिया जाता है (दे १।१४५) ।

एयावंति—इतना (आ १।७) ।

एरंडइअ—पागल–'एरडइए साणे त्ति हडक्कायित श्वा' (वृटी पृ ८२६) ।

एरंडइत—पागल (दश्रुचू प ५१) ।

एरग—नागरमोथा (वृभा १२२३) ।

एराणी—१ इन्द्राणी । २ इद्राणीव्रत का पालन करने वाली स्त्री (दे १।१४७) ।

एरावण—गुच्छ-वनस्पति-विशेप (प्रज्ञा १।३७।४) ।

एल—कुशल (दे १।१४४) ।

एलवालुंकी—एक प्रकार की ककडी की वेल (प्रज्ञा १।४०।१) ।

एलविल—१ धनाढ्य । २ वृपभ, वैल (दे १।१४८) ।

एलालुय—आलू की एक जाति, कद-विशेप (अनु ३।५१) ।

एलालुग—ककडी–'एलालुग मार्उलिग फलमादी' (वृभा २४४२) ।

एलावालुंकी—वनस्पति-विशेप (भ २२।६) ।

एवड्ड—इतना–'एवड्ड आलावग सक्केहिति गेण्हिउं' (आवहाटी १ पृ ६९) ।

एवण्हं—वाक्यालकार–'एवण्हमिति वाक्यालङ्कारे (वृटी पृ १४९१) ।

एव्वेल—अधुना, अभी–'एव्वेल पहामोत्ति नमोक्कारं घोसंतस्सेव' (आवहाटी १ पृ ३०३) ।

ओ

ओअ--वार्त्ता, कहानी (दे १।१४६)।

ओअक--गर्जारव, गजित (दे १।१५४)।

ओअग्गिअ--१ अभिभूत। २ केश आदि को एकत्रित करना (दे १।१७२)।

ओअग्घिअ--घ्रात, सूघा हुआ (दे १।१६२)।

ओअल्ल--१ पयस्त, प्रक्षिप्त। २ प्रकंप थरथराहट। ३ गौओ का बाडा। ४ लटकता हुआ (दे १।१६५)। ५ खराब आचरण। ६ जिसकी आख निमीलित होती हो वह (से १३।४३)।

ओआअ--१ गाव का स्वामी। २ अपहृत जिसका अपहरण कर लिया गया हो वह। ३ आज्ञा। ४ हाथी आदि को बाधने के लिए बनाया हुआ गत्त (दे १।१६६)।

ओआअव--अस्त समय, अस्तमन-वेला (दे १।१६२)।

ओआल--छोटा प्रवाह (दे १।१५१)।

ओआलित--द्रवित किया, पिघाला-रण्णो चित्त ओआलित (आवहाटी १ पृ २३४)।

ओआली- १ खडग का एक दोष। २ पंक्ति (दे १।१६४)।

ओआवल--बाल-आतप, सुबह का सूर्य-ताप (दे १।१६१)।

ओइत्त--परिधान, वस्त्र (दे १।१५५)।

ओइत्तण--परिधान वस्त्र (दे १।१५५)।

ओइल्ल--आरूढ (दे १।१४८)।

ओउवालग--कोट्टपालक, आरक्षक (आवचू १ पृ २८६)।

ओएल्ल--कुण्ठित-तत्थ वि य से धारा ओएल्ला (ना १।१४।७७)।

ओडल--केश रचना, धम्मिल्ल (दे १।१५०)।

ओंडि--मुट्ठी (आवचू २ पृ १०१)।

ओकड्ढक--१ घर से धन आदि ले जाने वाला चोर। २ जो चोरो को बुलाकर चोरी कराते हैं। ३ चोरो के पृष्ठवाहक-सहायक (प्र ३।३)।

ओकासक--कण का आभूषण जो नीचे लटकता रहता है (अवि पृ १६२)।

ओक्कणी--यूका, जू (दे १।१५६)।

ओक्कतल्लिय--चबाकर निकाला हुआ वमन किया हुआ--'अवक्कोइल्लियाओ कुक्कुडएहिं आवक्कतल्लियाओ हरिएसेहिं णिज्जाइयातो' (दअचू पृ २३)। आक्करिगु (कनड)।

ओक्किअ—१ निवास, अवस्थान (दे १।१५१)। २ वमन (वृ)।

ओक्कुट्ठ—सचित्त वनस्पति का चूर्ण—'सचित्तवणस्सती चुण्णो ओक्कुट्ठो भण्णति' (निचू २ पृ २६०)।

ओक्खंडिअ—आक्रान्त (दे १।११२)।

ओक्खंद—शत्रु-सेना द्वारा नगर का घेराव—'कोसलेण रण्णा ओक्खद दाऊण भेल्लिय त सणिवेस' (कु पृ ६६)।

ओक्खिण्ण—१ अवकीर्ण। २ आच्छादित। ३ जिसके दोनो पार्श्व अत्यत शिथिल हो, वह (दे १।१३० वृ)।

ओखंद—१ सेना का पडाव या सेना का घेराव (निभा २४०१)। २ डाका, धाटी (वृभा ४८३८)।

ओगुंठी—घूघट, मस्तक पर डाला हुआ वस्त्र—'कवलरयणोगुठि काउ रण्णो ठिओ पुरतो' (ति ७६१)।

ओग्गाल—जल का लघु प्रवाह (दे १।१५१)।

ओग्गिअ—अभिभूत, पराजित (दे १।१५८)।

ओग्गीअ—हिम, बर्फ (दे १।१४६)।

ओघसर—१ अनर्थ। २ घर से निकलने वाला जलप्रवाह (दे १।१७०)।

ओचार—धान्य रखने का कोठा या पात्र-विशेष—'अपचारि—दीर्घतरधान्य कोष्ठाकारविशेष' (अनुद्वामटी प १४०)।

ओचिय—आरोपित (जीवटी प १६६)।

ओचुल्ल—चुल्ली का एक भाग (दे १।१५३)।

ओचूलयालग—नीचा सिर और ऊपर पाव कर पानी मे डुबोना (विपाटी प ७२)।

ओच्चेल्लर—१ खिल भूमि, ऊपर भूमि, हल आदि से विना जोती हुई भूमि। २ साथल के रोम (दे १।१३६)।

ओच्छग—वस्त्र (आवहाटी २ पृ १२८)।

ओच्छट्ट—चोर (दे १।१०१ वृ)।

ओच्छत्त—दतौन, दतवन (दे १।१५२)।

ओच्छविय—आच्छादित (ज्ञाटी प ३१)।

ओच्छाइय—आच्छादित (प्रटी प १३४)।

ओच्छिअ—केशो को सवारना (दे १।१५०)।

ओच्छुपीय—बीज, धान्य—'एगत्थ ओच्छुपीया णीणिज्जंति' (आवचू १ पृ १११)।

ओछाडित—आच्छादित (अवि पृ २४४)।

ओज्जल्ल—बलवान, प्रबल (दे १।१५४)।

ओज्जाय—गर्जित (दे १।१५४)।

ओज्झ—मला, अस्वच्छ (दे १।१४८)।

ओज्झमण—पलायन (दे १।१०३ वृ)।

ओज्झर—निर्झर (से १।५६)।

ओज्झरिय—१ टेढ़ी नजर से देखा हुआ, कानी आंख से देखा हुआ। २ विक्षिप्त, पागल। ३ क्षिप्त, फेंका हुआ। ४ त्यक्त (दे १।१३३ वृ)।

ओज्झरी—ओझ, आंत का आवरण (दे १।१५७)।

ओज्झाय—दूसरे को धक्का देकर छीन लेना (दे १।१५६)।

ओट्टिय (दोट्टिय, दोढ्डिय ?) तुत्रा (आवहाटी १ पृ २८३)।

ओड—१ भूमि खोदने वाला (स्थाटी प १६६)। २ कूप (आवटि प २४)।

ओडड्डु—अनुरक्त रागी (दे १।१५६)।

ओडिका—जन्, खड (आवटि प ६७)।

ओड्ड—वस्त्र शिल्पी (अवि पृ १६१)।

ओड्डुय—छिपाव, गुप्त—'तेसिं च पत्ताणि हीरंति लाड्डुएण गच्छंति' (आवचू १ पृ १११)।

ओड्ढण—ओढ़न, उत्तरीय वस्त्र (दे १।१५५)।

ओड्ढिय—ओढ़ा हुआ, धारण किया हुआ—परिहिअमोड्ढणमाडिअमभाद्दस (दे १।१५५ वृ)।

ओणिव्व—वल्मीक, कृमि-पर्वत, चींटियों द्वारा खाली गई मिट्टी का ढेर (दे १।१५१)।

ओणीवी—नीव्र, छत का प्रान्त भाग (दे १।१५०)।

ओणुणअ—अभिभूत, पराभूत (दे १।१५८)।

ओणेज्ज—सात म मास आदि का विभिन्न आकृतियों की रचना—'ओणेज्ज मण्णविलिति विसेसा (अनु पृ १६)।

ओत्तलहल—मत्त (दे १।११६ वृ)।

ओत्थइअ—व्याप्त (से ११।५६)।

ओत्थय—१ पिहित, ढका हुआ–'अत्थरयमिउमसूरगोत्थय' (दश्रु ८।४२)। २ अवसन्न, खिन्न (दे १।१५१)।

ओत्थर—उत्साह (दे १।१५०)।

ओत्थरिअ—१ आक्रात, जिस पर आक्रमण किया हो वह। २ आक्रमण करता हुआ (दे १।१६६)।

ओत्थल्लपत्थल्ला—उथल-पुथल, दोनो पार्श्वों से परिवर्तन (दे १।१२२ वृ)।

ओथुक्कित—अत्यत जुगुप्सित–'धिद्धि त्ति ओथुक्कित-तालियस्सा' (वृभा ४११५)।

ओद्दंपिअ—१ आक्रात। २ नष्ट (दे १।१७१)।

ओपल्ल—कुण्ठित, अपदीर्ण (ज्ञाटी प १९९)।

ओपविका—क्षुद्र जतु (अवि पृ २२९)।

ओपित—सस्कारित, परिकर्मित (प्रटी प ७६)।

ओपुप्फ—निष्फल, व्यर्थ–'जुण्ण ओपुप्फनिप्फल' (अवि पृ ८१)।

ओपेसेज्जिक—धान्य पीस कर आजीविका चलाने वाला (अवि पृ १६०)।

ओप्प—चमक–'तूवरिया सुवण्णस्स ओप्पकरणमट्टिया' (दअचू पृ ११०)।

ओप्पा—शाण आदि पर मणि आदि रत्नो का घर्षण करना (दे १।१४८)।

ओप्पिअ—शाण पर घिसा हुआ (दे १।१४८ वृ)।

ओप्पील—समूह (पा १८)।

ओप्फिट्ट—अलग होना, पृथक् होना–'ताहे सो (गोसालो) सामिस्स मूलओ ओप्फिट्टो' (आवचू १ पृ २९९)।

ओब्भालण—१ सूर्प आदि से धान्य को साफ करना। २ अपूर्व (दे १।१०३ वृ)।

ओभंजलिया—चतुरिन्द्रिय जीव-विशेष (प्रज्ञा १।५१)।

ओभट्ठ—प्रार्थित, वाछित (ओनि १४७)।

ओमंथ—नत, अधोमुख (वृभा ६६५)।

ओमंथिय—नमाया हुआ, अधोमुख किया हुआ–'ओमथियवयणनयणकमला' (ज्ञा १।१।३४)।

ओमच्छग—अधोमुख (निचू २ पृ १२७)।

ओमत्थ—अधोमुख (अनुद्वाचू पृ ५०)।

ओमत्थग—अन्तिम–'चरिमस्स आदिसमयातो आरब्भ ओमत्थग' (नदीचू पृ २५)।

ओमत्थिय—नत, अधोमुख किया हुआ (ओनि ३८६)।
ओमालय—शोभित (कु पृ २२८)।
ओमालिय—पूजित (कु पृ २५)।
ओमोदरिता—दुर्भिक्ष—'ओमोदरिता दुब्भिक्ख (निभा ३४२)।
ओयड्ढिया—चादर, दुपट्टा (उसुटी प ४५)।
ओयड्ढी—दुपट्टा, चादर—'घेत्तु ओयड्ढीए छूढा (उसुटी प ४५)।
ओयम—गोत्र विशेष (अवि पृ १५०)।
ओयल्ल—मत (आवटि प ३८)।
ओयविय—१ परिकर्मित, सत्कारित—'ओयविय-खोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छन्ने' (दश्रु ८।२०)। २ खेदन—'ओयविय खेदन (ओटी प ५१)।
ओयाण—अनुस्रोत म चलन वाली नौका (निभा १८३)।
ओयिघण—उपबृहण, वृद्धि (सूचू १ पृ ११५)।
ओर—१ चारु, सुदर (दे १।१४६)। २ समीप।
ओरपिअ—१ आक्रान्त। २ नष्ट (दे १।१७१)। ३ छिला हुआ (पा ५८१)।
ओरत्त—१ विदारित। २ अभिमानी। ३ कुसुभ रग से रगा हुआ (दे १।१६५)।
ओरल्ली—दीर्घ और मधुर ध्वनि (दे १।१५४)।
ओराणि—आभूषण विशेष (अवि पृ ७१)।
ओराल—१ उदार प्रधान (स्था ४।४५१)। २ भयकर—'ओराले त्ति भीमो भयानक' (नाटी प ८)। ३ विस्तृत विशाल—ओराल नाम वित्थराल विसाल ति भणिय होई। ४ मास आदि से युक्त शरीर —'ममयपरिभाषया ' (प्रनाटी प २६६)।
ओरालिय—१ व्याप्त। २ उपलिप्त—'दिट्ठो रुहिरोरालियसिरो' (उसुटी प ५)। ३ पोछा हुआ। ४ फैलाया हुआ।
ओरिल्ल—अचिरकाल का, थोडे समय का, नया (दे १।१५५)।
ओरुज—वह क्रीडा जिसमे बार-बार 'नहीं-नहीं' कहा जाता है (दे १।१५६)।
ओलअ—१ बाज पक्षी (दे १।१६०)। २ अपलाप (वृ)।
ओलअणी—नववधू, नवोढा (दे १।१६०)।
ओलइणी—प्रिया प्रिय पत्नी (दे १।१६०)।
ओलइय—१ सलग्न, लगा हुआ चिपका हुआ (ओभा ५३८)। २ छिपाया हुआ—'आउहाणि ओलइयाणि (उसाटी प ११६)। ३ शरीर म

सटा हुआ, पहना हुआ—'अगपिणद्धम्मि ओलइअ' (दे १।१६२)।

ओलंडण—अवलंघन (ज्ञा १।१।१८६)।

ओलंडिय—अवलघित—'तुम मेहा ! राओ समणेहिं⋯अप्पेगइएहिं ओलडिए अप्पेगइएहिं पोलडिए' (ज्ञा १।१।१५५)।

ओलंभ—उपालम्भ—'भगवया महावीरेण⋯अप्पोलंभनिमित्त पढमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते' (ज्ञा १।१।२१३)।
(राज० ओलंभ।)

ओलगय—सेवक (दजिचू पृ २९६)।

ओलग्गअ—सेवक—'कुमारोलग्गएहिं सद्धिं⋯पव्वतितो' (उशाटी प ११५)।

ओलग्गग—ग्रामवासी (दश्रुचू प ६५)।

ओलवणी—छत—'कडण डडगोवरि ओलवणी' (पवटी प ११२)।

ओलायग—वाज पक्षी—'वीरल्लो ओलायगो' (निचू २ पृ १३७)।

ओलावय—वाज पक्षी (दे १।१६०)।

ओलावी—मादा वाजपक्षी (आवचू १ पृ ४२५)।

ओलिंप—खोलना—'ओलिंपमाणे वि तहा तहेव काया कवाडमि विभासियव्वा' (पिनि ३५४)।

ओलिभा—दीमक (दे १।१५३)।

ओलित्ती—खड्ग आदि का एक दोष (दे १।१५९)।

ओलिप्प—हास, हसी-मजाक (दे १।१५३)।

ओलिप्पंती—खड्ग आदि का एक दोष (दे १।१५९)।

ओलिया—कुलपरिपाटी—'अहं ओलिया कहिज्जामि' (सूचू २ पृ ४१४)।

ओली—१ फली—'ओली सिगा' (आचू पृ ३४१)। २ कुलपरिपाटी, कुल का आचार (दे १।१४८)। ३ पक्ति (वृ)।

ओलुंकी—१ वालको की क्रीडा-विशेष, लुकाछिपी का खेल (दे १।१५३)। २ आखमिचौनी—'ओलुकी छन्नरमणम्। नष्ट्वा यत्र शिशव. क्रीडन्ति। चक्षु स्थगनक्रीडेति केचित्' (वृ)।

ओलुंपअ—तापिका-हस्त, तवे का हाथा (दे १।१६३)।

ओलुग्ग—१ जीर्ण, रुग्ण (ज्ञा १।१।३४)। २ कृश, निर्बल (विपा १।२।२४)। ३ सेवक। ४ निस्तेज (दे १।१६४)।

ओलुट्ट—१ अघटमान, अनुचित। २ मिथ्या, असत्य (दे १।१६४)।

ओलेहड—१ दूसरे मे आसक्त। २ तृष्णापर। ३ प्रवृद्ध, वूढा (दे १।१७२)।

ओल्ल—१ ओला, हिमपात (जीचू पृ ६)। २ पति। ३ राजपुरुष विशेष।

ओल्लणी—इलायची, दालचीनी आदि मसालों से संस्कारित दही श्रीखंड (दे १।१५४)।

ओल्लरण—सोना, शयन (दे १।१६३ व)।

ओल्लरिअ—सुप्त (दे १।१६३)।

ओव—हाथी आदि को बांधने के लिए किया गया गर्त्त (दे १।१४६)।

ओवइय—तीन इन्द्रियवाला क्षुद्र जन्तु विशेष (जीव १।८८)।

ओवग—गढा—ओवग कूडे मगरा, जइ घुट तसे य दुट्टतो वि' (वृभा २३६०)

ओवग्गिअ—आक्रांत, अभिभूत (पा ५८५)।

ओवट्टिअ—खुशामद, चाटुकारिता (दे १।१६२)।

ओवट्टी—नीवी, स्त्री के कटि वस्त्र की नाडी (दे १।१५१ पा)।

ओवट्ठ—१ मेघ के पानी का सिंचन, छिडकाव (दे १।१५२)। २ वृष्टि, वारिश (से ६।२५)।

ओवड—गढा, गर्त्त—ओवड त्ति खड्डातीत पडेज्ज (निचू ४ पृ ४८)।

ओवड्ढी—पहनने के वस्त्र का एक भाग (दे १।१५१)।

ओवयण—प्रोह्लणक (ना १।१।६०)।

ओवर—निकर, समूह (दे १।१५७)।

ओवरअ—समूह (दे १।१५७ व)।

ओवसेर—१ चन्दन। २ मथुन-योग्य (दे १।१७३)।

ओवात—आचाय निर्देश'—'ओवातो णाम आचायनिर्देश (सूचू १ पृ२२१)।

ओवातिका—जलचर प्राणी विशेष (अवि पृ ६६)।

ओवारि—१ धान्य भरने का कोठा। २ भीतरी कमरा (अवि पृ १६५)। ओरी (राजस्थानी)।

ओवारिया—१ भीतरी अपवरक। २ धान्य भरने का कोठा (व्यभा ७ टी प १०)।

ओवास—कान का आभूषण विशेष—वतसक आवास कण्णपीलक कण्णपूरक' (अवि पृ १८३)।

ओवासण—नापित कर्म, हजामत (आवचू १ पृ१५६)।

ओविय—१ परिकर्मित (ना १।१।२४)। २ सुन्दर (ना १।१।६८)। ३ प्रकाशित—ओपिताना—उज्ज्वलितानाम् (नाटी प २२६)।

४ आरोपित (जवूटी प ४३ , दे १।१६७) । ५ रुदित ।
६ खुशामद । ७ मुक्त, परित्यक्त । ८ हृत, छीना हुआ
(दे १।१६७) । ९ व्याप्त, खचित (आवमटी) १० विभूषित ।

ओवुलीक—प्राणी-विशेप (अवि पृ ६९) ।

ओव्वरग—ओरी, भीतर का कमरा (दअचू पृ ४२) ।

ओस—ओस, निशाजल (भ १५।१८६) ।

ओसअ—ओस (से १३।५२) ।

ओसक्क—अपसृत, पीछे हटा हुआ (दे १।१४९) ।

ओसट्ट—ऐसा भोजन, जिसमे फेकना अधिक होता है (निभा २४९४) ।

ओसण—उद्वेग, खेद (दे १।१५५) ।

ओसण्ण—त्रुटित, खडित (दे १।१५६) ।

ओसण्णं—१ अनेक वार–'ओसण्णति–अणेगसो एक्केक्क पावायतण हिंसादि आयरति' (दश्रुचू प ४०) । २ प्राय (जीभा १६०) ।
३ प्राचुर्य, वाहुल्य (स्थाटी प १८३) ।

ओसद्ध—पातित, गिराया हुआ (पा ५६५) ।

ओसन्न—१ प्राय –'ओसन्नदिट्ठाहडभत्तपाणे' (दचूला २।६) । २ खडित, अपूर्ण–'ओसन्नो खुतायागो सवलायारो' (दश्रुचू प ९) ।

ओसर—छोटा कमरा (अवि पृ १३६) । आसरा (राजस्थानी) ।

ओसरिअ—१ अधोमुख । २ आख को सकुचित कर देखना, कानी आख से देखना । ३ आकीर्ण, व्याप्त (दे १।१७१) ।

ओसरिआ—अलिंदक, वाहर के दरवाजे का प्रकोष्ठ (दे १।१६१) ।

ओसव्विअ—१ शोभा-रहित । २ अवसाद (दे १।१६८) ।

ओसा—१ ओस, निशाजल (आव ४।४) । २ हिम (दे १।१६४) ।

ओसाअ—प्रहार की पीडा (दे १।१५२) ।

ओसाणिहाण—विधि-पूर्वक अनुष्ठित (दे १।१६३) ।

ओसायंत—१ जभाई खाता हुआ आलसी । २ दुःख करता हुआ । ३ वेदना-युक्त (दे १।१७०) ।

ओसार—गो-वाट, गो-वाडा (दे १।१४९) ।

ओसिअ—१ वलरहित (दे १।१५०) । २ अपूर्व ।

ओसिंघिअ—घ्रात, सूघा हुआ (दे १।१६२)–'ओसिंघिअशब्दोऽपि देश्य एव' (वृ) ।

ओसिक्खिअ—१ गमन मे व्याघात । २ अरति-निहित (दे १।१७३) ।

ओसित्त—उपलिप्त (दे १।१५८)।

ओसीअ—अधोमुख, अवनत (दे १।१५९)।

ओसीस—अपवृत्त, दुश्चरित्र (दे १।१५२)।

ओसुखिअ—उत्प्रेक्षित, कल्पित (दे १।१६१)।

ओसुद्ध—१ नीचे गिरा हुआ, विनिपतित (दे १।१५७)। २ विनाशित (से १३।२२)।

ओस्स—ओस, निशाजल (नि १३।८)।

ओहक—हास, हास्य (दे १।१५३)।

ओहजलिया—चतुरिन्द्रिय जीव की जाति विशेष (जीवटी प ३२)।

ओहस—१ चन्दन। २ चन्दन घिसने का शिलापट्ट (दे १।१६८)।

ओहट्ट—१ घूंघट। २ कटि-वस्त्र। ३ अपसृत (दे १।१६६)।

ओहट्टिअ—दूसरे का धक्का देकर छीन लेना (दे १।१५६)।

ओहट्ठ—१ प्रार्थित, वाञ्छित—'आभट्ठमणाभट्ठं ओहट्ठं जत्थ पाउग्गं' (आटी प ६७)। २ हास्य (दे १।१५३)।

ओहडणी—अर्गला (दे १।१६०)।

ओहत्त—अवनत (दे १।१५६)।

ओहरण—१ विनाशन, हिंसा। २ असंभव अर्थ की संभावना (दे १।१७४)। ३ अस्त्र। ४ आघात।

ओहरिय—१ प्रहृत—'गुरुभारं असी वहसि ओहरिए' (ना १।१४।७७)। २ उत्तारित, उतारा हुआ—'ओहरियभारो व्व भारवहो' (उ २९।१३)। ३ प्रक्षिप्त, फेंका हुआ (से १३।३)। ४ नीचे गिराया हुआ (से २।३७)।

ओहरिस—१ घ्रात, सूंघा हुआ। २ चन्दन घिसने की शिला, चन्द्रौटा (दे १।१६९)।

ओहसिअ—१ वस्त्र। २ कम्पित (दे १।१७३)।

ओहाइअ—अधोमुख (दे १।१५८)।

ओहाडण—१ प्रायश्चित्त का एक प्रकार। २ पिधानक (निचू ४ पृ ४२८)।

ओहाडणी—पिधानक, ढक्कनी (जीव ३।२६४, दे १।१६१)।

ओहाडिअ—ढंका हुआ—'ओहाडियणिमिमिसियाणि' (बृ १।१४)।

ओहामिअ—१ तिरस्कृत (ओनि ६०)। २ तोला हुआ (पा ५३६)। ३ स्थगित। ४ अभिभूत।

ओहार—१ जलजंतु-विशेष, मत्स्य (प्र३।७) । २ कछुआ । ३ नदी आदि का अन्तर द्वीप, मध्यद्वीप । ४ अंश, विभाग (दे१।१६७) ।

ओहावण—अपभ्राजन, तिरस्कार (उशाटी प १६२) ।

ओहिंजलिया—चतुरिन्द्रिय जतु-विशेष (उ ३६।१४८ ।

ओहिज्जंत—अतीत, अतिक्रात, क्षीण (अंवि पृ ८१) ।

ओहित्थ—१ विषाद । २ वेग । ३ विचारित (दे १।१६८) ।

ओहीरमाणी—नींद लेती हुई (ज्ञा १।१।१८) ।

ओहीरिअ—१ उद्गीत (दे १।१६३) । २ अवसन्न,खिन्न–'ओहीरिअ उद्गीतम् । अवसन्नमित्यन्ये' (वृ) ।

ओहुअ—अभिभूत (दे १।१५८) ।

ओहुड—विफल (दे १।१५७) ।

ओहुप्पंत—जिस पर आक्रमण किया जाता हो, वह (से ३।१८) ।

ओहुर—१ खिन्न (दे१।१५७) । २ अवनत । ३ स्रस्त, खिसका हुआ–'ओहुर खिन्नम् । 'ओहुर अवनत स्रस्त चेत्यवन्तिसुन्दरी' (वृ) ।

क

कइअंक—निकर, समूह (दे २।१३) ।

कइअंकसइ—निकर, समूह (दे २।१३) ।

कइउल्ल—थोडा, अल्प (दे २।२१) ।

कइक—कोई (अवि पृ २५१) ।

कइतविय—कृत्रिम (सूनि ५६) ।

कइलवइल्ल—स्वच्छन्दचारी वृषभ, चिन्हित साड (दे २।२५)– 'कइलवइल्लोव्व तुम घरा घरं किं भमेसि णिल्लज्ज !' (वृ) ।

कइल्लिय—कृत–'अणुकपा कइल्लिया होहित्ति' (उशाटी प ८६) ।

कइवाह—तत्काल, शीघ्र–'सव्व ते पज्जत्त नणु कइवाह पडिच्छामि' (ति ६५६) ।

कइविया—पात्र-विशेष, पीकदान (ज्ञाटी प ४७) ।

कउअ—१ प्रधान । २ चिह्न (दे २।५६) ।

कउल—१ करीष, कडा । २ कडे का चूरा (दे २।७) ।

कउह—नित्य (दे २।५)।

ककडुय—चना आदि धान्य जो अग्नि से नहीं पकता, कोरडू—'चणयादीणं उक्खडियाण जे ण सिज्झति ते कक्कडुया' (निचू ३ पृ ४८४)।
देखें—उक्खडाम

ककण—चतुरिन्द्रिय जंतु विशेष (उ ३६।१४७)।

कक्कडुय—कोरडू धान, वह धान जो पकाए जाने पर भी नहीं पकता (कु पृ २१०)।

ककिल्लि—अशोक वृक्ष (प्रज्ञा ४४०)।

ककेल्लि—अशोक वृक्ष (औपटी पृ १७, दे २।१२)।

ककोड—१ वनस्पति विशेष, ककरैल की सब्जी (दे २।७)। २ सांप की एक जाति।

कगु—१ धान्य विशेष—'बहुच्छिरा कगू' (निचू ? पृ १०६)। २ पीत तण्डुल (प्रसा ९९६)।

कगुलिया—मलमूत्र—'कगुलिका—लघ्वी महती च नीति विधत्से' (प्रसा ८३३)।

कचणिका—भाजन विशेष (अवि पृ ७२)।

कचणिया—रुद्राक्ष की माला (भ २।३१)।

कचियक—नपुंसक—'भवेति कता इयेस कचिकरा' (वभा ५१८३)।

कची—मुसल के मुख पर रहने वाला लोह-वलय (दे २।१)।

कजुसिणोदेहि—कांजिका—'कजुसिणोदहि त्ति ... ' (बटी पृ ८७१)।

कंटउच्चि—कण्टकप्रधान कांटो से बींधा हुआ (दे २।१७)।

कंटय—बिच्छू का विषप्रधान पूंछ—'वृश्चिकस्य महाविषलांगूल कण्टक उच्यते' (व्यभा ६ टी प ४७)।

कंटाली—वनस्पति विशेष, कण्टकारिका (दे २।४)।

कंटासक—पक्षी विशेष, पतंग (?) (अवि पृ ६४)।

कंटिया—कटकनी—'... कंटिय त्ति ...' (अवि पृ ७१)।

कंटुल्ल—... एक प्रकार की सब्जी जो वर्षा में ही होती है (पा १८२)।

कंटेण—पशु-विशेष (अवि पृ ६२)।

कंटोल—... वनस्पति की सब्जी (दे २।७)।

कंठ—१ शूकर, सूअर। २ मर्यादा, सीमा (दे २।५१)।

कंठकप्पड—कंधे पर रखी जाने वाली चादर—'णिबद्धं च णेण कंठकप्पडे त पुट्टलयं' (कु पृ १०५)।

कंठकुंची—१ वस्त्र आदि के अन्त मे लगाई गई गांठ। २ कठ के ऊपर उभरी नाडिग्रन्थि 'रसोली' (दे २।१८)।

कंठदीणार—बाड का छिद्र (दे २।२४)—'आवति कंठदीणारएण कुडिय-भमिरा भुयग त्ति (वृ)।

कंठमल्ल—१ शव को वहन करने का साधन (दे २।२०)। २ यानपात्र, वाहन (वृ)।

कंठमुखी—आभूषण-विशेष (भ ६।१६०)।

कंठाकंठि—गले मिलना—'अब्भुट्ठेत्ता कंठाकंठि अवयासेइ' (ज्ञा १।२।६६)।

कंठाकंठिय—गले मिलना (ज्ञा १।२।६०)।

कंठाल—मोटे कठ वाला (कु पृ १३५)।

कंठिअ—द्वारपाल, दौवारिक (दे २।१५)।

कंड—१ दुर्बल। २ विपन्न। ३ फेन (दे २।५१)।

कंडपडवा—यवनिका, परदा (दे २।२५)।

कंडरा—शरीर का एक अवयव (अवि पृ ११६)।

कंडरिय—अनतकाय वनस्पति-विशेष (भ २३।१)।

कंडु—पात्र-विशेष (सूचू १ पृ १२४)।

कंडूर—बगुला (दे २।६)।

कंडूसग—रजोहरण का बन्धन-विशेष (नि ५।७०)—'कंडूसगबंधो णाम जाहे रयहरणं तिभागपएसे खोमिएण उण्णिएण वा चीरेण वेढिय भवति' (निचू २ पृ ३६७)।

कंडूसी—गोत्र-विशेष (अवि पृ १५०)।

कंतार—मार्ग—'कंतार नाम अध्वान' (निचू १ पृ १६४)।

कंतु—कन्दर्प, कामदेव (दे २।१)।

कंथा—टुकडा, अंश—'कण्हेण भेरी जोयाविया जाव कथा कथा' (वृभा ३५६)।

कंद—१ दृढ। २ उन्मत्त। ३ आच्छादन (दे २।५१)।

कंदल—१ प्रत्यग्र लता (ज्ञा १।६।२०) २ कपाल (दे २।४)। ३ पुष्प-विशेष (अंवि पृ ६३)।

कंदी—मूला, कन्द-विशेष (दे २।१)।

कदुग्घुसिय—नील कमल (?) (कु पृ ३८)।
कदुट्ट—नील कमल (पा ५७)।
कदोट्ट—नील कमल (दे २।६)।
कपड—पथिक (दे २।७)।
कबर—विनान, प्रज्ञा, कलाकौशल (दे ७।१३)।
कबलिक—घा य विशेष (अवि पृ २२०)।
कबिया—पुस्तक का आवरण पृष्ठ (जीव ३।४३५)।
कसार—कसार, एक प्रकार की मिठाई (बटी पृ ४०३)।
कसारिआ—त्रीन्द्रिय जतु विशेष (बटी पृ ८००)।
कसारिका—कसारी त्रीन्दिय जतु विशेष (बटी पृ ६६७)।
कसारी—त्रीन्द्रिय जतु विशेष (जीत १८)।
कसाल—वाद्य विशेष (भटी पृ ८८३)।
ककाणय—गरदन–'आरुस्स विज्झति ककाणओ से (सू १।५।४२)।
ककितजाण—गोन विशेष (अवि पृ १५०)।
ककी—पक्षी-विशेष (अवि पृ २३६)।
ककुलुडि—पात्र विशेष (अवि पृ २१४)।
ककुह—१ राजचिह्न–अवहट्टु रायककुहाइ (प्रसाटी प १३)। २ प्रधान (नाटी प २४०)।
कक्ककुरुय—माया (प्रसा ११५)।
कक्कडग—तर्कशास्त्रगत हेतु का एक प्रकार–'कक्कडगहेऊ जत्थ भणित उभयहा वि दोसा भवति' (निचू ३ पृ ३८०)।
कक्कडय—वायु विशेष जो पेट मे उत्पन्न होती है–'कक्कडए नाम वाए समुज्छइ जेण (भ १०।३६)।
कक्कडी—ककडी (वभा १०५१)।
कक्कडीय—मत्स्य विशेष (अवि पृ १८३)।
कक्कब—इक्षुरस का विकार, गुड की पूर्व अवस्था (पिनि २८३)।
कक्कय—गुड की पूर्व अवस्था– गिल्लसन्निही गुलवक्कयघयतेल्लाई (जीचू पृ १४)।
कक्कर—मधुर–'कक्कर नाम महुर (उचू पृ १६०)।
कक्करपिंडग—खाद्य पदार्थ विशेष (अवि पृ २४६)।
कक्करी—घट विशेष (जबूटी प १००)।

कक्कस—दध्योदन, करंबा (दे २।१४)।

कक्कसार—दध्योदन, करम्बा (दे २।१४)—'मयकरिअ लहसि कक्कसार' (वृ)।

कक्कावंस—पर्व वनस्पति, बास का एक प्रकार (भ २१।१७)।

कक्किकड—कृकलास, गिरगिट (दे २।५)।

कक्कुस—तुष—'तुस त्ति कोटको व त्ति कक्कुसो तप्पणो त्ति वा' (अवि पृ १०६)।

कक्खड—पीन, पुष्ट (दे २।११)।

कक्खडंगी—सखी, सहेली (दे २।१६)।

कक्खल—कठोर, कर्कश—'कक्खलफासाहिं कमणीहिं' (निभा ६२६)।

कक्खारुग—फल-विशेष (अवि पृ ६४)।

कग्घाड—१ अपामार्ग, चिरचिरा, लटजीरा। २ किलाटी, मावा (दे २।५३)।

कग्घायल—किलाटी, दूध का विकार (दे २।२२)।

कचक्खी—गोत्र-विशेष (अवि पृ १५०)।

कच्च—कार्य (दे २।२)।

कच्चग—पात्र-विशेष (व्यभा ८ टी प २२)।

कच्चाल—प्रवृत्ति या व्यापार का स्थान, कार्यालय (दे २।५२ पा)।

कच्चोल—कलश, पात्र-विशेष (उसुटी प २८०)।

कच्छ—गुठली का एक अवयव जो तुष रहित हो (आचू पृ ३४०)।

कच्छभाणिया—साधारण वनस्पति-विशेष (सू २।३।४३)।

कच्छभाणी—जलीय वनस्पति-विशेष (प्रज्ञा १।४६)।

कच्छभी—तापस का उपकरण-विशेष—'हत्थकयकच्छभीए—कच्छपिका तदुपकरणविशेष' (ज्ञाटी प २२७)।

कच्छर—पंक, कीचड (दे २।२)।

कच्छवी—पुस्तक का एक प्रकार जिसके दोनों किनारे छोटे तथा मध्यभाग मोटा हो—'कच्छवि अंते तणुओ मज्झे पिहुलो मुणेयव्वो' (प्रसा ६६५)।

कच्छा—कच्छा, लाट देश मे पहना जाने वाला स्त्रियो का परिधान-विशेष—'लाडाण कच्छा सा मरहट्ठयाण भोयडा भण्णति' (निचू १ पृ ५२)।

कच्छुरिअ—ईर्षित, जिसकी ईर्ष्या की गई हो वह (दे २।१६)।

कच्छुरी—कपिकच्छू, केंवाच (प्रज्ञा १।३७।१, दे २।११)।

कच्छुल्ल—१ गुल्म विशेष (प्रज्ञा १।३८।२)। २ खाज रोग से ग्रस्त–'तत्य ण पासइ एग पुरिम–कच्छुल्ल कोढिय दाओयरिय (विपा १।७।७)।

कच्छोटक—लगोटी धारण करने वाला (भटी प ५०)।

कच्छोट्टग—कच्छा, लगोटी (आवहाटी १ पृ २७६)।

कज्ज—कचरा (ओटी प १६२)।

कज्जउड—अनथ (दे २।१७)।

कज्जत्थ—कूडा करकट डालने का स्थान, अकुरडी–'कज्जत्थोकुरटिकास्थानम्' (ओटी प १६२)।

कज्जलमाणी—डूबती हुई (नि १८।१६)।

कज्जलावेमाणा—डूबती हुई–'णाव कज्जलावेमाण पेहाए (आचूला ३।२२)।

कज्जव—१ तृण आदि का समूह (दे २।११)। २ विष्ठा (व)।

कज्जवय—कूडा कचरा (अनुद्वा ३४६)।

कज्जूरी—खजूर का वृक्ष (अवि पृ ७०)।

कज्जोव—उल्का (अवि पृ २४५)।

कज्झाल—सेवाल, एक प्रकार की घास जो जलाशयो मे होती है (दे २।८)।

कटार—छुरी (प्रा ४।४४५)।

कट्ट—१ खड, टुकडा (अनुटी प ५)। २ काट, जग (यभा ५ टी प ६)।

कट्टर—१ खड, अश–'चित्तकट्टरे इ वा' (अनु ३।४०)। २ कढी मे डाला हुआ घी का बडा–'तीमनोमिश्रघृतवटिकारूपस्य देशविशेषप्रसिद्धस्य' (पिटी प १७२)।

कट्टारिगा—शस्त्र विशेष छुरी (निचू २ पृ ५६)।

कट्टारिया—कटार छुरी (निचू २ पृ ५६)।

कट्टारी—क्षुरिका, छुरी (दे २।४)।

कट्टित—कटा हुआ (अवि पृ २५५)।

कट्ठ—आभूषण विशेष, एक प्रकार का हार (अवि पृ ६५)।

कट्ठसालुक—कठ का रोग विशेष (अवि पृ २०३)।

कट्ठकरण—खेत–'कट्ठकरण णाम क्षेत्त (आवहाटी १ पृ १५२)।

कट्ठखोड—आसन विशेष–'भद्दासण पीढग वा कट्ठखोडो नहट्टिका (अवि पृ १५)।

कट्ठगंध—नौका खेने का बडा बास (आचू पृ ३५७)।

कट्ठाहार—त्रीन्द्रिय जन्तु-विशेष (प्रज्ञा १।५०)।

कट्ठिअ—द्वारपाल (दे २।१५)।

कट्ठियव्वग—खाद्य-विशेष (निचू २ पृ २४१)।

कट्ठेवट्टक—कण्ठ का आभूषण (अवि पृ १६३)।

कट्ठोरग—कटोरा (निचू १ पृ ५१)।

कड—१ क्षीण। २ मृत (दे २।५१)।

कडअल्ल—द्वारपाल (दे २।१५)।

कडअल्ली—कण्ठ, गला (दे २।१५)।

कडइअ—स्थपति, वढई (दे २।२२)।

कडइल्ल—द्वारपाल (दे २।१५)।

कडत—१ मूली का शाक। २ मुसल (दे २।५६)।

कडंतर—पुराना छाज आदि उपकरण (दे २।१६)।

कडंतरिअ—विदारित (दे २।२०)।

कडंब—करटिका, वाद्य-विशेष (राज ७७)।

कडंभुअ—१ कुम्भग्रीव नामक पात्र-विशेष (दे २।२०)। २ घड़े का कण्ठ-भाग—'कडंभुअ घटस्यैव कण्ठ इति शीलाङ्क.' (वृ)।

कडग—१ यवनिका, परदा (आवहाटी २ पृ १७८)। २ वास की चटाई से बना घर (व्यभा ४।४ टी प १०१)।

कडच्छकी—कडछी—'दव्वी तध कवल्ली य दीविक त्ति कडच्छकी' (अवि पृ ७२)।

कडच्छु—लोहे की कर्छी डोई (दे २।७)।

कडच्छुत—कर्छी (निचू २ पृ २५१)।

कडच्छुय—चम्मच (ज्ञा १।८।५५)।

कडजुम्म—युग्म राशि जिसमे चार शेष रहते है—'सर्वासा दिशा प्रत्येकं ये प्रदेशास्ते चतुष्केनापह्रियमाणाश्चतुष्कावशेषा भवन्तीति कृत्वा तत्प्रदेशात्मिकाश्च दिश आगमसंज्ञया कडजुम्मत्ति शब्देनाभिधीयन्ते' (आटी प १३)।

कडणा—१ छत (भ ८।२५७)। २ अट्टिका, वाड़ (भटी पृ ६९१)।

कडतला—लोहे का वह हथियार जो एक ओर से धारवाला और वक्र होता है (दे २।१९)।

कडपल्ल—धान्यशाला—'कडपल्ल त्ति वा तणपल्ल त्ति वा धन्नसालत्ति वा वलय त्ति वा एगट्ठा' (वचू प १४१)।

कडप्प—१ निकर, समूह (वटी पृ ५४, दे २।१३)। २ वस्त्र का एक भाग (वृ)।

कडयडाविअ—कड-कड आवाज से चबा जाना (कु पृ ६८)।

कडला—पैर का आभूषण (जवूटी प १०६)।

कडवय—समूह (वटी पृ ५४)।

कडवल्ल—१ बांस की टोकरी (निचू ४ पृ १६२)। २ सूखे मांस से बना भोज्य—'मसा सुक्खाविति सुक्खस्स वा कडवल्ला कता' (आचू पृ ३३५)।

कडसक्करा—बांस की शलाका—बहूवे लाहखीलाण य कडसक्कराण य चम्म-पट्टाण य (विपा १।६।२०)।

कडसी—श्मशान (दे २।६)।

कडार—नालिकेर, नारियल (दे २।१०)।

कडाली—घोड़े के मुख को बांधने का उपकरण विशेष (अनु ३।५२)।

कडाहक—कड़ाही (अवि पृ २१४)।

कडाहपल्हत्थिअ—दोनों पार्श्वों को बदलना, दोनों पार्श्वों का अपवर्तन (दे २।२५)।

कडिक—खिड़की (अवि पृ २६)।

कडिखभ—१ कमर पर रखा हुआ हाथ (दे २।१७)। २ कमर पर किया हुआ आघात—'कडिखभो कटीयस्ता हस्त । कट्याघात इति केचित (व)।

कडिण—तृण विशेष (सू २।२।४)।

कडिल्ल—१ मांड आदि पकाने का बर्तन (उपा २।२१)। २ तवा—'तत्तकडिल्ल व जह विंदु (पव १८७४)। ३ गहन (बृभा ५५६६, दे २।५२)। ४ कटीवस्त्र (जीविप पृ ४३, दे २।५२)। ५ द्वारपाल। ६ शत्रु। ७ आशीर्वाद। ८ जंगल। ६ निश्छिद्र (दे २।५२)। १० गहन प्रदेश (व्यभा ४।१ टी प ६०)।

कडिल्लय—भाड़ का बड़ा पात्र (पिटी प १५८)।

कडिल्लग—अटवी जंगल—'सो अभिमुहंति सुद्धो गसारकडिल्लगम्मि अप्पाण (पव २३७८)।

कडिल्लय—कटि-वस्त्र–'अहवा रज्जसि पावे एय पि कडिल्लय णत्यि' (कु पृ ८१)।

कडिल्हक—लोहे का वडा पात्र (प्रसाटी प १५३)।

कडुआल—१ घण्टा। २ छोटी मछली (दे २।५७)।

कडुइया—वल्ली-विशेप (प्रज्ञा १।४०)।

कडुच्छ—चम्मच (भ ५।१८६)।

कडुच्छय—चम्मच (भ ११।५६)।

कडुच्छिका—कर्छी डोई (ओटी प १६६)।

कडुच्छुग—कर्छी (जवू १।४०)।

कडुच्छुत—चम्मच–'कडुच्छुते घय ताविज्जति' (निचू २ पृ २५१)।

कडुच्छुय—चम्मच (अनुद्वा ३६२)।

कडुभ—कूव, पीठ का उभरा हुआ भाग (निचू २ पृ १६१)।

कडुभंड—मसाला–'वेसण कडुभड जीरय' (निचू २ पृ २५)।

कडुमाय—पशु-विशेप (अवि पृ ६२)।

कडुय—अपराधी को दड का निर्देश देनेवाला–'कडुओ उ दडकारी' (वृभा ३५७६)।

कडुयाल—छोटी मछली (पा ३०१)।

कडुयालय—छोटी मछली (कु पृ १६१)।

कडुहुंड—भोजन मे प्रयुक्त सामग्री-विशेप– तत्थ भोयणे उवउज्जति कडुहुडाइ' (आवचू १ पृ २८०)।

कडूकीका—वृक्ष-विशेप (अवि पृ ७०)।

कडेवर—१ शरीर (भटी पृ १२६०)। २ निश्चेतन देह, शव। ३ द्वीन्द्रिय आदि जीव (भटी पृ १३७१)।

कड्ढण—तृण-विशेप (निचू २ पृ ४३०)।

कढ—गोत्र-विशेप (अवि पृ १५०)।

कढिआ—कढी–'तक्कोल्लणसूवकजिककढियाई' (पिनि ६२४, दे २।६७)।

कढिण—तृण-विशेप (आवचू २ पृ १२७)।

कढिणग—तृण-विशेप (प्र ८।१०)।

कढिय—कढी, खाद्य पदार्थ विशेप (जीभा ३६४)।

कणइअ—१ आर्द्र, गीला। २ किया हुआ। ३ चित्रित। ४ कण-धान्य से आकीर्ण (दे २।५७)।